इस्लाही ख़ुतबात

5

जस्टिस मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

इस्लाही ख़ुतबात

(6)

जस्टिस मौलाना मुफ़्ती

मुहम्मद तकी साहिब उस्मानी

अनुवादक

मुहम्मद इमरान कासमी एम०ए० (अलीग)

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो प्रा० लि०

422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट, जामा मस्जिद देहली 6

फोन आफ़िस, 3289786,3289159, आवास, 3262486

☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆

नाम किताब	इस्लाही खुतबात जिल्द (5)
ख़िताब	मौलाना मुहम्मद तक़ी उस्मानी
अनुवादक	मुहम्मद इमरान क़ासमी
संयोजक	मुहम्मद नासिर ख़ान
तायदाद	2100
प्रकाशन वर्ष	सितम्बर 2001
कम्पोज़िंग	इमरान कम्प्यूटर्स मुज़फ्फर नगर (0131-442408)

>>>>>>>>>>>>

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो प्रा० लि०

422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट, जामा मस्जिद देहली 6

फोन आफिस, 3289786,3289159, आवास, 3262486

मुख़्तसर फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

तफ़सीली फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

(41) हसद
एक समाजी नासूर

(44) आंखों की हिफ़ाज़त कीजिए

(45) खाने के आदाब

(46) पीने के आदाब

(47) दावत के आदाब

(48) लिबास के शरई उसूल

بسم الله الرحمن الرحيم

तवाज़ो

तरक़्क़ी और बुलन्दी का ज़रिया

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰٓى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا۔ اَمَّا بَعْدُ:

فقد قال رسول الله صلى الله عليه وسلم: "من تواضع لله رفعه الله"

(ترمذی شریف)

इस वक़्त मैंने आप हज़रात के सामने तवाज़ो के बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का एक इर्शाद पढ़ा, जिसके मायने ये हैं कि जो शख़्स अल्लाह तआला के लिए तवाज़ो इख़्तियार करता है, अल्लाह तआला उसको बुलन्दी से नवाज़ते हैं। इस वक़्त इस इर्शाद की थोड़ी सी तश्रीह (खुलासा) करनी है, जिसमें तवाज़ो की अहमियत, उसकी हक़ीक़त और उस पर अमल करने का तरीक़ा बयान करना मक़्सूद है, अल्लाह तअला अपनी रहमत से सही बयान करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

तवाज़ो की अहमियत

जहां तक तवाज़ो की "अहमियत" का ताल्लुक़ है, तो यह तवाज़ो इतनी अहम चीज़ है कि अगर इन्सान के अन्दर तवाज़ो न हो, तो यही इन्सान फ़िरऔन और नमरूद बन जाता है, इसलिये कि जब दिल में तवाज़ो की सिफ़त नहीं होगी, तो फिर तकब्बुर होगा,

दिल में अपनी बड़ाई होगी, और यह तकब्बुर और बड़ाई तमाम अन्दरूनी बीमारियों की जड़ है।

सब से पहली ना फ़रमानी की बुनियाद

देखिये इस कायनात में सबसे पहली ना फ़रमानी इब्लीस (शैतान) ने की, उसने ना फ़रमानी का बीज बोया, उस से पहले ना फ़रमानी का कोई तसव्वुर नहीं था, जब अल्लाह तआ़ला ने हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम को पैदा फ़रमाया, और तमाम फ़रिश्तों को उनके आगे सज्दा करने का हुक्म दिया तो इब्लीस ने सज्दा करने से इन्कार कर दिया और कहा किः

أَنَا خَيْرٌ مِّنْهُ خَلَقْتَنِي مِن نَّارٍ وَخَلَقْتَهُ مِن طِينٍ (سورة ص:٧٦)

यानी मैं आदम से अच्छा हूं, इसलिये कि मुझे आग से पैदा किया गया है, और आग मिट्टी से अफ़ज़ल है, इसलिये मैं उस से अफ़ज़ल हूं, मैं इसको सज्दा क्यों करूं? यह सब से पहली ना फ़रमानी थी, जो इस कायनात में ज़ाहिर हुई, इस ना फ़रमानी की बुनियाद तकब्बुर और बड़ाई थी, कि मैं इस आदम से अफ़ज़ल हूं, मैं इस से बेहतर हूं। बस इस तकब्बुर के नतीजे में अल्लाह तबारक व तआ़ला ने उसको रांदा–ए–दरगाह (अपने दरबार से धुतकारा हुआ) कर दिया। इस से मालूम हुआ कि सारी ना फ़रमानियों और बुराइयों की जड़ "तकब्बुर" है। जब दिल में तकब्बुर होगा तो दूसरी बुराइयां भी उसमें जमा होंगी।

अल्लाह के हुक्म के आगे अ़क्ल मत चलाओ

इस तकब्बुर की वजह यह हुई कि शैतान ने अपनी अ़क्ल पर नाज़ किया। उसने सोचा कि मैं एक ऐसी अ़क्ली दलील पेश कर रहा हूं जिसका तोड़ मुश्किल हो, वह यह कि अगर आग और मिट्टी का मुक़ाबला किया जाए तो आग मिट्टी से अफ़ज़ल है, उसने अल्लाह तआ़ला के हुक्म के आगे अपनी अ़क्ल चलाई, जिसका नतीजा यह हुआ कि बारगाहे खुदावन्दी से मरदूद हुआ। अ़ल्लामा इक़बाल मरहूम

शेर में कभी कभी बड़ी हकीमाना बातें कहते हैं। चुनांचे एक शेर में उन्हों ने इसी वाक़िए की तरफ़ इस तरह इशारा किया कि:

सुबहे अज़ल यह मुझ से कहा जिब्रईल ने
जो अक़्ल का ग़ुलाम हो, वह दिल न कर कुबूल

इसलिये कि जो अक़्ल का ग़ुलाम बन गया, उसने अल्लाह तआ़ला की बन्दगी का तो इन्कार कर दिया, उस शैतान ने यह नहीं सोचा कि जब मामला अल्लाह तआ़ला के साथ है, उसी ने तुझे पैदा किया, और उसी ने आदम को पैदा किया, वह कायनात का पैदा करने वाला भी है, वह यह कह रहा है कि तू आदम को सज्दा कर, तो अब तेरा काम तो यह था कि तू उसके हुक्म के आगे सर झुका देता, मगर तुने उसके हुक्म की ना फ़रमानी की, इसलिये मरदूद हुआ।

तमाम गुनाहों की जड़ "तकब्बुर"

बहर हाल, तकब्बुर सारे गुनाहों की जड़ है, तकब्बुर से ग़ुस्सा पैदा होता है, तकब्बुर से बुग्ज़ पैदा होता है, तकब्बुर की बुनियाद पर दूसरों का दिल दुखाना होता है, तकब्बुर से दूसरों की ग़ीबत होती है, जब तक दिल में तवाज़ो न होगी, उस वक़्त तक इन बुराइयों से नजात न होगी। इसलिये एक मोमिन के लिए तवाज़ो को हासिल करना बहुत ज़रूरी है।

तवाज़ो की हक़ीक़त

"तवाज़ो" अ़र्बी ज़बान का लफ़्ज़ है। इसके मायने हैं "अपने आप को कम दर्जा समझना" अपने आपको कम दर्जा वाला कहना तवाज़ो नहीं, जैसा कि आज कल लोग तवाज़ो इसको समझते हैं कि अपने लिए तवाज़ो और इन्किसारी के अल्फ़ाज़ इस्तेमाल कर लिए, जैसे अपने आप को "अह्क़र" कह दिया "नाचीज़" नाकारा" कह दिया। या ख़ताकार" गुनाहगार" कह दिया, और यह समझते हैं कि इन अल्फ़ाज़ के इस्तेमाल के ज़रिये तवाज़ो हासिल हो गयी, हालांकि

अपने आप को कम्तर कहना तवाज़ो नहीं, बल्कि कम्तर समझना तवाज़ो है। जैसे यह समझे की मेरी कोई हैसियत, कोई हक़ीक़त नहीं, अगर मैं कोई अच्छा काम कर रहा हूं तो यह सिर्फ़ अल्लाह तआला की तौफ़ीक़ है, उसकी इनायत और मेहरबानी है, इसमें मेरा कोई कमाल नहीं। यह है तवाज़ो की हक़ीक़त। जब यह हक़ीक़त हासिल हो जाए तो उसके बाद ज़बान से चाहे अपने आप को "हक़ीर" और "नाचीज़" "नाकारा" कहो या न कहो, इस से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता, जो शख़्स तवाज़ो की इस हक़ीक़त को हासिल करता है, अल्लाह तआला उसको बुलन्द मक़ाम अता फ़रमाते हैं।

बुज़ुर्गों की तवाज़ो

जिन बुज़ुर्गों की बातें सुन और पढ़ कर हम लोग दीन सीखते हैं, उनके हालात पढ़ने से मालूम होगा कि वे लोग अपने आप को इतना बेहक़ीक़त समझते हैं जिसकी हद व हिसाब नहीं। चुनांचे हज़रत हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अली साहिब थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि का यह इर्शाद मैंने अपने बुज़ुर्गों से सुना, वह फ़रमाते थे कि:

"मेरी हालत यह है कि मैं हर मुसलमान को अपने आप से फ़िल्हाल, और हर काफ़िर को एहतिमाल के तौर पर अपने आप से अफ़ज़ल समझता हूं "मुसलमान को तो इसलिये अफ़ज़ल समझता हूं कि वह मुसलमान और ईमान वाला है, और काफ़िर को इस वजह से कि हो सकता है कि अल्लाह तआला उसको कभी ईमान की तौफ़ीक़ दे दे, और यह मुझ से आगे बढ़ जाए"।

एक बार हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि के ख़लीफ़ा हज़रत मौलाना ख़ैर मुहम्मद साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि ने हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद हसन साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि से फ़रमाया कि जब मैं हज़रत की मज्लिस में बैठता हुं तो मुझे ऐसा लगता है कि जितने लोग मज्लिस में बैठे हैं, सब मुझ से अफ़ज़ल हैं, और मैं ही सब से निकम्मा और नाकारा हूं, हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद हसन साहिब

रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने सुन कर फ़रमाया कि मेरी भी यही हालत होती है, फिर दोनों ने मश्विरा किया कि हम हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि के सामने अपनी यह हालत ज़िक्र करते हैं, मालूम नहीं कि यह हालत अच्छी है या बुरी। चुनांचे ये दोनों हज़रात हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अपनी हालत बयान की कि हज़रत आपकी मज्लिस में हम दोनों की यह हालत होती है। हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने जवाब में फ़रमाया कि कुछ फ़िक्र की बात नहीं, इसलिये कि तुम दोनों अपनी यह हालत बयान कर रहे हो, हालांकि मैं तुम से सच कहता हूं कि जब मैं भी मज्लिस में बैठता हूं तो मेरी भी यही हालत होती है, कि इस मज्लिस में सब से ज़्यादा निकम्मा और नाकारा मैं ही हूं। ये सब मुझ से अफ़्ज़ल हैं।

यह है तवाज़ो की हक़ीक़त, अरे जब तवाज़ो की यह हक़ीक़त ग़ालिब होती है तो फिर इन्सान तो इन्सान, आदमी अपने आप को जानवरों से भी कम्तर समझने लगता है।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तवाज़ो

एक हदीस में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि जब कोई शख़्स हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मुलाक़ात के वक़्त मुसाफ़ा करता तो आप अपना हाथ उस वक़्त तक नहीं खींचते थे जब तक दूसरा शख़्स अपना हाथ न खींच ले, और आप अपना चेहरा उस वक़्त तक नहीं फेरते थे जब तक मुलाक़ात करने वाला शख़्स ख़ुद अपना चेहरा न फेर ले, जब आप मुसल्सल मज्लिस में बैठते तो अपना घुटना भी दूसरों से आगे नहीं करते थे, यानी अलग और नुमायां शान से नहीं बैठते थे। (तिर्मीज़ी शरीफ़)

कुछ रिवायतों में आता है कि शुरू शुरू में जिस तरह और लोग मज्लिस में आ कर बैठ जाते, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम भी उनके साथ मिल-जुल कर बैठ जाते थे, न तो बैठने में कोई

इम्तियाज़ी (नुमायां और अलग) शान होती थी, न ही चलने में। लेकिन बाद में यह हुआ कि जब कोई अजनबी शख़्स मज्लिस में आता तो उसको आप को पहचानने में तक्लीफ़ होती, उसको पता न चलता कि इनमें हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम कौन हैं? और कभी कभी जब मजमा ज़्यादा हो जाता तो पीछे वालों को आपकी ज़ियारत करनी मश्किल होती। और सब लोगों की यह ख़्वाहिश होती कि हम हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ियारत करें, उस वक़्त सहाबा-ए-किराम ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से दरख़्वास्त की कि या रसूलल्लाह! आप अपने लिए कोई ऊंची जगह बनवा लें और उस पर बैठ कर बात कर लिया करें, ताकि आने वालों को पता भी चल जाए, और सब लोग आप की ज़ियारत भी कर लिया करें और बात सुनने में भी सहूलत और आसानी हो। उस वक़्त आपने इजाज़त दे दी, और आपके किए एक चौकी सी बना दी गयी, जिस पर आप तश्रीफ़ फ़रमा कर बातें किया करते थे।

हुज़ूरे पाक का चलना

इस से मालूम हुआ कि असल यह है कि इन्सान अपनी कोई इम्तियाज़ी (नुमायां और अलग) शान और इम्तियाज़ी मक़ाम न बनाए, बल्कि आम आदमियों की तरह रहे, आम लोगों की तरह चले, अलबत्ता जहां ज़रूरत हो वहां उस ज़रूरत के मुताबिक़ अमल करने की गुंजाइश है, चुनांचे एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चलने की यह सिफ़त बयान फ़रमाई गयी कि:

"ما راى رسول الله صلى الله عليه وسلم يأكل متكئا قط، ولا يطأ عقبه رجلان" (ابوداؤد شريف)

यानी कभी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को टेक लगा कर खाते हुए नहीं देखा गया और न कभी यह देखा गया कि आपके पीछे पीछे लोग चल रहे हों। इसलिये यह मुनासिब नहीं कि

इन्सान ख़ुद आगे आगे चले और उसके मोतक़िद उसके पीछे उसकी एड़ियों के साथ चलें। इसलिये कि उस वक़्त इन्सान का नफ़्स और शैतान उसको बहकाता है कि देख तेरे अन्दर कोई ख़ूबी और भलाई है, तब ही तो इतना बड़ा मजमा तेरे पीछे पीछे चल रहा है। इसलिये जहां तक हो सके इस से परहेज़ करना चाहिए कि लोग उसके पीछे चलें। जब आदमी चले तो या तो अकेला चले, या लोगों के साथ मिल कर चले, आगे आगे न चले।

हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि का ऐलान

चुनांचे हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि के मामूलात में यह बात लिखी है कि आपने यह आ़म ऐलान कर रखा था कि कोई शख़्स मेरे पीछे न चले, मेरे साथ न चले, जब मैं तन्हा कहीं जा रहा हूं तो मुझे तन्हा जाने दिया करो, हज़रत फ़रमाते कि यह मुक़्तदा (जिसकी पैरवी की जाए) की शान बनाना कि जब आदमी चले तो दो आदमी उसके दायें तरफ़ और दो आदमी उसके बायें तरफ़ चलें, मैं इसको बिल्कुल पसन्द नहीं करता। जिस तरह एक आ़म इन्सान चलता है, उसी तरह चलना चाहिए। एक बार आपने यह ऐलान फ़रमाया कि अगर मैं अपने हाथ में कोई सामान उठा कर जा रहा हूं तो कोई शख़्स आकर मेरे हाथ से सामान न ले, मुझे इसी तरह जाने दे, ताकि आदमी की अपनी कोई इम्तियाज़ी शान न हो, और जिस तरह एक आ़म आदमी रहता है, उस तरीक़े से रहे।

शिकस्तगी और मिटने की कैफ़ियत पैदा करो

हमारे हज़रत डाक्टर अ़ब्दुल हई साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि यहां तो मामला फ़नाइय्यत और बन्दगी का है। शिकस्तगी और आ़जज़ी का है। इसलिये अपने आपको जितना मिटाओगे और जितना अपनी बन्दगी का मुज़ाहरा करोगे, उतना ही इन्शा अल्लाह, अल्लाह तआ़ला के यहां मक़बूल होंगे और यह शेर

पढ़ा करते थे कि:

फ़हमे ख़ातिर तेज़ कर्दन नेस्त राह
जुज़ शिकस्ता मी नगीरद फ़ज़्ले शाह

यानी अल्लाह तआला तक पहुंचने का यह रास्ता नहीं है कि अपने आपको ज़्यादा अक़्ल मन्द और होशियार जताए बल्कि अल्लाह तआला का फ़ज़्ल तो उसी शख़्स पर होता है जो अल्लाह तआला के सामने शिकस्तगी और बन्दगी का मुज़ाहरा करता है, अरे कहां की शान और कहां की बड़ाई जताते हो, शान और बड़ाई और ख़ुशी का मौक़ा तो वह है जब हमारी रूह निकल रही हो, उस वक़्त अल्लाह तआला यह फ़रमा दें कि:

يَاأَيَّتُهَاالنَّفْسُ الْمُطْمَئِنَّةُ٥ ارْجِعِيْٓ اِلٰى رَبِّكِ رَاضِيَةً مَّرْضِيَّةً فَادْخُلِيْ فِيْ عِبَادِيْ وَادْخُلِيْ جَنَّتِيْ۔ (سورة الفجر:٢٧)

हुज़ूरे पाक सल्ल० का आजिज़ी का इज़्हार करना

इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हर मामले में वह तरीक़ा पसन्द फ़रमते, जिस में अ़ब्दियत हो, बन्दगी हो, शिकस्तगी का इज़्हार हो, चुनांचे जब अल्लाह तआला की तरफ़ से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से यह पूछा गया कि अगर आप चाहें तो आपके लिए यह उहद पहाड़ सोने का बना दिया जाए, ताकि आपकी मआशी (आर्थिक) तक्लीफ़ दूर हो जाए? तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि नहीं, बल्कि मुझे तो यह पसन्द है कि:

"اجوع یو ما و اشبع یو ما"

यानी एक दिन खाऊं और एक दिन भूखा रहूं। जिस दिन खाऊं तो आपका शुक्र अदा करूं। और जिस दिन भूखा रहूं उस दिन सब्र करूं और आप से मांग कर खाऊं, एक हदीस में आता है कि:

"ماخير رسول الله صلى الله عليه وسلم بين امرين قط الا اخذ ايسرهما"

(بخاری شریف)

यानी जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को किसी मामले में दो रास्तों का इख़्तियार दिया जाता, या तो यह रास्ता इख़्यिार कर लें या यह रास्ता इख़्तियार कर लें, तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हमेशा उनमें से आसान रास्ते को इख़्तियार फ़रमाते। इसलिये कि मुश्किल रास्ता इख़्तियार करने में अपनी बहादुरी का दावा है कि मैं बड़ा बहादुर हूं कि यह मुश्किल काम अन्जाम दे लूंगा और आसान रास्ता इख़्तियार करने में आजज़ी, शिकस्तगी और बन्दगी का इज़्हार है कि मैं तो बहुत कमज़ोर हूं और इस कमज़ोरी की वजह से आसान रास्ता इख़्तियार करता हूं। इसलिये जो कुछ किसी को हासिल हुआ है वह बन्दगी और मिटने ही में हासिल हुआ है, और फ़ना होने के मायने ये हैं कि अल्लाह की मर्ज़ी और उनकी चाहत के आगे अपने वजूद को इन्सान फ़ना कर दे, और जब फ़ना कर दिया तो समझो कि सब कुछ उस फ़ना होने में हासिल हो गया।

अभी ये चावल कच्चे हैं

हमारे हज़रत डाक्टर अ़ब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि की ज़बान पर अल्लाह तआ़ला बड़े अ़जीब व ग़रीब मआ़रिफ़ जारी फ़रमाया करते थे। एक दिन फ़रमाने लगे कि जब पुलाव पकाया जाता है तो शुरू शुरू में उन चावलों के अन्दर जोश होता है, उनमें से आवाज़ आती रहती है और वे हर्कत करते रहते हैं, और उन चावलों का जोश मारना, हर्कत करना इस बात की निशानी है कि चावल अभी कच्चे हैं, पके नहीं हैं। वे अभी खाने के लायक़ नहीं। और उनमें न ज़ायका है और न ख़ुश्बू, लेकिन जब चावल पकने के बिल्कुल क़रीब हो जाते हैं, उस वक़्त उनका दम निकाला जाता है और दम निकालते वक़्त न तो उन चावलों में जोश होता है, न हर्कत और आवाज़ होती है। उस वक़्त वे चावल बिल्कुल ख़ामोश पड़े रहते हैं, लेकिन जैसे ही उनका दम निकाला, उन चावलों में से ख़ुश्बू फूट

पड़ी। और अब उनमें ज़ायका भी पैदा हो गया और खाने के काबिल हो गए।

सबा जो मिलना तो कहना मेरे यूसुफ़ से
फूट निकली तेरे पैराहन से बू तेरी

इसी तरह जब तक इन्सान के अन्दर ये दावे होते हैं कि मैं ऐसा हूं, मैं बड़ा अल्लामा हूं, मैं बड़ा मुत्तक़ी हूं, उस वक़्त तक उस इन्सान में न ख़ुश्बू है और न उसके अन्दर ज़ायक़ा है। वह तो कच्चा चावल है। और जिस दिन उसने अल्लाह तआला के आगे अपने इन दावों को फ़ना करके यह कह दिया कि मेरी तो कोई हक़ीक़त नहीं, मैं कुछ नहीं, उस दिन उसकी ख़ुश्बू फूट पड़ती है और फिर अल्लाह तआला उसका फ़ैज़ फैलाते हैं।

ऐसे मौक़े पर हमारे डा० साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि क्या ख़ूबसूरत शेर पढ़ा करते थे कि:

मैं आरिफ़ी आवारा सिहरा फ़ना हूं
एक आ़लमे बेनाम व निशां मेरे लिए है

यानी अल्लाह तआ़ला ने मुझे फ़नाईयत के मैदान में आवारगी अ़ता फ़रमाई है और मुझे फ़नाईयत का दर्स अ़ता फ़रमाया। अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से हमें भी अ़ता फ़रमा दे, आमीन।

हज़रत सैयद सुलैमान नदवी रह० और तवाज़ो

हज़रत सैयद सुलैमान नदवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि जिनके इल्म व फ़ज़्ल की शोहरत थी, और डंका बज रहा थ, वह ख़ुद अपना वाकिआ़ सुनाते हैं कि जब मैंने "सीरतुन्नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम" छः जिल्दों में मुकम्मल कर ली, तो बार बार दिल में यह खटक होती कि जिस ज़ाते ग्रामी की यह सीरत लिखी है उनकी सीरत का कोई अ़क्स या कोई झलक मेरी ज़िन्दगी में भी आई या नहीं? अगर नहीं आई तो किस तरह आए? इस मक़सद के लिए किसी अल्लाह वाले की तलाश हुई और यह सुन रखा था कि हज़रत

मौलाना अशरफ़ अली साहिब थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि थाना भवन की ख़ानक़ाह में मुक़ीम हैं और अल्लाह तआ़ला ने उनका फ़ैज़ फैलाया है। चुनांचे एक बार थाना भवन जाने का इरादा कर लिया, सफ़र करके थाना भवन पहुंच गए और हज़रते वाला से इस्लाही ताल्लुक़ क़ायम किया और कई दिन वहां ठहरे। जब वापस रुख़्सत होने लगे तो हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि से अ़र्ज़ किया कि हज़रतः कोई नसीहत फ़रमा दीजिए, हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि उस वक़्त मुझे यह ख़्याल आया कि मैं इतने बड़े अ़ल्लामा को क्या नसीहत करूं? इल्म व फ़ज़्ल के एतिबार से पूरी दुनिया में इनकी शोहरत है, चुनांचे मैंने अल्लाह तआ़ला से दुआ़ की, या अल्लाह! मेरे दिल में ऐसी बात डाल दीजिए जो इनके हक़ में भी फ़ायदे मन्द हो और मेरे हक़ में भी फ़ायादे मन्द हो। उसके बाद हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने हज़रत सैयद सुलेमान नदवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि से मुख़ातब होकर फ़रमायाः

"भाई हमारे तरीक़ में तो अव्वल व आख़िर अपने आपको मिटा देना है"।

हज़रत सैयद सुलैमान नदवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने ये अल्फ़ाज़ कहते वक़्त अपना हाथ सीने की तरफ़ लेजा कर नीचे की तरफ़ ऐसा झटका दिया कि मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मेरे दिल पर झटका लग गया।

हमारे हज़रत डा० साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि इस वाक़िए के बाद हज़रत सैयद सुलैमान नदवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने अपने आपको ऐसा मिटाया कि इसकी नज़ीर मिलनी मुश्किल है। एक दिन देखा कि ख़ानक़ाह के बाहर हज़रत सैयद सुलैमान नदवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि मज्लिस में आने जाने वालों के जूते सीधे कर रहे हैं। यह तवाज़ो और फ़नाईयत अल्लाह तआ़ला ने उनके दिल में पैदा कर दी। इसका नतीजा यह हुआ कि उसके बाद ख़ुश्बू फूटी और

अल्लाह तआला ने उनको कहां से कहां पहुंचा दिया।

"अ-न" का बुत दिल से निकाल दो

बहर हाल, जब तक "अ–न" (मैं) का बुत दिल में मौजूद है। उस वक़्त तक यह चावल कच्चा है, अभी जोश मार रहा है और उस वक़्त यह खुश्बूदार बनेगा जब इस "अ–न" को मिटा दिया जायेगा। फ़नाईयत में अल्लाह तआला ने यह ख़ासियत रखी है, "फ़नाईयत" का मतलब यह है कि अपने तौर व तरीक़े और अन्दाज़ में इन्सान तकब्बुर से परहेज़ करे, और आजिज़ी को इख़्तियार करे, और जिस दिन आजज़ी को इख़्तियार करेगा इन्शा अल्लाह उस दिन रास्ता खुल जायेगा, क्योंकी हक़ तक पहुंचने में सब से बड़ी रुकावट "तकब्बुर" होती है। और "तकब्बुर" वाला अपने आपको कितना ही बड़ा समझता रहे और दुनिया वालों को कितना ही ज़लील समझता रहे, लेकिन आख़िर कार अल्लाह तआला तवाज़ो वाले ही को इज़्ज़त अता फ़रमाते हैं और तकब्बुर वाले को ज़लील करते हैं।

तकब्बुर करने वाले की मिसाल

अर्बी ज़बान में किसी ने बड़ी हकीमाना बात कही है, वह यह कि मुतकब्बिर (तकब्बुर करने वाले) की मिसाल उस शख़्स जैसी है जो पहाड़ की चोटी पर खड़ा हो, अब वह पहाड़ के ऊपर से नीचे चलने फिरने वालों को छोटा समझता है, इसलिये कि ऊपर से उसको वे लोग छोटे नज़र आ रहे हैं, और जो लोग नीचे से उसको पहाड़ पर देखने वालो हैं वे उसको छोटा समझते हैं, बिल्कुल इसी तरह सारी दुनिया मुतकब्बिर को हक़ीर (कम्तर) समझती है, और वह दुनिया वालों को हक़ीर समझता है। लेकिन जिस शख़्स ने अल्लाह तआला के आगे अपने आप को फ़ना कर दिया, अल्लाह तआला उसको इज़्ज़त अता फ़रमाते हैं। अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल से यह चीज़ हमारे अन्दर भी पैदा फ़रमा दे, आमीन।

हज़रत डा० अ़ब्दुल हई साहिब रह० और तवाज़ो

हमारे हज़रत डा० अ़ब्दुल हई रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि मैं अपने घर में कभी कभी नंगे पैर भी चलता हूं, इसलिये कि रिवायत में पढ़ लिया था कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम किसी मौके पर नंगे पांव भी चले थे। मैं भी इसलिये चल रहा हूं ताकि हुज़ूरे पाक की सुन्नत पर अ़मल हो जाए। और फ़रमाया करते थे कि मैं नंगे पांव चलते वक़्त अपने आप से मुख़ातिब होकर कहता हूं कि देख, तेरी असल हकीक़त तो यह है कि न पांव में जूता, न सर पर टोपी और न जिस्म पर लिबास, और तू अन्जाम कार मिट्टी में मिल जाने वाला है।

हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि और तवाज़ो

हज़रत डा० अ़ब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने यह वाकिआ सुनाया कि एक बार मैं राबसन रोड के मतब (दवाख़ाने) में बैठा हुआ था, उस वक्त हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि सामने से इस हालत में गुज़रे कि उनकी दायीं तरफ कोई आदमी न था, और न बायीं तरफ़, बस अकेले जा रहे थे और हाथ में कोई बर्तन उठाया हुआ था, हज़रत डा० साहिब फ़रमाते हैं कि उस वक्त कुछ लोग मेरे पास बैठ हुए थे, मैंने उनसे पूछा, यह साहिब जो जा रहे हैं, आप इनको जानते हैं कि यह कौन साहिब हैं? फिर ख़ुद ही जवाब दिया कि क्या तुम यह यकीन कर सकते हो कि यह पाकिस्तान का "मुफ़्ती–ए–आज़म" है? जो हाथ में पतीली लिए जा रहा है। और उनके लिबास व पोशाक से, अन्दाज़ व अदा से, चाल व ढाल से कोई पता भी नहीं लगा सकता कि यह इतन बड़े अ़ल्लामा हैं।

हज़रत मुफ़्ती अज़ीज़ुर्रहमान साहिब रह० और तवाज़ो

हज़रत मुफ़्ती अज़ीज़ुर्रहमान साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि जो मेरे वालिद माजिद के उस्ताज़ और दारुल उलूम देवबन्द के मुफ़्ती-ए-आज़म थे। उनका वाकिआ मैंने अपने वालिद माजिद रहमतुल्लाहि अलैहि से सुना कि आपके घर के आस पास कुछ बेवाओं के मकानात थे। आपका रोज़ का मामूल था कि जब आप अपने घर से दारुल उलूम देवबन्द जाने के लिए निकलते तो पहले उन बेवाओं के मकानात पर जाते, और उनसे पूछते कि बीबी, बाज़ार से कुछ सौदा मंगाना है तो बता दो, मैं ला दूंगा, अब वह बेवा उनसे कहती कि हां भाई, बाज़ार से इतना धनिया, इतनी प्याज़, और इतने आलू वग़ैरह ला दो। इसी तरह दूसरी के पास, फिर तीसरी के पास मालूम करते, और फिर बाज़ार जाकर सौदा लाकर उनको पहुंचा देते। कभी कभी यह होता कि जब सौदा लाकर देते तो कोई बीबी कहती, मौलवी साहिब! आप ग़लत सौदा ले आए, मैंने तो फ़लां चीज़ कही थी, आप फ़लां चीज़ ले आए, मैंने इतनी मंगाई थी, आप इतनी ले आए। आप फ़रमाते! बीबी, कोई बात नहीं, मैं दोबारा बाज़ार से ला देता हूं। चुनांचे दोबारा बाज़ार जाकर सौदा लाकर उनको देते। उसके बाद फ़तावा लिखने के लिए दारुल उलूम देवबन्द तश्रीफ़ ले जाते। मेरे वालिद साहिब फ़रमाया करते थे कि यह शख़्स जो बेवाओं का सौदा सुलफ़ लेने के लिए बाज़ार में फिर रहा है, यह " हिन्दुस्तान का सब से बड़ा मुफ़्ती" है। कोई शख़्स देख कर यह नहीं बता सकता कि यह इल्म व फ़ज़्ल का पहाड़ है। लेकिन तवाज़ो का नतीजा यह निकला कि आज उनके फ़तावा पर मुश्तमिल बारह जिल्दें छप चुकी हैं और अभी तक काम जारी है। और सारी दुनिया उनसे फ़ैज़ उठा रही है। वही बात है कि:

फूट निकली तेरे पैराहन से बू तेरी

वह ख़ुश्बू अल्लाह तआला ने अता फ़रमा दी। आपका इन्तिकाल

भी इस हालत में हुआ कि आपके हाथ में एक फ़तवा था, और फ़तवा लिखते लिखते आपकी रूह कब्ज़ हो गयी।

हज़रत मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहिब नानौतवी रहमतुल्लाहि अलैहि और तवाज़ो

हज़रत मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहिब नानौतवी रहमतुल्लाहि अलैहि जो दारुल उलूम देवबन्द के बानी (संस्थापक) हैं। उनके बारे में लिखा है कि हर वक़्त एक तहबन्द पहने रहते थे और मामूली सा कुर्ता होता था। कोई शख़्स देख कर यह पहचान ही नहीं सकता था कि यह इतना बड़ा अल्लामा है, जब मुनाज़रा करने पर आ जाएं तो बड़ों बड़ों के दांत खट्टे कर दें। लेकिन सादगी और तवाज़ो का यह हाल था कि तहबन्द पहने हुए मस्जिद में झाडू दे रहे हैं।

चूंकि आपने अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ जिहाद किया तो अंग्रेज़ों की तरफ़ से आपकी गिरफ़्तारी का वारन्ट जारी हो गया। चुनांचे एक आदमी उनको गिरफ़्तार करने के लिए आया। किसी ने बता दिया कि वह छत्ते की मस्जिद में रहते हैं। जब वह शख़्स मस्जिद में पहुंचा तो उसने देखा कि एक आदमी बनियान और लुंगी पहने हुए मस्जिद में झाडू दे रहा है, अब चूंकि वारन्ट के अन्दर यह लिखा था कि "मौलाना मुहम्मद क़ासिम को गिरफ़्तार किया जाए" इसलिये जो शख़्स गिरफ़्तार करने आया था वह यह समझा कि यह जुब्बे कुब्बे के अन्दर मलबूस बड़े अल्लामा होंगे, जिन्हों ने इतनी बड़ी तहरीक की अगुवाई की है, उसके ख़्याल में भी यह बात नहीं आई कि यह साहिब जो मस्जिद में झाडू दे रहे हैं, यही मौलाना मुहम्मद क़ासिम हैं, बल्कि वह समझा कि यह शख़्स मस्जिद का ख़ादिम है। चुनांचे उस शख़्स ने पूछा कि मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहिब कहां हैं? हज़रत मौलाना को मालूम हो चुका था कि मेरे ख़िलाफ़ वारन्ट निकला हुआ है इसलिये छुपाना भी ज़रूरी है और झूठ भी नहीं बोलाना है, इसलिये

आप जिस जगह खड़े थे वहां से एक क़दम पीछे हट गये फिर जवाब दिया कि अभी थोड़ी देर पहले तो यहां थे। चुनांचे वह शख़्स यही समझा कि थोड़ी देर पहले तो मस्जिद में थे, लेकिन अब मौजूद नहीं हैं, चुनांचे वह शख़्स तलाश करता हुआ वापस चला गया।

दो हर्फ़ इल्म

और हज़रत मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहिब नानौतवी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि अगर दो हर्फ़ इल्म की तोहमत मुहम्मद क़ासिम के नाम पर न होती तो दुनिया को पता भी न चलता कि क़ासिम कहां पैदा हुआ था और कहां मर गया, इस तरह फ़नाईयत (खुद को मिटाने) के साथ ज़िन्दगी गुज़ारी।

हज़रत शैखुल हिन्द रहमतुल्लाहि अलैहि और तवाज़ो

मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि ने हज़रत मौलाना मुहम्मद मुग़ीस साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि से यह वाक़िआ सुना कि शैखुल हिन्द हज़रत मौलाना महमूदुल हसन साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि जिन्हों ने अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ हिन्दुस्तान की आज़ादी के लिए ऐसी तहरीक चलाई जिसने पूरे हिन्दुस्तान, अफ़ग़ानिस्तान और तुर्की सब को हिला कर रख दिया था, आपकी शोहरत पूरे हिन्दुस्तान में थी। चुनांचे अजमेर में एक आलिम थे मौलाना मुईनुद्दीन अजमेरी रहमतुल्लाहि अलैहि, उनको ख़याल आया कि देवबन्द जाकर हज़रत शैखुल हिन्द से मुलाक़ात और ज़ियारत करनी चाहिए, चुनांचे रेल गाड़ी के ज़रिये देवबन्द पहुंचे और वहां एक तांगे वाले से कहा कि मुझे मौलाना शैखुल हिन्द से मुलाक़ात के लिए जाना है। अब सारी दुनिया में तो यह शैखुल हिन्द के नाम से मशहूर थे मगर देवबन्द में "बड़े मौलवी साहिब" के नाम से मशहूर थे। तांगे वाले ने पूछा कि क्या बड़े मौलवी साहिब के पास जाना चाहते हो? उन्हों ने कहा हां बड़े मौलवी साहिब के पास जाना चाहता हूं। चुनांचे तांगे वाले ने हज़रत शैखुल हिन्द के

घर के दरवाज़े पर उतार दिया। गर्मी का ज़माना था, जब उन्हों ने दरवाज़े पर दस्तक दी तो एक आदमी बनियान और लुंगी पहने हुए निकला। उन्हों ने उस से कहा कि मैं हज़रत मौलाना महमूदुल हसन साहिब से मिलने के लिए अजमेर से आया हूं, मेरा नाम मुईनुद्दीन है। उन्हों ने कहा हज़रत तशरीफ़ लायें, अन्दर बैठें, चुनांचे जब बैठ गये तो फिर उन्हों ने कहा कि आप हज़रत मौलाना को इत्तिला कर दें कि मुईनुद्दीन अजमेरी आप से मिलने आया है। उन्हों ने कहा कि हज़रत आप गर्मी में आये हैं तशरीफ़ रखें और फिर पंखा झलना शुरू कर दिया। जब कुछ देर गुज़र गयी तो मौलाना अजमेरी साहिब ने फिर कहा कि मैंने तुम से कहा कि जाकर मौलाना को इत्तिला कर दो कि अजमेर से कोई मिलने के लिए आया है। उन्हों ने कहा कि अच्छा अभी इत्तिला करता हूं। फिर अन्दर तशरीफ़ ले गये और खाना ले आए। मौलाना ने फिर कहा कि भाई मैं यहां खाना खाने नहीं आया, मैं तो मौलाना महमूदुल हसन साहिब से मिलने आया हूं, मुझे उनसे मिलाओ। उन्हों ने फ़रमाया, हज़रत आप खाना खाएं, अभी उनसे मुलाक़ात हो जाती है। चुनांचे खाना खिलाया, पानी पिलाया। यहां तक कि मौलाना मुईनुद्दीन नाराज़ होने लगे कि मैं तुम से बार बार कह रहा हूं मगर तुम जाकर इत्तिला नहीं करते। फिर फ़रमाया कि हज़रत बात यह है कि यहां शैख़ुल हिन्द तो कोई नहीं रहता, अलबत्ता बन्दा महमूद इसी आजिज़ का नाम है। तब जाकर मौलाना मुईनुद्दीन साहिब को पता चला कि शैख़ुल हिन्द कहलाने वाले महमूदुल हसन साहिब यह हैं। जिनसे मैं अब तक नाराज़ होकर गुफ़्तगू करता रहा। यह था हमारे बुज़ुर्गों का अलबेला रंग, अल्लाह उसका कुछ रंग हमें भी अता फ़रमा दे, आमीन।

हज़रत मौलाना मुज़फ़्फ़र हुसैन साहिब रह० और तवाज़ो

हज़रत मौलाना मुज़फ़्फ़र हुसैन साहिब कांधलवी रहमतुल्लाहि अलैहि एक बार किसी जगह से वापस कांधला तशरीफ़ ला रहे थे।

जब रेल गाड़ी से उतरे तो देखा कि एक बूढ़ा आदमी सर पर सामान का बोझ उठाये हुए जा रहा है, और बोझ की वजह से उस से चला नहीं जा रहा है, आपको ख़्याल आया कि यह शख़्स बेचारा तक्लीफ़ में है, चुनांचे आपने उस बूढ़े से कहा कि अगर आप इजाज़त दें तो आपका थोड़ा सा बोझ मैं उठा लूं, उस बूढ़े ने कहा कि आपका बहुत शुक्रिया अगर आप थोड़ा सा उठा लें। चुनांचे मौलाना साहिब उसका सामान सर पर उठा कर शहर की तरफ़ रवाना हो गये, अब चलते चलते रास्ते में बातें शुरू हो गयीं। हज़रते वाला ने पूछा कि आप कहां जा रहे हैं? उसने कहा कि मैं कांधला जा रहा हूं, मौलाना ने पूछा कि क्यों जा रहे हैं? उसने कहा कि सुना है कि वहां एक बड़े मौलवी साहिब रहते हैं उनसे मिलने जा रहा हूं। मौलाना ने पूछा कि वह बड़े मौलवी साहिब कौन हैं? उसने कहा, मौलाना मुज़फ़्फ़र हुसैन साहिब कांधलवी, मैंने सुना है कि वह बहुत बड़े मौलाना हैं, बड़े आलिम हैं, मौलाना ने कहा कि हां वह अ़र्बी तो पढ़ लेते हैं। यहां तक कि कांधला क़रीब आ गया, कांधला में सब लोग मौलाना को जानते थे, जब लोगों ने देखा कि मौलाना मुज़फ़्फ़र हुसैन साहिब सामान उठाये जा रहे हैं तो लोग उनसे सामान लेने के लिए और उनकी ताज़ीम व अदब के लिए उनकी तरफ़ दौड़े। अब उन बड़े मियां की जान निकलने लगी और परेशान हो गये कि मैंने इतना बड़ा बोझ हज़रत मौलाना पर लाद दिया। चुनांचे मौलाना ने उनसे कहा कि भाई इसमें परेशान होने की बात नहीं, मैंने देखा कि तुम तक्लीफ़ में हो, अल्लाह तआ़ला ने मुझे इस ख़िदमत की तौफ़ीक़ दे दी। अल्लाह तआ़ला का शुक्र है।

हज़रत शैख़ुल हिन्द का एक और वाकिआ

हज़रत शैख़ुल हिन्द मौलाना महमूदुल हसन साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि के यहां रमज़ानुल मुबारक में यह मामूल था कि आपके यहां इशा के बाद तरावीह शुरू होती तो फ़जर तक सारी रात तरावीह

होती थी, हर तीसरे या चौथे रोज़ कुरआन शरीफ़ ख़त्म होता था। एक हाफ़िज़ साहिब तरावीह पढ़ाया करते थे, और हज़रते वाला पीछे खड़े होकर सुनते थे, ख़ुद हाफ़िज़ नहीं थे। तरावीह से फ़ारिग़ होने के बाद हाफ़िज़ साहिब वहीं हज़रते वाला के क़रीब थोड़ी देर के लिए सो जाते थे, हाफ़िज़ साहिब फ़रमाते हैं कि एक दिन जब मेरी आंख खुली तो मैंने देखा कि कोई आदमी मेरे पांव दबा रहा है। मैं समझा कि कोई शागिर्द या कोई तालिब इल्म होगा। चुनांचे मैंने देखा नहीं कि कौन दबा रहा है। काफ़ी देर गुज़रने के बाद मैंने जो मुड़ कर देखा तो हज़रत शैख़ुल हिन्द मौलाना महमूदुल हसन साहिब मेरे पांव दबा रहे थे, मैं एक दम से उठ गया और कहा कि हज़रत, यह आपने क्या ग़ज़ब कर दिया। हज़रत ने फ़रमाया कि ग़ज़ब क्या करता, तुम सारी रात तरावीह में खड़े रहते हो, मैंने सोचा कि दबाने से तुम्हारे पैरों को आराम मिलेगा, इसलिये दबाने के लिए आ गया।

मौलाना मुहम्म्द याक़ूब साहिब नानौतवी और तवाज़ो

हज़रत मौलाना मुहम्मद याक़ूब साहिब नानौतवी रहमतुल्लाहि अलैहि, जो दारुल उलूम देवबन्द के सदर मुदर्रिस (प्रिंसपिल) थे। बड़े ऊंचे दर्जे के आलिम थे, उनके बारे में हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने एक वाज़ में बयान फ़रमाया कि उनका तरीक़ा यह था कि जब कोई उनके सामने उनकी तारीफ़ करता तो बिल्कुल ख़ामोश रहते थे, कुछ बोलते नहीं थे। जैसे आज कल बनावटी तवाज़ो इख़्तियार करते हैं कि अगर कोई हमारे सामने हमारी तारीफ़ करता है तो जवाब में हम कहते हैं कि यह तो आपका अच्छा गुमान है, वरना हम तो इस क़ाबिल नहीं हैं, वग़ैरह। हालांकि दिल में बहुत खुश होते हैं कि यह शख़्स हमारी और तारीफ़ करे और साथ साथ दिल में भी अपने आप को बड़ा समझते हैं। लेकिन साथ में यह अल्फ़ाज़ भी इस्तेमाल करते हैं। यह हक़ीक़त में बनावटी तवाज़ो

होती है, हकीकी तावज़ो नहीं होती। लेकिन हज़रत मौलाना याकूब साहिब खामोश रहते। अब देखने वाला यह समझता कि हज़रत अपनी तारीफ़ पर ख़ुश होते हैं। अपनी तारीफ़ कराना चाहते हैं इसलिये तारीफ़ करने से न तो रोकते हैं न टोकते हैं और न उसका रद्द करते हैं। हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि अब देखने वाला यह समझता है कि इनके अन्दर तवाज़ो नहीं है हालांकि इन बातों का नाम तवाज़ो नहीं बल्कि तवाज़ो तो दिल के अन्दर होती है। और उकसी पहचान यह होती है कि आदमी कभी किसी काम को अपने से नीचा नहीं समझता।

तवाज़ो का एक और वाक़िआ

चुनांचे एक वाक़िआ है कि एक साहिब ने आपको खाने की दावत दी, आपने क़ुबूल फ़रमा ली, उस शख़्स का गांव फ़ासले पर था, लेकिन उसने सवारी का कोई इन्तिज़ाम नहीं किया, जब खाने का वक़्त आया तो आप पैदल ही रवाना हो गये। दिल में यह ख़्याल भी नहीं आया कि उन साहिब ने सावारी का कोई इन्तिज़ाम नहीं किया, सवारी का इन्तिज़ाम करना चाहिए था। बहर हाल उसके घर पहुंचे, खाना खाया, कुछ आम भी खाए, उसके बाद जब वापस चलने लगे तो उस वक़्त भी उसने सवारी का कोई इन्तिज़ाम नहीं किया, बल्कि उल्टा यह ग़ज़ब किया कि बहुत सारे आमों की गठरी बनाकर हज़रत के हवाले कर दी कि हज़रत यह कुछ आम घर के लिए लेते जायें। उस अल्लाह के बन्दे ने यह न सोचा कि इतनी दूर जाना है और सवारी का कोई इन्तिज़ाम नहीं है, कैसे इतनी बड़ी गठरी लेकर जायेंगे। मगर उसने वह गठरी मौलाना को दे दी और मौलाना ने क़ुबूल फ़रमा ली। और उठा कर चल दिए, अब सारी उमर मौलाना ने कभी इतना बोझ उठाया नहीं, शाहज़ादों जैसी ज़िन्दगी गुज़ारी, अब उस गठरी को कभी एक हाथ में उठाते कभी दूसरे हाथ में उठाते चले जा रहे हैं, यहां तक कि जब देवबन्द क़रीब आने लगा तो

अब दोनों हाथ थक कर चूर हो गये, न इस हाथ में चैन, न उस हाथ में चैन, आख़िरकार उस गठरी को उठा कर अपने सर पर रख लिया, जब सर पर रखा तो हाथों को कुछ आराम मिला तो फ़रमाने लगे, हम भी क्या अजीब आदमी हैं, पहले ख़्याल नहीं आया कि इस गठरी को सर पर रख लें, वर्ना इतनी तक्लीफ़ न उठानी पड़ती। अब मौलाना इस हालत में देवबन्द में दाख़िल हो रहे हैं कि सर पर आमों की गठरी है, अब रास्ते में जो लोग मिलते हैं वे आपको सलाम कर रहे हैं, आप से मुसाफ़ा कर रहे हैं और आपने एक हाथ से गठरी संभाली हुई है और एक हाथ से मुसाफ़ा कर रहे हैं, इसी हालत में आप अपने घर पहुंच गये और आपको ज़र्रा बराबर भी यह ख़्याल नहीं आया कि यह काम मेरे मर्तबे के ख़िलाफ़ है और मेरे मर्तबे से कम है। बहर हाल, इन्सान किसी भी काम को अपने मर्तबे से नीचा न समझे। यह है तवाज़ो की निशानी।

एक अजीब व ग़रीब वाक़िआ

हज़रत सैयद अहमद कबीर रिफ़ाई रह्मतुल्लाहि अलैहि का नाम आपने सुना होगा, बड़े ऊंचे दर्जे के अल्लाह के वलियों में से गुज़रे हैं। जिनके साथ ऐसा वाक़िआ पेश आया कि दुनिया में किसी और के साथ ऐसा वाक़िआ पेश नहीं आया। वह यह कि सारी उमर उनको हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के रौज़ा-ए-अक़्दस पर हाज़री की तमन्ना और आरज़ू रहती थी। बहुत आरज़ुओं और तमन्नाओं के बाद अल्लाह तआला ने हज की सआदत अता फ़रमाई, हज के लिए तशरीफ़ ले गये, हज से फ़राग़त के बाद मदीना मुनव्वरा तशरीफ़ ले गये। जब हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के रौज़ा-ए-अक़्दस पर हाज़री हुई तो उस वक़्त बे साख़्ता अर्बी के ये दो शेअ़्र पढ़े:

فی حالة البعد روحی کنت ارسلها — تقبل الارض عنی وھی نائبتی

وھذہ دولة الاشباح قد حضرت — فامدد یمینك كی تحظی بها شفتی

(यानी) या रसूलल्लाह! जब मैं आप से दूर था तो दूरी की हालत में रौज़ा–ए–अक़्दस पर अपनी रूह को भेजा करता था, वह आकर मेरी नायब और क़ायम मक़ाम बनकर ज़मीन का बोसा लिया करती थी। आज जब अल्लाह तआला के फ़ज़्ल व करम से मुझे जिस्मानी तौर पर हाज़री नसीब हुई है तो आप अपना मुबारक हाथ बढ़ायें ताकि मेरे होंट उस से सैराब और फ़ैज़याब हो सकें। यानी मैं उसका बोसा लूं। बस शेअ्र का पढ़ना था कि फ़ौरन रौज़ा–ए–अक़्दस से मुबारक हाथ निकला, और जितने लोग वहां हाज़िर थे, सबने नबी करीम के मुबारक हाथ की ज़ियारत की। और हज़रत सैयद अहमद कबीर रिफ़ाई रहमतुल्लाहि अलैहि ने हाथ मुबारक का बोसा लिया, और वह वापस चला गया। अब हक़ीक़त क्या थी? अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है मगर तारीख़ में यह वाक़िआ लिखा हुआ है।

तकब्बुर का इलाज

इस वाक़िए के पेश आने के बाद सैयद अहमद कबीर रिफ़ाई रहमतुल्लाहि अलैहि के दिल में ख़्याल आया कि आज अल्लाह तआला ने मुझे इतना बड़ा ऐजाज़ अता फ़रमाया और इतना बड़ा इकराम फ़रमाया कि जो आज तक किसी को नसीब न हुआ, कहीं इसके नतीजे में मेरे दिल के अन्दर तकब्बुर और बड़ाई का शायबा पैदा न हो जाए। चुनांचे आप मस्जिदे नबवी के दरवाज़े पर लेट गये और हाज़िरीन से फ़रमाया कि मैं सब को क़सम देकर कहता हूं कि आप लोग मेरे ऊपर से फलांग कर बाहर निकलें ताकि बड़ाई का यह शायबा भी दिल से निकल जाए। इस तरह आपने तकब्बुर और बड़ाई का इलाज किया। यह वाक़िआ तो दरमियान में बतौर तआरुफ़ के अर्ज़ कर दिया, वरना असल वाक़िआ यह बयान करना था कि:

मख़्लूक़ की ख़िदमत की बेहतरीन मिसाल

एक बार सैयद अहमद कबीर रिफ़ाई रहमतुल्लाहि अलैहि बाज़ार तशरीफ़ लेजा रहे थे, सड़क पर एक ख़ारिशी कुत्ता देखा, ख़ारिश और

बीमारी की वजह से उस से चला भी नहीं जा रहा था। जो अल्लाह के नेक बन्दे होते हैं, उनको अल्लाह की मख़्लूक़ से भी बेपनाह शफ़क़त और मुहब्बत होती है, और यह मुहब्बत व शफ़क़त इस बात की निशानी होती है कि उनको अल्लाह तआला से ख़ुसूसी ताल्लुक़ है, इसी को मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमते हैं:

ज़ तस्बीह व सज्जादा व दल्क़ नेस्त
तरीक़त बजुज़ ख़िद्मते ख़ल्क़ नेस्त

यानी तस्बीह, मुसल्ला और गुदड़ी का नाम तरीक़त (तसव्वुफ़) नहीं बल्कि मख़्लूक़ की ख़िदमत का नाम तरीक़त है। मेरे शैख़ हज़रत डा० अब्दुल हई साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि जब कोई बन्दा अल्लाह तआला से मुहब्बत करता है और अल्लाह तआला को भी उस से मुहब्बत हो जाती है तो अल्लाह तआला उसके दिल में मख़्लूक़ की मुहब्बत डाल देते हैं। जिसके नतीजे में अल्लाह वालों को इन्सानों बल्कि जानवरों तक से इतनी मुहब्बत हो जाती है कि हम और आप उसका तसव्वुर भी नहीं कर सकते।

बहर हाल जब सैयद अहमद कबीर रिफ़ाई रहमतुल्लाहि अलैहि ने उस कुत्ते को इस हालत में देखा तो आपको उस पर तरस और रहम आया, और उस कुत्ते को उठा कर घर लाए, और फिर डा० को बुलाकर उसका इलाज कराया, उसकी दवा की, और रोज़ाना उसकी मरहम पट्टी करते रहे, कई महीनों तक उसका इलाज करते रहे, यहां तक कि जब अल्लाह तआला ने उसको तन्दुरुस्त कर दिया तो आपने अपने किसी साथी से कहा कि अगर कोई शख़्स रोज़ाना इसको खिलाने पिलाने का ज़िम्मा ले तो इसको ले जाए, वरना फिर मैं ही इसको रखता हूं, और इसको खिलाऊंगा, इस तरह आपने उस कुत्ते की परवरिश की।

एक कुत्ते से मुकालमा

इस वाक़िए के बाद एक दिन सैयद अहमद कबीर रिफ़ाई

रहमतुल्लाहि अलैहि कहीं तशरीफ़ लेजा रहे थे, बारिश का मौसम था, खेतों के दरमियान जो पगडन्डी होती है, उस पर से गुज़र रहे थे, दोनों तरफ़ पानी खड़ा था, कीचड़ थी। चलते चलते सामने से उस पगडन्डी पर एक कुत्ता आ गया, अब यह भी रुक गये और कुत्ता भी उनको देख कर रुक गया, वह पगडन्डी इतनी छोटी थी कि एक वक़्त में एक ही आदमी गुज़र सकता था, दो आदमी नहीं गुज़र सकते थे, अब या तो कुत्ता नीचे कीचड़ में उतर जाए, और यह ऊपर से गुज़र जाएं, या फिर यह कीचड़ में उतर जाएं, और कुत्ता ऊपर से गुज़र जाए, दिल में कश–मकश पैदा हुई कि क्या किया जाए? कौन नीचे उतरे, मैं उतरूं या कुत्ता उतरे?

उस वक़्त सैयद अहमद कबीर रिफ़ाई रहमतुल्लाहि अलैहि का उस कुत्ते के साथ मुकालमा (गुफ़्तगू) हुआ। अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है कि यह मुकालमा किस तरह हुआ? हो सकता है कि अल्लाह तआला ने बतौर करामत के उस कुत्ते को कुछ देर के लिए ज़बान देदी हो और वाक़ई मुकालमा हुआ हो, और यह भी हो सकता है कि उन्हों ने अपने दिल में मुकालमा किया हो। बहर हाल, उस मुकालमे में हज़रत सैयद अहमद कबीर रहमतुल्लाहि अलैहि ने कुत्ते से कहा कि तुम नीचे उतर जाओ, ताकि मैं ऊपर से गुज़र जाऊं।

कुत्ते ने जवाब में कहा: मैं नीचे क्यों उतरूं, तुम बड़े दुरवेश और अल्लाह के वली बने फिरते हो, और अल्लाह के वलियों का तो यह हाल होता है कि वे अपने ऊपर दूसरों को तरजीह देने वाले होते हैं, दूसरों के लिए क़ुरबानी देते हैं, तुम कैसे अल्लाह के वली हो कि मुझे उतरने का हुक्म दे रहे हो, खुद क्यों नहीं उतर जाते?

हज़रत शैख़ ने जवाब में फ़रमाया कि बात असल में यह है कि मेरे और तेरे अन्दर फ़र्क़ है, वह यह कि मैं मुकल्लफ़ हूं, तो गैर मुकल्लफ़ है, मुझे नमाज़ पढ़नी है, तुझे नमाज़ नहीं पढ़नी है, अगर नीचे उतरने की वजह से तेरा जिस्म गन्दा और नापाक हो गया तो

तुझे ग़ुसल और पाकी की ज़रूरत नहीं होगी। अगर मैं उतर गया तो मेरे कपड़े नापाक हो जायेंगे और मेरी नमाज़ में ख़लल आ जायेगा, इसलिये मैं तुझ से कह रहा हूं कि तू नीचे उतर जा।

वरना दिल गन्दा हो जायेगा

कुत्ते ने जवाब में कहा: वाह आपने अजीब बात कही कि कपड़े गन्दे हो जायेंगे। अरे अगर आपके कपड़े गन्दे हो जायेंगे तो उनका इलाज यह है कि उनको उतार कर धो लेना, वे कपड़े पाक हो जायेंगे, लेकिन अगर मैं नीचे उतर गया तो तुम्हारा दिल गन्दा हो जायेगा और तुम्हारे दिल में यह ख़्याल आ जायेगा कि मैं इस कुत्ते से अफ़ज़ल हूं, मैं इन्सान हूं और यह कुत्ता है, और इस ख़्याल की वजह से तुम्हारा दिल ऐसा गन्दा हो जायेगा कि उसकी पाकी का कोई रास्ता नहीं। इसलिये बेहतर यह है कि दिल की गन्दगी के बजाये कपड़ों की गन्दगी को गवारा कर लो और नीचे उतर जाओ।

बस, कुत्ते का यह जवाब सुन कर हज़रत शैख़ ने हथियार डाल दिये और कहा कि तुमने सही कहा कि कपड़ों को दोबारा धो सकता हूं लेकिन दिल नहीं धो सकता। यह कह कर आप कीचड़ में उतर गये, और कुत्ते को रास्ता दे दिया।

जब यह मुकालमा हो गया तो अल्लाह तआला की तरफ़ से हज़रत सैयद अहमद कबीर रिफ़ाई रह्मतुल्लाहि अलैहि को इल्हाम हुआ (यानी दिल में बात डाली गयी) और उस में अल्लाह तआला ने उन से फ़रमाया कि ऐ अहमद कबीर! आज हमने तुमको एक ऐसे इल्म की दौलत से नवाज़ा, कि सारे उलूम एक तरफ़ और यह इल्म एक तरफ़, और यह हक़ीक़त में तुम्हारे उस अमल का इनाम है कि तुमने कुछ दिन पहले एक कुत्ते पर तरस खा कर उसका इलाज और देख भाल की थी। उस अमल की बदौलत हमने तुम्हें एक कुत्ते के ज़रिये एक ऐसा इल्म अता किया जिस पर सारे उलूम क़ुर्बान हैं। वह

इल्म यह है कि इन्सान अपने आपको कुत्ते से भी अफ़ज़ल न समझे और कुत्ते को अपने मुक़ाबले में हक़ीर (कम दर्जा) ख़्याल न करे।

हज़रत बा यज़ीद बुस्तामी रहमतुल्लाहि अ़लैहि

हज़रत बा यज़ीद बुस्तामी रहमतुल्लाहि अ़लैहि जो बहुत बड़े बुज़ुर्ग गुज़रे हैं। उनका वाक़िआ मशहूर है कि इन्तिक़ाल के बाद किसी ने उनको ख़्वाब में देखा तो उनसे पूछा कि हज़रत! अल्लाह तआला ने आपके साथ कैसा मामला फ़रमाया? जवाब दिया कि हमारे साथ बड़ा अ़जीब मामला हुआ, जब हम यहां पहुंचे तो अल्लाह तआ़ला ने पूछा कि क्या अ़मल लेकर आए हो? मैंने सोचा कि क्या जवाब दूं, और अपना कौन सा अ़मल पेश करूं, इसलिये कि कोई भी ऐसा नहीं है जिसको पेश करूं। इसलिये मैंने जवाब दिया, या अल्लाह! कुछ भी नहीं लाया, ख़ाली हाथ आया हूं, आपके करम के सिवा मेरे पास कुछ भी नहीं। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया: वैसे तो तुमने बड़े बड़े अ़मल किए, लेकिन तुम्हारा एक अ़मल हमें बहुत पसन्द आया, आज उसी अ़मल की बदौलत हम तुम्हारी मग़्फ़िरत कर रहे हैं। वह अ़मल यह है कि एक रात जब तुम उठे तो तुमने देखा कि एक बिल्ली का बच्चा सर्दी की वजह से ठिठर रहा है, कांप रहा है, तुमने उस पर तरस खाकर उसको अपने लिहाफ़ में जगह दे दी, और उकसी सर्दी दूर कर दी, और उस बिल्ली के बच्चे ने आराम के साथ सारी रात गुज़ारी। चूंकि तुम्हारा यह अ़मल इख़्लास पर आधारित था और हमारी रिज़ा के अ़लावा कोई ग़र्ज़ शामिल नहीं थी, बस तुम्हारा यह अ़मल हमें इतना पसन्द आया कि इस अ़मल की बदौलत हमने तुम्हारी मग़्फ़िरत कर दी।

हज़रत बा यज़ीद बुस्तामी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि दुनिया में जो बड़े बड़े उलूम व मआ़रिफ़ हासिल किए थे, वे सब धरे के धरे रह गये। वहां तो सिर्फ़ एक ही अ़मल पसन्द आया, वह था

"मख़्लूक़ के साथ अच्छा बरताव"।

खुलासा-ए-कलाम

बहर हाल, हज़रत सैयद अहमद कबीर रिफ़ाई रहमतुल्लाहि अलैहि को इस इल्हाम के ज़रिये यह बताया गया कि वे सारे उलूम एक तरफ़ और एक इल्म कि " मैं बे हक़ीक़त चीज़ हूं" और "मेरी अपनी ज़ात के अन्दर कोई हक़ीक़त नहीं है" यही सारे उलूम की जान है जो आज हमने तुम्हें अता कर दी" इसी का नाम तवाज़ो है, सारे बड़े बड़े औलिया–अल्लाह इस बात की फ़िक्र में लगे रहते थे कि कहीं अपने अन्दर तकब्बुर का कोई शयबा पैदा न हो जाए।

"तवाज़ो" और एहसासे कमतरी" में फ़र्क़

आज कल "इल्मे नफ़सियात" का बड़ा ज़ोर है, और "इल्मे नफ़सियात" में से एक चीज़ आज कल लोगों में बहुत मश्हूर है, वह है "एहसासे कमतरी" इसको बहुत बुरा समझा जाता है कि "एहसासे कमतरी" बहुत बुरी चीज़ है, अगर किसी में यह पैदा हो जाए तो उसको बहुत बुरा समझा जाता है, एक साहिब ने सवाल किया कि जब आप लोगों से यह कहते हैं कि "अपने आपको मिटाओ" तो उसके ज़रिये आप लोगों के अन्दर "एहसासे कमतरी" पैदा करना चाहते हैं तो क्या यह बात दुरुस्त नहीं है कि लोग अपने अन्दर एहसासे कमतरी पैदा करें?

बात असल में यह है कि "तवाज़ो" और "एहसासे कमतरी" में फ़र्क़ है। पहली बात यह है कि जिन लोगों ने यह "इल्मे नफ़सियात" ईजाद की, उन्हें दीन का इल्म या अल्लाह और उसके रसूल के बारे में कोई इल्म था ही नहीं, उन्हों ने एक "एहसासे कमतरी" का लफ़्ज़ इख़्तियार कर लिया, हालांकि इसमें बहुत सी अच्छी बातें शामिल हो जाती हैं। उनको "एहसासे कमतरी कह दिया जाता है लेकिन हक़ीक़त में "तवाज़ो" और एहसासे कमतरी" में फ़र्क़ है।

एहसासे कम्तरी में पैदाइश और बनावट पर शिक्वा

दोनों में फ़र्क यह है कि "एहसासे कम्तरी" में अल्लाह तआ़ला की तख़्लीक़ (पैदाइश और बनावट) पर शिक्वा और शिकायत होती है। यानी एहसासे कमतरी में इन्सान को यह ख़्याल होता है कि मुझे महरूम और पीछे रखा गया है। मैं हक़दार तो ज़्यादा था, लेकिन मुझे कम मिला, या जैसे यह एहसास कि मुझे बद सूरत पैदा किया गया, मुझे बीमार पैदा किया गया, मुझे दौलत कम दी गयी, मेरा रुतबा कम रखा गया। इस क़िस्म के शिक्वे उसके दिल में पैदा होते हैं, और फिर उस शिक्वे का लाज़मी नतीजा यह होता है कि उसकी तबीयत में झुंझलाहट पैदा हो जाती है, और फिर इस एहसासे कम्तरी के नतीजे में इन्सान दूसरों से हसद करने लगता है, और उसके अन्दर मायूसी पैदा हो जाती है कि अब मुझ से कुछ नहीं हो सकता। बहर हाल, एहसासे कम्तरी की बुनियाद अल्लाह तआ़ला की तक़्दीर के शिक्वे पर होती है।

"तवाज़ो" शुक्र का नतीजा है

जहां तक तवाज़ो का ताल्लुक़ है, यह अल्लाह तआ़ला की तक़्दीर पर शिक्वे से हासिल नहीं होती, बल्कि अल्लाह तआ़ला के इनामात पर शुक्र के नतीजे में हासिल होती है, तवाज़ो करने वाला यह सोचता है कि मैं तो इस क़ाबिल नहीं था कि मुझे यह नेमत मिलती, मगर अल्लाह तआ़ला ने अपने फ़ज़्ल व करम से मुझे यह नेमत अ़ता फ़रमाई, यह उनका करम और उनकी अ़ता है, मैं इसका हक़्दार नहीं था।

इस से अन्दाज़ा लगायें कि "एहसासे कम्तरी" और "तवज़ो" में कितना बड़ा फ़र्क है। इसलिये कि तवाज़ो महबूब और पसन्दीदा अ़मल है, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इरशाद है कि जो शख़्स तवाज़ो इख़्तियार करता है, अल्लाह तआ़ला उसको तरक्क़ी और बुलन्दी अ़ता फ़रमाते हैं। "तकब्बुर" की ख़ासियत यह है

कि "मुतकब्बिर" (तकब्बुर करने वाला) आख़िर कार ज़लील होता है, और तवाज़ो की ख़ासियत यह है कि "मुतवाज़े" (तवाज़ो अपनाने वाले) शख़्स को आख़िर कार इज़्ज़त हासिल होती है। बशर्ते कि सिर्फ़ तरक़्क़ी और बुलन्दी हासिल करने के लिए झूठी और बनावटी तवाज़ो न हो, बल्कि वह हक़ीक़ी तावाज़ो हो।

तवाज़ो का दिखावा

कभी कभी हम लोग ज़बान से यह अल्फ़ाज़ इस्तेमाल करते हैं कि हमारी हक़ीक़त क्या है? और हम तो नाचीज़ हैं, नाकारा हैं, वग़ैरह। बहुत सी बार यह तवाज़ो नहीं होती बल्कि तवाज़ो का दिखावा, तवाज़ो का धोखा होता है, हमारे हज़रत हकीमुल उम्मत रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते थे कि इस बात का अन्दाज़ा लगाना कि वह ये अल्फ़ाज़ वाक़ई तवाज़ो से कह रहा है या दिखावे से कह रहा है, इसका इम्तिहान बहुत आसान है, वह इस तरह कि जब कोई शख़्स कहे कि मैं तो बड़ा नाचीज़ हूं, नाकारा हूं, ख़ताकार हूं और गुनाहगार हूं तो आप उस वक़्त अगर जवाब में यह कह दें कि बेशक आपने बिल्कुल सही फ़रमाया। आप वाक़ई बड़े नाचीज़ हैं, बड़े नाकारा हैं, बड़े ख़ताकार हैं और बड़े गुनाहगार हैं। फिर देखो इस जवाब के बाद क्या होता है? अगर उसने सच्चे दिल से ये अल्फ़ाज़ कहे थे तो इस जवाब का ख़ैर मक़्दम (स्वागत) करेगा, लेकिन अगर इस जवाब की वजह से उसके दिल में मलाल पैदा हो गया तो इसका मतलब यह है कि वह सच्चे दिल से ये बातें नहीं कह रहा था, बल्कि तवाज़ो के अल्फ़ाज़ इसलिये इस्तेमाल कर रहा था कि जवाब में यह कहा जाए कि नहीं हज़रत! आप तो बड़े नेक है, बड़े मुत्तक़ी हैं, बड़े परहेज़गार हैं, इस से मालूम हुआ कि बनावटी तवाज़ो में जो अल्फ़ाज़ कहे जाते हैं वे सच्चे दिल से नहीं कहे जाते, बल्कि दूसरों से अपनी तारीफ़ कराने के लिए कहे जाते हैं, इसलिये यह तवाज़ो न हुई।

ना शुक्री भी न हो

यहां सवाल यह पैदा होता है कि इन्सान के अन्दर कुछ अच्छी सिफ़तें होती ही हैं, किसी को अल्लाह तआला ने इल्म दिया है, किसी को सेहत दी है, किसी को दौलत दी है, किसी को कोई मर्तबा दिया है, किसी को कोई ओहदा दिया है, ये सारी चीज़ें मौजूद हैं तो इन्सान कैसे इन्कार कर दे, और कहे कि ये चीज़ें हमें हासिल नहीं, अगर इसका इन्कार कर देगा तो ना शुक्री और नेमत का इन्कार होगा, इसके जवाब में बुज़ुर्गों ने फ़रमाया कि तवाज़ो को इतना न बढ़ाओ कि ना शुक्री की हद तक पहुंच जाए, तवाज़ो भी हो लेकिन साथ में अल्लाह तबारक व तआला की ना शुक्री भी न हो।

यह तवाज़ो नहीं

हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने अपने मवाइज़ (तक़रीरों) में एक वाक़िआ बयान फ़रमाया है कि मैं एक बार रेल में सफ़र कर रहा था, मेरे क़रीब कुछ लोग बैठे हुए थे और आपस में बातें करते हुए जा रहे थे, मैं सोना चाहता था, लेकिन वे अल्लाह के बन्दे आपस में गुफ़्तगू कर रहे थे, जिसकी वजह से नींद नहीं आ रही थी। चुनांचे मैं अपनी बर्थ से उतर कर नीचे आ गया, जब खाने का वक़्त हुआ तो उन्हों ने खाना निकाला और मुझ से कहने लगे कि हज़रत तशरीफ़ लाइये, कुछ गू मूत (पेशाब पाख़ाना) आप भी खा लीजिए, उस खाने को उन्हों ने गू मूत के अल्फ़ाज़ से ताबीर किया, मैंने कहा भाई! यह खाना है इसे तुम गू मूत क्यों कह रहे हो? कहने लगे तवाज़ो की वजह से कह रहे हैं अगर हम अपने खाने को बड़ी हैसियत दे दें तो यह तकब्बुर हो जाएगा, मैंने कहा: यह खाना अल्लाह तआला की नेमत है, उसका रिज़्क़ है, इसको ऐसे गन्दे लफ़्ज़ों से ताबीर करना कैसे सही हो सकता है? इसी तरह अगर अल्लाह तबारक व तआला ने किसी को कोई ख़ूबी अता फ़रमाई है तो यह उसकी अता है, उसकी अताओं का इन्सान शुक्र करे, उसकी

ना क़दरी न करे।

तकब्बुर और ना शुक्री से भी बचना है

एक तरफ़ ना शुक्री से भी बचना है, दूसरी तरफ़ तकब्बुर से भी बचना है और तवाज़ो इख़्तियार करनी है, दोनों काम जमा करे, जैसे नमाज़ पढ़ी, रोज़ा रखा और इस अमल को यह समझना कि मैंने बड़ा ज़बरदस्त अमल कर लिया तो यह बड़ा तकब्बुर है, और अगर अपने अमल के बारे में यह कहा कि यह तो बेकार है जैसा कि आज कल बाज़ लोग नमाज़ के बारे में यह कहते हैं कि साहिब! हमने टकरें मार लीं, यह तो अल्लाह तबारक व तआला की ना शुक्री और ना क़दरी है।

शुक्र और तवाज़ो कैसे जमा हों?

सवाल यह है कि दोनों चीज़ों को कैसे जमा किया जाए कि ना शुक्री भी न हो, तकब्बुर भी न हो, शुक्र भी अदा हो और तवाज़ो भी हो? हक़ीक़त में यह कोई मुश्किल काम नहीं, दोनों कामों को जमा करना बिल्कुल आसान है, वह इस तरह कि इन्सान यह ख़्याल करे कि अपनी ज़ात में तो मेरे अन्दर इस अमल की ज़र्रा बराबर ताक़त और सलाहियत नहीं थी, लेकिन अल्लाह तआला ने अपने फ़ज़्ल व करम से यह अमल करा दिया, इस तरह दोनों चीज़ें जमा हो जाती हैं कि अपनी ज़ात में अपने आपको बे हक़ीक़त समझा तो तवाज़ो हो गई और अल्लाह तआला की अता का इक़रार किया तो यह शुक्र हो गया। अब दोनों बातें जमा हो गयीं, इसलिये जो बन्दा अल्लाह तबारक व तआला का शुक्र बजा लाता हो, उसके अन्दर कभी तकब्बुर नहीं आ सकता, क्योंकि शुक्र के मायने यह हैं कि मेरे अन्दर अपनी ज़ात में कोई सलाहियत नहीं थी, अल्लाह जल्ल जलालुहू ने अपने फ़ज़्ल व करम और अपनी अता से मुझे यह चीज़ अता फ़रमाई है।

देखिए! नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दोनों को जमा कर के दिखा दिया, फ़रमाया:

"انا سيد ولد آدم ولا فخر" (ترمذی شریف)

यानी मैं सारे आदम के बेटों का सरदार हूं, अब इस से ज़ाहिर हो रहा है कि अपनी बड़ाई का इज़्हार फ़रमा रहे हैं। लेकिन साथ साथ यह भी फ़रमा दिया कि "वला फख़्-र" यानी कि मैं अपना सरदार होना बड़ाई की वजह से नहीं कह रहा हूं बल्कि अल्लाह तबारक व तआला ने मुझे अपने फ़ज़्ल व करम से बड़ा बना दिया, और सारे आदम के बेटों का सरदार बनाया, यह सिर्फ़ उनकी अता है, मेरी ज़ात की बड़ाई का इसमें कोई दख़ल नहीं।

एक मिसाल

इस बात को हकीमुल उम्मत हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने एक मिसाल के ज़रिये समझाया, फ़रमाया कि इसको एक मिसाल से समझो कि पहले ज़माने में गुलाम हुआ करते थे, और अपने मालिक के मम्लूक होते थे। मालिक उनको बाज़ार में बा क़ायदा बेच सकता था। आक़ा उनकी हर चीज़ का मालिक होता था, मालिक जो भी हुक्म देगा गुलाम को करना होगा, अगर कहे कि मैं सफ़र में जा रहा हूं मेरी ग़ैर मौजूदगी में अब तुम हुक्मरानी करो, अब वह हुक्मरानी कर रहा है। गवर्नर बना हुआ है। लेकिन है गुलाम का गुलाम। इसलिये उस गुलाम के दिमाग़ में यह बात आ ही नहीं सकती कि यह जो इक़्तिदार (सत्ता) मेरे पास आया है, यह मेरी कुव्वते बाज़ू का या मेरी सलाहियत का नतीजा है, कुछ भी नहीं, उसको यह ख़्याल रहता है कि जब आक़ा आ जायेगा तो कह देगा कि हटो, अब बैतुलख़ला (लेट्रीन) साफ़ करो, तब वह सारा तख़्त और सारी हुक्मरानी धरी रह जायेगी। मालूम हुआ कि वह गुलाम बेशक हाकिम बनकर हुक्म चला रहा है, लेकिन साथ साथ अपनी हक़ीक़त का एहसास कर रहा है, कि यह हुक्मरानी मेरे मालिक की अता है,

हक़ीक़त में तो मैं ग़ुलाम ही हूं।

बन्दे का दर्जा ग़ुलाम से कमतर है

यह तो एक ग़ुलाम का हाल था, लेकिन "बन्दा" होने का दर्जा इस से कहीं ज़्यादा नीचे है, इसलिये जब अल्लाह तबारक व तआला किसी बन्दे को कोई ओहदा अता फ़रमा दें तो "बन्दे" को समझना चाहिए कि ओहदा तो मुझे अल्लाह तआला ने अता फ़रमा दिया, इसी वजह से यह काम अन्जाम दे रहा हूं, लेकिन मैं उनका बन्दा हूं मेरी हक़ीक़त उस ग़ुलाम से भी कम है, जिसको मालिक ने तख़्त पर बिठा दिया। कितने ग़ुलाम गुज़रे हैं, जिन्हों ने बादशाहत की है, लेकिन रहे ग़ुलाम के ग़ुलाम।

एक इब्रत नाक वाक़िआ

एक इब्रत नाक क़िस्सा याद आया, एक ग़ुलाम ने अपने आक़ा के ख़िलाफ़ बग़ावत करके आक़ा को क़त्ल कर दिया, और बा क़ायदा बादशाह बन गया, अब मुद्दतों तक बादशाह बना रहा, शाहज़ादे भी पैदा हो गये। लेकिन हक़ीक़त में तो वह बादशाह का ग़ुलाम था। एक बार उस ग़ुलम बादशाह ने शैख़ इ़ज़्ज़ुद्दीन बिन अ़ब्दुस्सलाम रह्मतुल्लाहि अ़लैहि को अपने दरबार में बुलाया, जो औलिया—अल्लाह में से थे। यह अपनी सदी के मुजद्दिद थे। उस ग़ुलाम बादशाह ने उनको बुला कर कहा कि मैं आपको क़ाज़ी बनाना चाहता हूं, शैख़ ने जवाब में कहा कि बात यह है कि क़ाज़ी बनाने का काम उस शख़्स का है जो ख़लीफ़ा—ए—बर्हक़ हो, और आप ख़लीफ़ा—ए—बर्हक़ नहीं हैं, इसलिये कि आप तो ग़ुलाम हैं, आप अपने आक़ा को क़त्ल करके ख़ुद से बादशाह बन बैठे, अपनी मिल्कियत में बहुत सारी ज़मीनें आपने रखी हैं हालांकि आप मालिक बन ही नहीं सकते। क्योंकि ग़ुलाम—के अन्दर मालिक बनने की सलाहियत नहीं है, इसलिये कि जब तक आप अपनी इस हैसियत की इस्लाह नहीं करेंगे मैं उस वक़्त तक आपका कोई ओहदा क़ुबूल नहीं करूंगा।

उस ज़माने में बहर हाल कुछ न कुछ ख़ैर हुआ करती थी, इसके बावजूद कि अपने आक़ा को क़त्ल करने का जुर्म किया था, लेकिन फिर भी दिल में ख़ुदा का ख़ौफ़ था, और अल्लाह वालों के कहने के अन्दाज़ से भी दिल पर असर होता है, उस बादशाह ने कहा: बात तो आपने सही कही, वाक़ई मैं तो ग़ुलाम हूं। आप मुझे कोई ऐसा रास्ता बता दीजिए कि जिसके ज़रिये मैं इस ग़ुलामी से निकल जाऊं। शैख़ ने कहा इसका रास्ता यही हो सकता है कि तुम और तुम्हारे सारे शहज़ादों को बाज़ार में खड़ा करके फ़रोख़्त किया जाए, और जो क़ीमत वुसूल हो वह तुम्हारे मरहूम आक़ा के वारिसों में तक़सीम कर दी जाए और जो शख़्स ख़रीदे, वह आज़ाद कर दे, फिर तुम्हें आज़ादी मिल जायेगी। अब अन्दाज़ा लगाइए, बादशाह को यह कहा जा रहा है कि तुमको और तुम्हारे बेटों को बाज़ार में खड़ा कर के बेचा जायेगा, क़ीमत लगाई जायेगी, नीलाम होगा, उसके बाद तुम्हारी बादशाहत दुरुस्त होगी। लेकिन चूंकि दिल में कुछ ख़ौफ़े ख़ुदा और आख़िरत की फ़िक्र थी, इसलिये वह बादशाह इस पर राज़ी हो गया।

चुनांचे तारीख़ का यह अलग तरह का वाक़िआ है कि उस बादशाह को और शहज़ादों को बाज़ार में खड़ा करके नीलाम किया गया, बोली लगाई गयी। चुनांचे एक शख़्स ने उनको ख़रीद कर फिर मुआवज़ा लेकर उनको आज़ाद किया, तब जाकर बादशाह की बादशाही दुरुस्त हुई। हमारी तारीख़ के अन्दर ऐसी ऐसी मिसालें भी मौजूद हैं, जो दुनिया में कहीं और नज़र नहीं आयेंगी। बहर हाल जिस तरह एक ग़ुलाम तख़्त के ऊपर बैठा है, लेकिन साथ साथ यह समझ रहा है कि मैं ग़ुलाम हूं, इसी तरह जब तुम किसी ओहदे पर पहुंच जाओ तो साथ साथ दिल में यह समझो कि तुम अल्लाह के बन्दे हो, अगर यह हक़ीक़त ज़ेहन में बैठ जायेगी तो कभी उस ओहदे पर बैठ कर दूसरों पर ज़ुल्म नहीं कर सकोगे।

इबादत में तवाज़ो

इसी तरह अल्लाह तआला ने नमाज़ पढ़ने की तौफ़ीक़ अता फ़रमा दी। अब न तो यह करो कि उस नमाज़ को दूसरों के समाने बयान करते फिरो कि मैंने नमाज़ पढ़ी थी, और नमाज़ पढ़ कर मैं तो बड़ा बुज़ुर्ग हो गया, जैसा कि अ़र्बी की कहावत मशहूर है कि:

"صلى الحائك ركعتين وانتظر الوحى"

एक जुलाहे को एक बार दो रक्अ़तें नफ़िल पढ़ने का मौक़ा मिल गया था, तो उसके बाद "वही" (खुदा के पैग़ाम) के इन्तिज़ार में बैठ गया, उसने यह समझा कि मैंने जो अ़मल किया है वह इतना बड़ा आला दर्जे का अ़मल है कि उसकी वजह से अल्लाह तआला की तरफ़ से मुझ पर "वही" नाज़िल होनी चाहिए।

इसलिये न तो यह करो कि अपने अ़मल को बहुत बड़ा समझ बैठो, और अपने लिये बड़े ऐज़ाज़ तज्वीज़ करने लगो, और न अपने अ़मल को कम दर्जा समझो जिस से ना शुक्री हो जाए, जैसा कि लोग कहते हैं कि मेरी नमाज़ क्या, मैं तो उठक बैठक करता हूं।

ऐसे अल्फ़ाज़ मत कहो, यह नमाज़ की तौहीन है। बल्कि यों कहो कि मैं तो अपनी ज़ात में कुछ नहीं कर सकता था, अल्लाह जल्ल जलालुहू का करम है कि उन्हों ने मुझे नमाज़ पढ़ने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाई।

दो काम कर लो

इसलिये अल्लाह तआला की तरफ़ से जब भी किसी इबादत की तौफ़ीक़ हो जाए तो दो काम करो, एक शुक्र अदा करो कि अल्लाह तआला ने मुझे इस अ़मल की तौफ़ीक़ दे दी, वरना कितने लोग हैं जिनको तौफ़ीक़ नहीं होती, अल्लाह तबारक व तआला का करम है कि उसने तौफ़ीक़ दी, दूसरे इस्तिग़फ़ार करो कि जो कुछ ग़लतियां और कोताहियां इस अ़मल में हुई हैं, अल्लाह तआला उनको माफ़

कर दे, इन्शा अल्लाह इन दो आमाल की बरकत से अल्लाह तआला उस इबादत को कुबूल फ़रमा लेंगे।

कैफ़ियात हरगिज़ मक़सूद नहीं

हमारे दिलों में हर वक़्त यह इश्काल रहता है कि इतने दिन से नमाज़ पढ़ रहे हैं, तस्बीह भी पढ़ रहे हैं, ज़िक्र भी कर रहे हैं, मामूलात भी हैं, नफ़्लें भी पढ़ी हैं, तहज्जुद और इश्राक़ भी पढ़ रहे हैं। लेकिन दिल की हालत में तब्दीली क्यों नज़र नहीं आ रही है, कोई कैफ़ियत क्यों पैदा नहीं हो रही है? ख़ूब समझ लो कि ये कैफ़ियात हरगिज़ मक़सूद नहीं, और जो कुछ अमल की तौफ़ीक़ हो रही है, यह अल्लाह तबारक व तआला ही की तरफ़ से इनाम है और यह जो फ़िक्र होती है कि यह आमाल पता नहीं कुबूल होते हैं कि नहीं, यह ख़ौफ़ दिल में होना चाहिए, और यह सोचे कि अपनी ज़ात में तो यह अमल इस क़ाबिल नहीं था कि इसको अल्लाह तआला की बारगाह में पेश किया जाए लेकिन जब उसने इस अमल की तौफ़ीक़ दे दी तो उसकी रहमत से यह भी उम्मीद है कि यह अमल कुबूल होगा।

इबादत के कुबूल होने की एक पहचान

हाजी इम्दादुल्लाह रहमतुल्लाहि अलैहि, अल्लाह तआला उनके दरजे बुलन्द फ़रमाए, आमीन। उनसे किसी ने सवाल किया कि हज़रत! इतने दिन से नमाज़ पढ़ रहा हूं, मालूम नहीं अल्लाह तआला के यहां कुबूल होती है कि नहीं, हज़रत ने जवाब में फ़रमायाः अरे भाई! अगर यह नमाज़ कुबूल न होती तो दूसरी बार पढ़ने की तौफ़ीक़ न होती, जब तुमने एक अमल कर लिया उसके बाद अल्लाह तबारक व तआला ने वही अमल दोबारा करने की तौफ़ीक़ दे दी तो यह इस बात की निशानी है कि पहला अमल कुबूल है इन्शा अल्लाह। इस वजह से नहीं कि उस अमल की कोई ख़ुसूसियत थी,

बल्कि इस वजह से कि उसने तुम्हें तौफ़ीक़ दी, इसलिये अपनी नमाज़ और इबादतों को कभी हक़ीर (बे हक़ीक़त) न समझो।

एक बुज़ुर्ग का वाक़िआ

मौलाना रूमी रह़्मतुल्लाहि अ़लैहि ने मसनवी में एक बुज़ुर्ग का क़िस्सा लिखा है कि एक बुज़ुर्ग बहुत दिनों तक नमाज़ें पढ़ते रहे, रोज़े रखते रहे, और तस्बीहात और अज़कार करते रहे। एक दिन दिल में यह ख़्याल आया कि मैं इतने अ़र्से (मुद्दत) से ये सब कुछ कर रहा हूं, लेकिन अल्लाह मियां की तरफ़ से कोई जवाब वग़ैरह तो आता नहीं, मालूम नहीं, अल्लाह तआ़ला को ये आमाल पसन्द हैं या नहीं? उसकी बारगाह में मक़्बूल हैं या नहीं? आख़िरकार अपने शैख़ के पास जाकर अ़र्ज़ किया कि हज़रत! इतने दिन से अ़मल कर रहा हूं, लेकिन अल्लाह तबारक व तआ़ला की तरफ़ से कोई जवाब नहीं आता। यह सुन कर शैख़ ने फ़रमाया, अरे बेवक़ूफ़! यह जो तुम्हें अल्लाह अल्लाह करने की तौफ़ीक़ हो रही है, यही उनकी तरफ़ से जवाब है। इसलिये कि अगर तुम्हारा अ़मल क़ुबूल न होता, तो तुम्हें अल्लाह अल्लाह करने की तौफ़ीक़ न होती, किसी और जवाब के इन्तिज़ार में रहने की ज़रूरत नहीं।

कि गुफ़्त आं अल्लाह तू लब्बैके मास्त
ज़ीं नियाज़ व दर्द व सोज़के मास्त

यानी यह जो तू अल्लाह अल्लाह कर रहा है यह अल्लाह अल्लाह करना ही हमारी तरफ़ से लब्बैक कहना है, यह तेरे अल्लाह अल्लाह का जवाब है कि एक बार करने के बाद दूसरी बार करने की तौफ़ीक़ दे दी।

एक बेहतरीन मिसाल

हमारे हज़रत डा० साहिब रह़्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि एक दिन किसी आदमी के पास जाकर उसकी तारीफ़ करो और

उसके बारे में अच्छे अच्छे कलिमात कहो, और तुम अगले दिन फिर जा कर उसकी तारीफ़ करो, और उसके बारे में अच्छे अच्छे कलिमात कहो, तीसरे दिन फिर जाकर उसके तारीफ़ी कलिमात कहो, अब अगर तुम्हारा यह अ़मल उस शख़्स को पसन्द होगा तो वह तुम्हारी बात सुनेगा, मना नहीं करेगा, लेकिन अगर तुम्हारा यह अ़मल उसको पसन्द नहीं होगा तो एक बार करोगे, दो बार करोगे, लेकिन वह तुम्हें तीसरी बार बाहर निकाल देगा और तुम्हें तरीफ़ करने नहीं देगा।

इसी तरह जब तुमने अल्लाह तबारक व तआ़ला का ज़िक्र किया, और फिर अल्लाह तआ़ला ने उसको जारी रखा, और तुम्हें दोबारा तौफ़ीक़ दी, तीसरी बार तौफ़ीक़ दी तो यह इस बात की निशानी है कि तुम्हारा यह अ़मल अल्लाह तआ़ला को पसन्द है। यही टूटा फूटा अ़मल उनके यहां पसन्द है, इन्शा अल्लाह। इसलिये उसकी ना क़दरी मत करो, बल्कि उस पर अल्लाह तबारक व तआ़ला का शुक्र अदा करो।

सारी गुफ़्तगू का हासिल

हमारे हज़रते वाला रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि सीधी सीधी बात यह है कि नबी-ए-करीम सरवरे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत के मुताबिक़ अ़मल करते रहो, और हर अ़मल पर अल्लाह तबारक व तआ़ला का शुक्र अदा करो कि या अल्लाह! आपने अपने फ़ज़्ल व करम से तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाई, आपका शुक्र है। मेरे अन्दर तो कोई ताक़त नहीं थी, और जब अपनी ग़लतियों और कोताहियों का ख़्याल आए तो उस पर तौबा व इस्तिग़फ़ार कर लो, कि या अल्लाह! मुझ से कोताहियां हुई हैं, मुझे माफ़ फ़रमा दीजिए, ऐसा करने से इन्शा अल्लाह तवाज़ो का भी हक़ अदा हो जायेगा, शुक्र का भी हक़ अदा हो जायेगा और तकब्बुर भी पास नहीं आयेगा।

तवाज़ो हासिल करने का तरीका

तवाज़ो हासिल करने का तरीका यह है कि अपने आपको यह समझो कि मैं तो बन्दा हूं, अल्लाह तआला जो कुछ मेरे ज़िम्मे में लगा देंगे, वह काम करूंगा। अब अगर वह कहीं ओहदे पर बिठा दें तो वह काम करूंगा, मैं उनका बन्दा हूं, गुलाम हूं, लेकिन अल्लाह तआला ने जो कुछ अता फ़रमाया है यह सिर्फ़ उनकी अता है, इस तरह करने से शुक्र और तवाज़ो दोनों जमा हो जाते हैं।

इसलिये सूफ़िया-ए-किराम फ़रमाते हैं कि आरिफ़ मुख़्तलिफ़ सिफ़तों का जामे होता है, जिसको अल्लाह तआला मारिफ़त अता फ़रमायें वह ऐसी चीज़ों को जमा करता है, जो बज़ाहिर एक दूसरे की ज़िद (मुख़ालिफ़) नज़र आती हैं, जैसे एक तरफ़ अपने अमल की तहक़ीर भी नहीं करनी और दूसरी तरफ़ उस अमल पर घमंड भी नहीं करना और यह सोचना कि मेरी निस्बत से यह अमल हक़ीर (बे हक़ीक़त और कम दर्जा) है, और अल्लाह तआला की निस्बत से यह अमल अज़ीम है, अल्लाह तबारक व तआला की तौफ़ीक़ की निस्बत है यह उनका इनाम है, यह करने से दोनों चीज़ें जमा हो जायेंगी।

शुक्र ख़ूब ज़्यादा करो

हमारे हज़रत बार बार फ़रमाया करते थे कि मैं तुम्हें एक बात बताता हूं, आज तुम्हें इस बात की क़दर नहीं होगी, जब कभी अल्लाह तआला समझने की तौफ़ीक़ देंगे, तब तुम्हें क़दर मालूम होगी, वह यह कि अल्लाह तआला का शुक्र कसरत से (ख़ूब ज़्यादा) किया करो, इसलिये कि जिस क़दर शुक्र करोगे, अन्दरूनी बीमारियों की जड़ कटेगी। वाक़िआ यह है कि उस वक़्त ये बातें वाकई उतनी समझ में नहीं आती थीं, अब तो कुछ कुछ समझ में आने लगी हैं, कि यह शुक्र ऐसी दौलत है जो बहुत सी अन्दरूनी बीमारियों का ख़ात्मा करने वाली है, हज़रत फ़रमाते थे कि मियां वे रियाज़तें और मुजाहदे कहां करोगे, जो पहले ज़माने में लोग अपने शुयूख़ के पास किया

करते थे, रगड़े खाया करते थे, मेहनतें करते थे, मश्क़्क़तें उठाते थे, भूखे रहते थे, तुम्हारे पास इतना वक़्त कहां? और तुम्हारे पास इतनी फ़ुर्सत कहां? बस एक काम कर लो, वह यह कि कसरत से शुक्र करो, जितना शुक्र करोगे, इन्शा अल्लाह तवाज़ो पैदा होगी, अल्लाह तआला की रहमत से तकब्बुर दूर होगा, अन्दरूनी बीमारियां दफ़ा होंगी।

शुक्र के मायने

और जब शुक्र करो तो ज़रा सोच समझ कर शुक्र करो कि शुक्र के क्या मायने हैं? शुक्र के मायने यह हैं कि मैं तो इस चीज़ का मुस्तहिक़ (हक़दार) नहीं था, मगर अल्लाह ने अपने फ़ज़्ल से अता फ़रमाई, इसी का नाम तवाज़ो है, अगर अपने आपको मुस्तहिक़ समझा तो तवाज़ो क्या हुई? अगर एक आदमी एक चीज़ का मुस्तहिक़ हो और उसको वह चीज़ दी जाए तो यह शुक्र का मौक़ा नहीं है, जैसे एक आदमी ने क़र्ज़ा लिया, तो क़र्ज़ा लेने वाले पर वाजिब है कि वह क़र्ज़ा देने वाले को क़र्ज़ा लौटाये, क्योंकि क़र्ज़ ख़्वाह (कर्ज़ देने वाला) उस रक़म का मुस्तहिक़ (हक़दार) है, अब जब मक़रूज़ (क़र्ज़ लेने वाला) यह रक़म कर्ज़ ख़्वाह को लौटायेगा, उस वक़्त क़र्ज़ ख़्वाह पर कोई शुक्र अदा करना वाजिब नहीं होगा, इसलिये कि यह रक़म अदा कर के मक़रूज़ ने कोई एहसान नहीं किया, शुक्र तो उस वक़्त होता जब इन्सान यह समझे कि मैं इस चीज़ का मुस्तहिक़ तो था नहीं, मुझे हक़ से ज़्यादा कोई चीज़ दी गयी। इसलिये जब किसी नेमत पर शुक्र अदा करो तो ज़रा सोच लिया करो कि यह नेमत मेरे लिये ज़रूरी नहीं थी, अल्लाह तबारक व तआला ने अपने फ़ज़्ल व करम से मुझे अता फ़रमाई, बस यह सोच लोगे तो इन्शा अल्लाह तवाज़ो हासिल हो जायेगी। जैसे कोई ओहदा मिला, तो सोच लो या अल्लाह! आपका करम है, आपने दे दिया मेरे बस का तो था नहीं, मेरे अन्दर ताक़त नहीं थी, मरे अन्दर

सलाहियत नहीं थी, मगर आपने अपने फ़ज़्ल व करम से मुझे अता फ़रमाया, बस यह सोच लिया, इन्शा अल्लाह तवाज़ो हासिल हो गयी, और जब तवाज़ो हासिल हो जायेगी तो उस पर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का वादा है कि:

"من تواضع لله رفعه الله"

यानी जो शख़्स अल्लाह के लिए तवाज़ो इख़्तियार करता है तो अल्लाह तआला उसको बुलन्दी अता फ़रमा देते हैं।

खुलासा

एक बात और समझ लें, वह यह कि तवाज़ो अगरचे दिल का अमल है कि आदमी अपने आपको दिल में बे हक़ीक़त समझे, लेकिन दिल में यह बात हाज़िर रखने के लिए आदमी अमलन यह करे कि किसी भी काम से अपने आपको बुलन्द न समझे, और किसी भी काम में शर्म न हो, यह न सोचे कि यह काम मेरे मर्तबे का नहीं बल्कि हर छोटे छोटे अमल के लिए भी तैयार रहे, दूसरे यह कि आदमी अपने उठने बैठने और रहन सेहन में, और अन्दाज़ व अदा में, चलने फिरने में ऐसा तरीक़ा इख़्तियार करे, जिसमें तकब्बुर न हो, बल्कि आजिज़ी और इन्किसारी हो, अगरचे सारी तवाज़ो इस पर मुन्हसिर नहीं लेकिन यह भी तवाज़ो के हासिल करने का एक तरीक़ा है। जिसका खुलासा यह है कि ज़ाहिरी अफ़आल के अन्दर भी आदमी आजज़ी और इन्किसारी इख़्तियार करे, इसलिये कि अगर यह कर लिया तो फिर इन्शा अल्लाह दिल में भी तवाज़ो पैदा हो जायेगी। अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल से हमारे अन्दर भी तवाज़ो पैदा फ़रमा दे, आमीन।

واخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

हसद एक समाजी नासूर

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا. اَمَّا بَعْدُ:

عن ابی هريرة رضی الله تعالیٰ عنه ان النبی صلی الله عليه وسلم قال: ايکم والحسد فان الحسد يأكل الحسنات كما تأكل النار الحطب، اوقال: العشب۔ (ابوداؤد شريف)

"हसद" एक अन्दरूनी बीमारी है

जिस तरह अल्लाह तआला ने हमारे लिए ज़ाहिरी आमाल में कुछ चीज़ें फ़र्ज़ व वाजिब क़रार दी हैं, और कुछ चीज़ें गुनाह क़रार दी हैं, इसी तरीक़े से हमारे अन्दरूनी आमाल में बहुत से आमाल फ़र्ज़ हैं, और बहुत से आमाल गुनाह और हराम हैं। उनसे बचना और परहेज़ करना भी उतना ही ज़रूरी है जितना ज़ाहिर के बड़े गुनाहों से बचना ज़रूरी है, इनमें से कुछ का बयान पिछले जुमों में हो गया है। आज इसी सिलसिले में बातिन की (अन्दरूनी) एक और ख़तरनाक बीमारी का ज़िक्र करना मक़सूद है, वह बीमारी है "हसद" और यह हदीस जो अभी मैंने आपके सामने तिलावत की है, इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसी बीमारी का ज़िक्र फ़रमाया है। जिसका तर्जुमा यह है कि हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु रिवायत करते हैं कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि हसद से बचो, इसलिये कि यह हसद इन्सान की नेकियों को इस तरह खा जाता है जैसे आग लकड़ी को या सूखी घास को खा जाती है, हदीस को रिवायत करने वाले को

शक है कि आपने लकड़ी का लफ़्ज़ फ़रमाया था या सूखी घास का लफ़्ज़ फ़रमाया था। यानी जिस तरह आग सूखी लकड़ी को या सूखी घास को लग जाए तो वह भस्म कर डालती है, ख़त्म कर देती है, इसी तरह अगर किसी शख़्स में हसद की बीमारी हो तो वह उसकी नेकियों को खा जाती है।

हसद की आग सुलगती रहती है

एक आग तो वह होती है जो बहुत बड़ी होती है। जो मिन्टों में सब कुछ जला कर ख़त्म कर देती है। और एक आग वह होती है जो हलके हलके सुलगती रहती है। अगर वह आग किसी को लग जाए तो वह एक दम से उसको जला कर ख़त्म नहीं करेगी, बल्कि वह आहिस्ता आहिस्ता सुलगती रहेगी, और थोड़ा थोड़ा करके उसको खाती रहेगी। यहां तक कि वह सारी लकड़ी ख़त्म होकर राख बन जायेगी। इसी तरह हसद एक ऐसी बीमारी और एक ऐसी आग है जो धीरे धीरे सुलगती चली जाती है, और इन्सान की नेकियों को फ़ना कर डालती है, और इन्सान को पता भी नहीं चलता कि मेरी नेकियां ख़त्म हो रही हैं। इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हसद से बचने की ताकीद फ़रमाई।

हसद से बचना फ़र्ज़ है

लेकिन अगर हम अपने मुआ़शरे (समाज) और माहौल पर नज़र दौड़ा कर देखें तो हमें नज़र आयेगा कि यह हसद की बीमारी मुआ़शरे के अन्दर छाई हुई है और बहुत कम अल्लाह के बन्दे ऐसे हैं जो इस बीमारी से बचे हुए हैं, और इस से पाक हैं, वरना किसी न किसी दर्जे में हसद का दिल में गुज़र हो जाता है। और इस से बचना फ़र्ज़ है। इस से बचे बग़ैर गुज़ारा नहीं, लेकिन हमारा इस तरफ़ ध्यान और ख़्याल भी नहीं जाता कि हम इस बीमारी के अन्दर मुब्तला हैं, इसलिये इस से बचने के लिए बहुत एहतिमाम की ज़रूरत

है।

पहले यह समझ लें कि हसद की हक़ीक़त क्या है? और इसकी क़िस्में कौन कौन सी हैं? और इसके अस्बाब क्या हैं। और इसका इलाज क्या है? ये चार बातें आज के बयान का मौज़ू हैं, अल्लाह तआला इस बयान को हमारे दिलों से इस बीमारी के ख़त्म करने का ज़रिया बना दें, आमीन।

हसद की हक़ीक़त

हसद की हक़ीक़त यह है कि एक शख़्स ने दूसरे को देखा कि उसको कोई नेमत मिली हुई है, चाहे वह नेमत दुनिया की हो या दीन की, उस नेमत को देख कर उसके दिल में जलन और कुढ़न पैदा हुई कि उसको यह नेमत क्यों मिल गई, और दिल में यह ख़्वाहिश हुई कि यह नेमत उस से छिन जाए तो अच्छा है, यह है हसद की हक़ीक़त।

जैसे अल्लाह तआला ने किसी बन्दे को माल व दौलत दिया, या किसी को सेहत की दौलत दी, या किसी को शोहरत दी, या किसी को इज़्ज़त दी, या किसी को इल्म दिया, अब दूसरे शख़्स के दिल में यह ख़्याल पैदा हो रहा है कि यह नेमत उसको क्यों मिली? उस से यह नेमत छिन जाए तो बेहतर है, और उसके ख़िलाफ़ कोई बात आती है तो वह उस से ख़ुश होता है, और अगर उसकी तरक़्क़ी सामने आती है तो उस से दिल में रंज और अफ़सोस होता है कि यह क्यों आगे बढ़ गया, इसका नाम हसद है।

अब अगर हसद की इस हक़ीक़त को सामने रख कर ग़ौर करोगे तो यह नज़र आयेगा कि हसद करने वाला हक़ीक़त में अल्लाह तआला की तक़्दीर पर एतिराज़ कर रहा है कि अल्लाह तआला ने यह नेमत उसको क्यों दी? यह तो अल्लाह तआला के फ़ैसले पर एतिराज़ कर रहा है, क़ादिरे मुत्लक़ पर एतिराज़ कर रहा है कि यह

नेमत किसी तरह उस से छिन जाए। इसी वजह से उसकी संगीनी और ख़तरनाकी बहुत ज़्यादा है।

"रश्क" करना जायज़ है

यहां यह बात समझ लें कि कभी कभी ऐसा होता है कि दूसरे शख़्स को एक नेमत हासिल हुई, अब इसके दिल में यह ख़्वाहिश हो रही है कि मुझे भी यह नेमत हासिल हो जाए तो अच्छा है, यह हसद नहीं है, बल्कि यह "रश्क" है, अ़र्बी में इसको "ग़िब्ता" कहा जाता है, और कभी कभी अ़र्बी ज़बान में इस पर "हसद" का लफ़्ज़ बोल दिया जाता है, लेकिन हक़ीक़त में यह हसद नहीं। जैसे किसी शख़्स का अच्छा मकान देख कर दिल में यह ख़्वाहिश पैदा हुई कि जिस तरह इस शख़्स का मकान अराम देह और अच्छा बना हुआ है, मेरा भी ऐसा मकान हो जाए, या जैसी नौकरी इसको मिली हुई है, मुझे भी ऐसी नौकरी मिल जाए, या जैसा इल्म अल्लाह तआ़ला ने उसको दिया है, ऐसा इल्म अल्लाह तआ़ला मुझे भी अ़ता फ़रमा दे, यह हसद नहीं बल्कि रश्क है, इस पर कोई गुनाह नहीं, लेकिन जब उसकी नेमत के ख़त्म होने की ख़्वाहिश दिल में पैदा हो कि यह नेमत उस से छिन जाए तो अच्छा है, यह हसद है।

हसद के तीन दर्जे

फिर हसद के तीन दर्जे हैं। पहला दर्जा यह है कि दिल में यह ख़्वाहिश हो कि मुझे भी ऐसी नेमत मिल जाए, अब अगर उसके पास रहते हुए मिल जाए तो अच्छा है, वरना उस से छिन जाए, और मुझे मिल जाए। यह हसद का पहला दर्जा है। हसद का दूसरा दर्जा यह है कि जो नेमत दुसरे को मिली हुई है, वह नेमत उस से छिन जाए, और मुझे मिल जाए। इसमें पहले क़दम पर यह ख़्वाहिश है कि उस से वह छिन जाए, और दूसरे क़दम पर यह ख़्वाहिश है कि मुझे मिल जाए। यह हसद का दूसरा दर्जा है। हसद का तीसरा दर्जा यह है कि दिल में यह ख़्वाहिश हो कि यह उस से किसी तरह छिन जाए,

और उस नेमत की वजह से उसको जो इम्तियाज़ और जो मक़ाम हासिल हुआ है, उस से वह महरूम हो जाए। फिर चाहे वह नेमत मुझे मिले या न मिले। यह हसद का घटिया तरीन, ज़लील तरीन, ख़बीस तरीन दर्जा है। अल्लाह तआला हम सब को इस से महफ़ूज़ रखे, आमीन।

सब से पहले हसद करने वाला

सब से पहले हसद करने वाला इब्लीस (शैतान) है, जब अल्लाह तआला ने हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को पैदा किया, तो अल्लाह तआला ने यह ऐलान फ़रमाया कि मैं इसको ज़मीन में ख़िलाफ़त अता करूंगा, अपना ख़लीफ़ा बनाऊंगा। और हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को यह मक़ाम अता फ़रमाया कि फ़रिश्तों को हुक्म दिया कि आदम को सज्दा करो। बस यह हुक्म सुन कर यह इब्लीस जल गया कि उनको यह मक़ाम मिल गया, और मुझे न मिला। और इसके नतीजे में सज्दा करने से इन्कार कर दिया। इसलिए सब से पहले हसद करने वाला भी शैतान है, और सब से पहले तकब्बुर करने वाला भी शैतान है।

हसद करने का लाज़मी नतीजा

और इस हसद का एक लाज़मी नतीजा यह होता है कि जिस से हसद किया जा रहा है, अगर उसको कोई तक्लीफ़ पहुंच जाए, या उसको कोई रंज या ग़म पहुंच जाए तो यह हसद करने वाला उसकी तक्लीफ़ और उसके रंज व ग़म से खुश होता है, और उसकी तरक़्क़ी हो जाए, या उसको कोई नेमत मिल जाए तो उस से इसको रंज होता है। और दूसरों की तक्लीफ़ पर ख़ुशी होने को अर्बी में "शमातत" कहते हैं, यह भी हसद की एक क़िस्म है, क़ुरआन व हदीस में कई जगहों पर इसकी मज़म्मत (बुराई) आई है, क़ुरआने करीम में इर्शाद है:

"اَمْ يَحْسُدُوْنَ النَّاسَ عَلٰى مَآ اٰتٰهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ" (النساء:٥٤)

यानी क्या लोग दूसरों पर हसद करते हैं कि अल्लह तआ़ला ने अपनी नेमत दूसरों को अ़ता कर दी। अब ये लोग उस पर हसद कर रहे हैं, और जल रहे हैं।

हसद के दो सबब हैं

इस हसद की बीमारी का सबब क्या होता है? और यह बीमारी क्यों दिल में पैदा होती है? इसके दो सबब होते हैं। इसका एक सबब दुनिया के माल व दौलत की मुहब्बत है, और ओहदे की मुहब्बत है, इसलिये कि इन्सान हमेशा यह चाहता है कि मेरा मर्तबा बुलन्द रहे, मैं ऊंचा रहूं। अब अगर कोई शख़्स आगे बढ़ता है तो यह उसको गिराने की फ़िक्र करता है। और इस बीमारी का दूसरा सबब "बुग़्ज़" और "कीना" है। जैसे किसी से दिल में बुग़्ज़ और कीना पैदा हो गया, और उस बुग़्ज़ के नतीजे में उसकी राहत से तक्लीफ़ होती है, और उसकी खुशी से रंज होता है। जब दिल में ये दो बातें होंगी तो उसके नतीजे में लाज़मी तौर पर हसद पैदा होगा।

हसद दुनिया व आख़िरत में हलाक करने वाला है

यह हसद ऐसी बीमारी है जो कि आख़िरत में इन्सान को हलाक करने वाली है, बल्कि दुनिया के अन्दर भी इन्सान के लिए हलाकत का सबब है, इसलिये कि इसके ज़रिये दुनिया का भी नुक़्सान और आख़िरत का भी नुक़्सान। इसलिये कि जो शख़्स दूसरे से हसद करेगा, वह हमेशा तक्लीफ़ और घुटन में रहेगा। इसलिये कि जब भी दूसरे को आगे बढ़ता हुआ देखेगा, तो उसको देख कर दिल में रंज और ग़म और घुटन पैदा होगी, और उस घुटन के नतीजे में वह रफ़्ता रफ़्ता अपनी सेहत को भी ख़राब कर लेगा।

हासिद हसद की आग में जलता रहता है

अ़र्बी का एक शेर है। जिसका मतलब यह है कि हसद की मिसाल आग जैसी है, और आग की ख़ासियत है कि जब तक उसको दूसरी चीज़ खाने को मिले तब तक यह उसको खाती रहेगी। जैसे

लकड़ी को आग लगी हुई है, तो वह आग लकड़ी को खाती रहेगी। लेकिन जब लकड़ी ख़त्मा हो जायेगी तो फिर आग का एक हिस्सा खुद उसके दूसरे हिस्से को खाना शुरू कर देगा। यहां तक कि वह आग भी ख़त्म हो जायेगी। इसी तरह हसद की आग भी ऐसी है कि हसद करने वाला पहले तो दूसरे को ख़राब करने और दूसरे को नुक़्सान पहुंचाने की कोशिश करता है। लेकिन जब दूसरे को नुक़्सान नहीं पहुंचा सकता तो फिर हसद की आग में खुद जल जल कर ख़त्म हो जाता है।

हसद का इलाज

इस हसद की बीमारी का इलाज यह है कि वह शख़्स यह तसव्वुर करे कि अल्लाह तआ़ला ने इस कायनात में अपनी ख़ास हिक्मतों और मस्लिहतों से इन्सानों के दर्मियान अपनी नेमतों की तक़्सीम फ़रमाई है, किसी को कोई नेमत देदी, किसी को कोई नेमत देदी। किसी को सेहत की नेमत देदी तो किसी को माल व दौलत की नेमत देदी, किसी को इज़्ज़त की नेमत देदी, तो किसी को हुस्न व ख़ूबसूरती की नेमत देदी, किसी को चैन व सुकून की नेमत देदी। और इस दुनिया में कोई इन्सान ऐसा नहीं है जिसको कोई न कोई नेमत मयस्सर न हो, और किसी न किसी तक्लीफ़ में मुब्तला न हो।

तीन आ़लम

इसलिये कि अल्लाह तआ़ला ने इस कायनात में तीन आ़लम पैदा फ़रमाये हैं। एक आ़लम वह है जिस में राहत ही राहत है। तक्लीफ़ का गुज़र नहीं। रंज व ग़म का नाम व निशान नहीं, वह है जन्नत का आ़लम, अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल व करम से हमें भी वहां पहुंचा दे, आमीन। वहां तो राहत ही राहत और आराम ही आराम है। और एक आ़लम बिल्कुल इसके उलट है, जिसमें तक्लीफ़ ही तक्लीफ़ है, ग़म ही ग़म है, सदमा ही सदमा है। राहत और ख़ुशी का वहां गुज़र और नाम व निशान नहीं, वह है जहन्नम का आ़लम,

अल्लाह तआला हम सब को इस से महफ़ूज़ रखे, आमीन। तीसरा आलम वह है जो दोनों से मिला जुला है, जिस में खुशी भी है, ग़म भी है, राहत भी है तक्लीफ़ भी है। वह है यह आलमे दुनिया, जिस में हम और आप जी रहे हैं, इस आलमे दुनिया के अन्दर कोई इन्सान ऐसा नहीं मिलेगा जो यह कहे कि मुझे सारी ज़िन्दगी कभी कोई तक्लीफ़ पेश नहीं आई, और न कोई ऐसा मिलेगा जिसको कभी कोई राहत और खुशी हासिल न हुई हो। यहां पर हर खुशी के अन्दर रंज का कांटा लगा हुआ है, और हर तक्लीफ़ के अन्दर राहत भी छुपी हुई है, न यहां की राहत ख़ालिस है और न यहां की तक्लीफ़ ख़ालिस है।

हक़ीक़ी राहत किस को हासिल है?

बहर हाल, अल्लाह तआला ने अपनी हिक्मत और मस्लिहत से सारा आलम पैदा फ़रमाया, और फिर उसमें किसी को कोई नेमत देदी, किसी को कोई नेमत देदी। किसी को माल व दौलत की नेमत देदी, तो दूसरे को उसके मुक़ाबले में सेहत की नेमत देदी, अब माल व दौलत वाला सेहत वाले पर हसद कर रहा है कि उसको इतना माल व दौलत क्यों मिल गया? लेकिन हक़ीक़त में ये तक़्दीर के फ़ैसले हैं, और उसी की हिक्मत और मस्लिहत पर मब्नी (आधारित) हैं, और कोई भी इन्सान दूसरे के बारे में कुछ नहीं कह सकता कि कौन सा इन्सान इस दुनिया में ज़्यादा राहत में है। देखने में कभी कभी ऐसा मालूम होता है कि एक आदमी के बहुत सारे कारख़ाने चल रहे हैं, बंगले खड़े हैं, कारें हैं, नौकर चाकर हैं, और दुनिया भर का ऐश व आराम का सामान मयस्सर है, और दूसरी तरफ़ एक मज़्दूर है, जो सुबह व शाम तक पत्थर ढोता है, और मुश्किल से अपने पेट भरने का सामान करता है, अब अगर यह मज़्दूर उस माल व दौलत वाले इन्सान को देखेगा तो यही सोचेगा कि इसको दुनिया में बहुत बड़ी बड़ी दौलतें मयस्सर हैं, लेकिन अगर साथ साथ उन

दोनों की अन्दरूनी ज़िन्दगी में झांक कर देखेंगे तो मालूम होगा कि जिस शख़्स की मिलें खड़ी हैं, जिसके पास बंगले और कारें हैं, और जिसके पास बेशुमार माल व दौलत और ऐश व आराम का सामान है, उसका यह हाल है कि रात को जब बिस्तर पर सोते हैं तो साहिब बहादुर को उस वक़्त तक नींद नहीं आती, जब तक कि नींद की कोई गोली न खायें। और हाल यह है कि उनके दस्तरख़्वान पर क़िस्म क़िस्म के एक से एक खाने चुने हुए हैं। फल मौजूद हैं, लेकिन मेदा (पेट) इतना ख़राब है कि एक दो लुक़्मे भी क़ुबूल करने को तैयार नहीं, इसलिये कि मेदे में अल्सर है, और उसकी वजह से डा० ने मना कर दिया है कि फ़लां चीज़ भी मत खाओ, फ़लां चीज़ भी मत खाओ। अब सारी नेमतें, सारी ग़िज़ाएं इसके लिये बेकार हैं। अब आप बतायें कि वह शख़्स ज़्यादा राहत में है जिसके पास दुनिया के सारे साज़ो सामान तो मयस्सर हैं लेकिन नींद से महरूम है, खाने से महरूम है, और एक मज़्दूर है, आठ घन्टे की सख़्त ड्यूटी देने के बाद साग रोटी और चटनी रोटी ख़ूब भूख लगने के बाद लज़्ज़त और मज़े के साथ खाता है, और जब बिस्तर पर सोता है तो फ़ौरन नींद की गोद में चला जाता है, और आठ दस घन्टे तक भर पूर नींद करके उठता है। बताइये कि इन दोनों में से राहत के अन्दर कौन है? हक़ीक़ी राहत किस को हासिल है? अगर ग़ौर से देखोगे तो यह नज़र आयेगा कि अल्लाह तआला ने पहले शख़्स को दुनिया के अस्बाब और सामान बेशक अता किये हैं, लेकिन हक़ीक़ी राहत उस दूसरे शख़्स को अता फ़रमाई है, यह सब अल्लाह तआला की हिक्मत के फ़ैसले हैं।

"रिज़्क़" एक नेमत "खिलाना" दूसरी नेमत

मेरे वालिद माजिद रहमतुल्लाहि अलैहि अल्लाह तआला उनके दरजों को बुलन्द फ़रमाए, आमीन। एक बार फ़रमाने लगे कि खाना

खाने के बाद जो यह दुआ पढ़ी जाती है कि:

"الحمد لله الذی اطعمنی هذا ورزقنيه من غير حول منی ولا قوة، غفرله ما تقدم من ذنبه" (ترمذی شریف)

यानी अल्लाह तआला का शुक्र है कि जिसने मुझे यह खाना खिलाया, और मुझे यह रिज़्क़ बग़ैर मेरी कोशिश और ताक़त के अता फ़रमाया।

जो शख़्स खाने के बाद यह दुआ पढ़े तो अल्लाह तआला उसके तमाम पिछले (छोटे) गुनाह माफ़ फ़रमा देते हैं।

फिर वालिद साहिब ने फ़रमाया कि इस रिवायत में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दो लफ़्ज़ अलग अलग ज़िक्र फ़रमाये हैं। एक "र–ज़–क़नीहि" और दूसरे "अतअ–मनी" यानी अल्लाह तआला ने मुझे रिज़्क़ दिया, और यह खाना खिलाया, अब सवाल पैदा यह होता है कि जब दोनों लफ़्ज़ों का मतलब एक है, यानी रिज़्क़ दिया और खाना खिलाया, तो फिर दोनों को अलग अलग क्यों ज़िक्र फ़रमाया? एक ही लफ़्ज़ का बयान कर देना काफ़ी था? फिर ख़ुद ही जवाब दिया कि दोनों बातें अलग अलग हैं। इसलिये कि रिज़्क़ हासिल होना एक मुस्तक़िल नेमत है, और खाना खिलाना दूसरी नेमत है। इसलिये कि कभी कभी रिज़्क़ हासिल होने की नेमत तो हासिल होती है कि घर में आला दर्जे के खाने पके हुए हैं तैयार हैं, और हर तरह के फल फ़रूट मौजूद हैं, लेकिन भूख नहीं लग रही है, मेदा ख़राब है, और डा० ने खाने से मना किया हुआ है। अब इस सूरत में "र–ज़–क़ना" हासिल है, लेकिन "अतअ–मना" हासिल नहीं है, अल्लाह ने रिज़्क़ दे रखा है लेकिन खाने की सलाहियत और हाज़मे की क़ुव्वत नहीं दी। बहर हाल, इसमें अल्लाह तआला की हिक्मतें और मस्लिहतें हैं कि किसी को कोई नेमत अता फ़रमा दी, और किसी को कोई नेमत अता फ़रमा दी।

अल्लाह की हिक्मत के फ़ैसले

इसलिये हसद का इलाज यह है कि हसद करने वाला यह सोचे कि अगर दूसरे शख़्स को कोई बड़ी नेमत हासिल है, और उसकी वजह से दिल में कुढ़न पैदा हो रही है, तो कितनी नेमतें ऐसी हैं जो अल्लाह तआला ने तुम्हें दे रखी हैं, और उस शख़्स को नहीं दीं। हो सकता है कि अल्लाह तआला ने तुम्हें उस से बेहतर सेहत अता फ़रमाई हो। हो सकता है कि अल्लाह तआला ने हुस्न व ख़ूबसूरती उस से ज़्यादा अता फ़रमाई हो, या कोई और नेमत अल्लाह तआला ने तुम्हें अता फ़रमाई हो, और उसको वह नेमत मयस्सर न हो। इसलिये इन नेमतों की तक़सीम में अल्लाह तआला की हिक्मत और मस्लिहत होती है कि इन्सान को पता नहीं चलता। इन बातों को सोचने से हसद की बीमारी में कमी आती है।

उर्दू की एक कहावत

यह जो उर्दू के अन्दर कहावत मशहुर है कि "अल्लाह तआला गन्जे को नाख़ुन न दे" यह बड़ी हकीमाना कहावत है। जिसका मतलब यह है कि अगर तुम्हें माल व दौलत की नेमत हासिल नहीं है, अगर तुमको मिल जाती तो न जाने तुम उसकी वजह से क्या फ़साद बर्पा करते, और किस अज़ाब में मुब्तला हो जाते। और उसकी कैसी ना क़दरी करते, और तुम्हारा क्या हश्र बनता, अब अगर अल्लाह तआला ने ये नेमतें तुम्हें नहीं दी हैं तो किसी मस्लिहत की वजह से नहीं दी हैं। इसी वजह से क़ुरआने करीम में अल्लाह तआला ने फ़रमाया:

"وَلَا تَتَمَنَّوْا مَا فَضَّلَ اللّٰهُ بِهٖ بَعْضَكُمْ عَلٰى بَعْضٍ" (النساء: ۳۲)

यानी अल्लाह तआला ने तुम में से कुछ को कुछ पर जिन चीज़ों में फ़ज़ीलत दे दी है तुम उन चीज़ों की तमन्ना मत करो, क्यों? इसलिये कि तुम्हें क्या मालूम कि अगर तुम को वह नेमत हासिल हो गयी तो तुम क्या फ़साद बर्पा करोगे, वाक़िआत आपने सुने होंगे कि

एक आदमी तमन्ना करता रहा कि फ़लां नेमत मुझे मिल जाए, मगर जब वह नेमत मिल गयी तो वह बजाए मुफ़ीद होने के उसके लिए नुक़्सान देने वाली साबित हुई। इसलिये सब से पहले यह सोचना चाहिए कि यह जो दूसरे शख़्स को नेमत मिल जाने पर दिल जल रहा है, यह हक़ीक़त में अल्लाह तआ़ला की तक़्दीर पर एतिराज़ है और उसकी मस्लिहत से बे-ख़बरी का नतीजा है, और हो सकता है कि तुम्हें उस से बड़ी कोई नेमत मयस्सर हो, जो उसको हासिल नहीं।

अपनी नेमतों की तरफ़ नज़र करो

और यह सारी ख़राबी इस से पैदा होती है कि इन्सान अपनी तरफ़ देखने के बजाए दूसरों की तरफ़ देखता है। ख़ुद अपने को जो नेमतें हासिल हैं, उनका तो ध्यान और ख़्याल ही नहीं, और उन पर अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करने की तौफ़ीक़ नहीं, मगर दूसरों की नेमतों की तरफ़ देख रहा है, इसी तरह अपने ऐबों की तरफ़ तो नज़र नहीं मगर दूसरे के ऐब तलाश कर रहा है। अगर इन्सान अपने ऊपर अल्लाह तआ़ला की हर वक़्त नाज़िल होने वाली नेमतों का ख़्याल करे, तो फिर दूसरे पर कभी हसद न करे, तुम कैसी भी हालत में हो, फिर भी अल्लाह तआ़ला ने तुम्हें नेमतों की ऐसी बारिश में रखा है, और सुबह से शाम तक तुम्हारे ऊपर नेमतों की बारिश बरसा रहा है कि अगर तुम उसका तसव्वुर करते रहो तो दूसरों की नेमत पर कभी जलन पैदा न हो।

हमेशा अपने से कम्तर को देखो

आज कल हमारे मुआ़शरे (समाज) में लोगों को दूसरों के मामलात में तहक़ीक़ और तफ़्तीश करने का बड़ा ज़ौक़ है, जैसे फ़लां आदमी के पास पैसे किस तरह आ रहे हैं? कहां से आ रहे हैं? वह कैसा मकान बनवा रहा है? वह कैसी कार ख़रीद रहा है, उसके

हालात कैसे हैं, एक एक का जायज़ा लेने की फ़िक्र है, और इस तफ़्तीश और तहक़ीक़ का नतीजा यह होता है कि जब कोई ऐसी चीज़ सामने आती है जो खुशनुमा और दिल्कश है, लेकिन अपने पास मौजूद नहीं, तो फिर उस से हसद पैदा नहीं होगा तो और क्या होगा, इसलिये वह कहावत याद रखने के क़ाबिल है जो पहले भी अर्ज़ कर चुका हूं कि:

"दुनिया के मामले में हमेशा अपने से नीचे वाले को और अपने से कम्तर को देखो, और दीन के मामले में हमेशा अपने से ऊपर वाले को देखो"।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुबारक रह० और राहत

चुनांचे हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुबारक रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि मैं एक लम्बी मुद्दत तक मालदारों के मौहल्ले में रहा, और उनके साथ उठता बैठता रहा। तो उस ज़माने में मुझ से ज़्यादा रंजीदा और ग़मज़दा कोई नहीं था। इसलिये कि जिसको भी देखता हूं तो यह नज़र आता है कि उसका कपड़ा मेरे कपड़े से उम्दा है। उसकी सवारी मेरी सवारी से आला है। उसका मकान मेरे मकान से आला है। इसका नतीजा यह निकला कि हर वक़्त इस ग़म में मुब्तला रहता था कि उसको तो ये नेमतें हासिल हैं, मुझे हासिल नहीं, इसलिये मुझ से ज़्यादा ग़मज़दा इन्सान कोई नहीं था। लेकिन उसके बाद मैंने अपनी रिहाइश ऐसे लोगों के मौहल्ले में इख़्तियार कर ली जो दुनिया के एतिबार से फ़क़ीर और कम हैसियत के लोग थे, और उनके साथ उठना बैठना शुरू किया तो इसके नतीजे में मैं आराम में आ गया, इसलिये कि यहां मामला बिल्कुल उलट था। इसलिये कि जिसको भी देखता हूं तो यह नज़र आता है कि मेरा लिबास उसके लिबास से उम्दा है। मेरी सवारी उसकी सवारी से आला है। मेरा मकान उसके मकान से अच्छा है। चुनांचे इसके नतीजे में अल्लाह तआला ने मुझे दिली राहत अता फ़रमा दी।

ख़्वाहिशात ख़त्म होने वाली नहीं

याद रखो, कोई इन्सान अगर दुनिया के अस्बाब जमा करने में आगे बढ़ता चला जाए तो उसकी कोई इन्तिहा नहीं है:

कारे दुनिया कसे तमाम न कर्द

"दुनिया का मामला कभी पूरा नहीं होता" इस दुनिया के अन्दर जो सब से ज़्यादा मालदार इन्सान हो, उस से जाकर पूछो कि क्या तुम्हें सब चीज़ें हासिल हो गयी हैं? अब तो तुम्हें कुछ नहीं चाहिए? वह जवाब में यही कहेगा कि अभी तो मुझे और चाहिए। वह भी इस फ़िक्र में नज़र आयेगा कि इस माल में इज़ाफ़ा हो जाए। मुतनब्बी अ़र्बी ज़ाबन का बड़ा शायर है, उसने दुनिया के बारे में बड़ी हकीमाना बात कही है, वह यह है कि:

وما قضى احد منها لبانته ولا انتهى ارب الا الى ارب

(دیوان متنبی)

यानी इस दुनिया से आज तक किसी का पेट नहीं भरा, जब कोई ख़्वाहिश तुम पूरी करोगे तो उसके बाद दूसरी ख़्वाहिश पैदा हो जायेगी, हर ख़्वाहिश एक नई ख़्वाहिश को जन्म देती है, और हर ज़रूरत एक नई ज़रूरत को जन्म देती है।

यह अल्लाह की तक़्सीम है

कहां तक हसद करोगे? कहां तक दूसरों की नेमतों पर ग़मज़दा होगे? इसलिये कि यह बात पेश आयेगी कि कोई शख़्स किसी नेमत में तुम से आगे बढ़ा हुआ नज़र आयेगा, और कोई शख़्स किसी दूसरी चीज़ में तुम से बढ़ा हुआ नज़र आयेगा, इसलिये सब से ज़्यादा इस बात का तसव्वुर करने की ज़रूरत है कि यह अल्लाह तआ़ला की तक़्सीम है। और अल्लाह तआ़ला ने इन चीज़ों को अपनी हिक्मत और मस्लिहत से तक़्सीम फ़रमाया है, और उस मस्लिहत और हिक्मत को तुम समझ भी नहीं सकते हो। इसलिये कि तुम बहुत महदूद (सीमित) दायरे में सोचते हो। तुम्हारी अ़क़्ल महदूद, तुम्हारा

सोचने का दायरा महदूद, इस महदूद दायरे में तुम सोचते हो, इसके मुक़ाबले में अल्लाह तआला की कामिल हिक्मत पूरी कायनात को घेरे हुए है, वह यह फ़ैसले फ़रमाते हैं कि किस को क्या चीज़ देनी है, और किस को क्या चीज़ नहीं देनी है? बस इस पर ग़ौर करोगे तो इसके ज़रिये हसद का माद्दा ख़त्म होगा, और हसद की बीमारी में कमी आयेगी।

हसद का दूसरा इलाज

इस हसद की बीमारी का एक दूसरा असर दार इलाज है, वह यह कि हसद करने वाला यह सोचे कि मेरी ख़्वाहिश तो यह है कि जिस शख़्स से मैं हसद कर रहा हूं उस से वह नेमत छिन जाए, लेकिन मामला हमेशा मेरी इस ख़्वाहिश के उलट होता है, चुनांचे जिस से हसद किया है, उस शख़्स का तो फ़ायदा ही फ़ायदा है, दुनिया में भी और आख़िरत में भी, और हसद करने वाले का नुक़सान ही नुक़सान है। दुनिया में उसका फ़ायदा यह है कि जब तुमने दुनिया में उसको दुश्मन बना लिया, तो उसूल यह है कि दुश्मन की ख़्वाहिश यह होती है कि मेरा दुश्मन हमेशा रंज व ग़म में मुब्तला रहे। इसलिये जब तक तुम हसद करोगे, रंज व ग़म में मुब्तला रहोगे, वह इस बात से ख़ुश होता रहेगा कि तुम रंज व ग़म में मुब्तला हो। यह तो उसको दुनियावी फ़ायदा है। और आख़िरत का फ़ायदा यह है कि तुम उस से जितना हसद करोगे उतना ही उसके नामा–ए–आमाल के अन्दर नेकियों में इज़ाफ़ा होगा, और वह चूंकि मज़्लूम है, इसलिये आख़िरत में उसके दर्जे बुलन्द होंगे, और हसद की लाज़मी ख़ासियत है कि यह हसद इन्सान को ग़ीबत पर, ऐब तलाश करने, चुग़ल ख़ोरी और बेशुमार गुनाहों पर आमादा करता है, और इसका नतीजा यह होता है कि ख़ुद हसद करने वाले की नेकियां उसके नामा–ए–आमाल में चली जाती हैं। इसलिये कि जब तुम उसकी ग़ीबत करोगे, उसके लिए बद्–दुआ करोगे तो तुम्हारी नेकियां उसके

नामा-ए-आमाल में चली जायेंगी। जिसका मतलब यह है कि तुम जितना हसद कर रहे हो, अपनी नेकियों के पैकिट तैयार करके उसके पास भेज रहे हो। तो उसका फायदा हो रहा है, अब अगर सारी उमर हसद करने वाला हसद करेगा तो वह अपनी सारी नेकियां गंवा देगा, और उसके नामा-ए-आमाल में डाल देगा।

एक बुजुर्ग का वाकिआ

एक बुजुर्ग का वाकिआ लिखा है कि एक बार एक साहिब ने आप से कहा कि हज़रत फलां आदमी आपको बुरा भला कह रहा था। आप सुन कर ख़ामोश हो गये, कुछ जवाब नहीं दिया, जब मज्लिस ख़त्म हो गयी तो घर तश्रीफ़ ले गये, और जिस ने आपकी बुराई बयान की थी, उसके लिए एक बहुत बड़ा तोहफा तैयार करके उसके घर भेज दिया। लोगों ने कहा कि हज़रत वह तो आपको बुरा भला कह रहा था, और आपने उसको हदिया भेज दिया? उन बुज़ुर्ग ने फ़रमाया कि वह मेरा मुहसिन है, इसलिये कि उसने मेरी बुराई बयान करके मेरी नेकियों में इज़ाफ़ा कर दिया है। उसने मुझ पर बड़ा एहसान किया है, अब मैं कुछ तो उसके एहसान का बदला दे दूं। उसने तो मेरी आख़िरत की नेकियों में इज़ाफ़ा किया है। मैं कम से कम दुनिया ही में उसको हदिया दे दूं।

इमाम अबू हनीफ़ा रह० का ग़ीबत से बचना

और यह बात मशहूर है कि हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अलैहि की मज्लिस में कोई शख़्स किसी की ग़ीबत नहीं कर सकता था। इसलिये कि वह न ग़ीबत करते थे और न ग़ीबत सुनते थे, उनकी मज्लिस हमेशा ग़ीबत से ख़ाली होती थी। एक दिन इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अलैहि ने अपने शागिर्दों के सामने ग़ीबत और हसद की बुराई बयान की, और उनको समझाने के लिए कि ग़ीबत से नेकियां चली जाती हैं, फ़रमाने लगे कि यह ग़ीबत ऐसी चीज़ है कि जो ग़ीबत करने वाले की नेकियों को उस शख़्स की

तरफ़ मुन्तकिल कर देती है, जिसकी ग़ीबत की गयी है, इसलिये मैं कभी ग़ीबत नहीं करता, लेकिन अगर कभी मेरे दिल में यह ख़्याल आए कि मैं ग़ीबत करूं तो मैं अपने मां बाप की ग़ीबत करूं, इसलिये कि अगर ग़ीबत के नतीजे में मेरी नेकियां जायेंगी तो मां बाप के नमा-ए-आमाल में जायेंगी, और घर की चीज़ घर में रहेगी, किसी ग़ैर के पास नहीं जायेगी।

इशारा इस बात की तरफ़ कर दिया कि यह ग़ीबत और हसद करने वाला अपने दिल में तो दूसरों की बुराई चाह रहा है, लेकिन हक़ीक़त में वह उसको दुनिया का भी फ़ायदा पहुंचा रहा है, और आख़िरत का भी फ़ायदा पहुंचा रहा है और अपना नुक़सान कर रहा है, इसलिये ग़ीबत करना और हसद करना कितनी अहमक़ाना हरकत है।

इमाम अबू हनीफ़ा का एक और वाक़िआ

हज़रत सुफ़ियान सौरी रहमतुल्लाहि अलैहि हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अलैहि के ज़माने के बुज़ुर्ग हैं। दोनों एक ही ज़माने में गुज़रे हैं। और दोनों के अपने अपने दर्स के हल्के हुआ करते थे। एक दिन हज़रत सुफ़ियान सौरी रहमतुल्लाहि अलैहि से किसी ने पूछा कि इमाम अबू हनीफ़ा के बारे में आपका क्या ख़्याल है? हज़रत सुफ़ियान सौरी रहमतुल्लाहि अलैहि ने जवाब में फ़रमाया कि वह बड़े बख़ील आदमी हैं, उस शख़्स ने कहा हमने तो उनके बारे में यह सुना है कि वह बड़े सख़ी हैं। हज़रत सुफ़ियान सौरी रहमतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि वह इतने बख़ील हैं कि अपनी नेकी किसी को देने के लिए तैयार नहीं, और दूसरों की नेकियां बहुत लेते रहते हैं। वह इस तरह कि लोग उनकी ग़ीबत करते रहते हैं, और उनकी बुराईयां बयान करते रहते हैं, जिसके नतीजे में लोगों की नेकियां उनके नामा-ए- आमाल में मुन्तकिल हो जाती हैं, और वह ख़ुद न तो ग़ीबत करते हैं और न ग़ीबत सुनते हैं। इसलिये अपनी

नेकियां किसी को देने के लिए तैयार नहीं, इसलिये आख़िरत के लिहाज़ से उन से ज़्यादा बख़ील आदमी कोई नहीं है।

हकीकत यह है कि जिस से हसद किया जाए, या जिस से बुग्ज़ रखा जाए, या जिसकी ग़ीबत की जाए, हकीकत में हसद करने वाला और ग़ीबत करने वाला अपनी नेकियों के पैकिट बना बना कर उसके पास भेज रहा है, और खुद ख़ाली हाथ होता जा रहा है।

हकीकी मुफ़्लिस कौन?

हदीस शरीफ़ में आता है कि एक बार हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम से पूछा कि बताओ मुफ़्लिस कौन है? सहाबा ने अर्ज़ किया कि मुफ़्लिस वह है जिसके पास पैसे न हों, आपने फ़रमाया कि नहीं यह हकीकी मुफ़्लिस नहीं। बल्कि हकीकी मुफ़्लिस वह है कि जो अपने नामा-ए-आमाल में बहुत सारी नेकियां, बहुत सारी नमाज़ें, बहुत सारे रोज़े, बहुत ज़िक्र व अज़कार और तस्बीहें लेकर दुनिया से जायेगा, लेकिन जब क़यामत के दिन अल्लाह तआला के पास हिसाब व किताब के लिए हाज़िर होगा तो वहां पर लोगों की भीड़ लगी होगी, एक कहेगा कि इसने मेरा फ़लां हक ज़ाया किया था। दूसरा कहेगा कि इसने मेरा फ़लां हक ज़ाया किया था। तीसरा कहेगा कि इसने मेरा फ़लां हक दबाया था, अब वहां की मुद्रा यह नोट तो होंगे नहीं कि उनको देकर हक पूरा कर दिया जाए। वहां की मुद्रा तो नेकियां हैं, चुनांचे अल्लाह तआला हुक्म फ़रमायेंगे कि इन लोगों को हुकूक के बदले में इस शख़्स की नेकियां दे दी जायें। अब एक शख़्स उसकी नमाज़ें लेकर चला जायेगा तो दूसरा शख़्स उसके रोज़े लेकर चला जायेगा, कोई उसका ज़िक्र व अज़कार लेकर चला जायेगा। इस तरह उसकी तमाम नेकियां ख़त्म हो जायेंगी। लेकिन लोगों के हुकूक पूरे नहीं होंगे, चुनांचे अल्लाह तआला फ़रमायेंगे कि जब नेकियां ख़त्म हो गयीं तो हक वालों के गुनाह इसके आमाल नामे में डाल कर उनके हुकूक अदा कर दो। जिसका नतीजा यह हुआ कि जब आया था तो उस वक़्त आमाल

नामा नेकियों से भरा हुआ था। और जब वापस जा रहा है तो न सिर्फ़ यह कि खाली हाथ है, बल्कि गुनाहों का बोझ अपने साथ लेजा रहा है। हक़ीक़त में मुफ़्लिस यह है। बहर हाल, हसद के ज़रिये इस तरह नेकियां बर्बाद हो जाती हैं। (तिर्मीज़ी शरीफ़)

अगर अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल से किसी शख़्स को आईने की तरह एक दिल अता फ़रमा दे, जिसमें न हसद हो, न बुग़ज़ हो, न ग़ीबत हो, न कीना हो, तो इस सूरत में अगरचे उसके नामा–ए–आमाल में बहुत ज़्यादा नफ़िलें और बहुत ज़्यादा ज़िक्र व अज़कार और तिलावत न भी हो, लेकिन दिल आईना हो तो अल्लाह तआला उस शख़्स का दर्जा इतना बुलन्द फ़रमाते हैं जिसकी कोई इन्तिहा नहीं।

जन्नत की खुश-ख़बरी

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अमर बिन आस रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि एक बार हम हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में मस्जिदे नबवी में बैठे हुए थे, आपने फ़रमाया कि अभी जो शख़्स मस्जिद में इस तरफ़ से दाख़िल होगा, वह जन्नती है। हमने उस तरफ़ को निगाह उठाई तो थौड़ी देर बाद एक साहिब मस्जिद नबवी में इस तरह दाख़िल हुए कि उनके चहरे से वुज़ू का पानी टपक रहा था और बायें हाथ में जूते उठाये हुए थे। हमें उन पर बहुत रश्क आया कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनके जन्नती होने की खुश–ख़बरी दी है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अमर बन आस रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि जब मज्लिस ख़त्म हो गयी तो मेरे दिल में ख़्याल आया कि मैं उनके क़रीब जाकर देखूं कि उनका कौन सा अमल एसा है जिसकी बुनियाद पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इतने एहतिमाम से उनके जन्नती होने की खुश–ख़बरी दी है, चुनांचे जब वह अपने घर जाने लगे तो मैं भी उनके पीछे पीछे साथ चला गया और रास्ते में उनसे कहा कि

मैं दो तीन दिन आपके घर में गुज़ारना चाहता हूं, उन्हों ने इजाज़त दे दी, और मैं उनके घर चला गया। जब रात हुई और बिस्तर पर लेटा तो सारी रात बिस्तर पर लेट कर जागता रहा, सोया नहीं, ताकि मैं यह देखूं कि रात के वक़्त वह उठ कर क्या अमल करते हैं। लेकिन सारी रात गुज़र गयी, वह उठे ही नहीं, पड़े सोते रहे। तहज्जुद की नमाज़ भी नहीं पढ़ी, और फ़जर के वक़्त उठे। उसके बाद मैंने दिन भी उनके पास गुज़ारा, तो देखा कि पूरे दिन में भी उन्हों ने कोई ख़ास अमल नहीं किया। (न नवाफ़िल, न ज़िक्र व अज़कार न तस्बीह न तिलावत) बस जब नमाज़ का वक़्त आता तो मस्जिद में जाकर नमाज़ पढ़ लेते। जब दो तीन दिन मैंने वहां रह कर देख लिया कि यह तो कोई ख़ास अमल ही नहीं करते तो मैंने उनसे अ़र्ज़ किया कि असल में बात यह है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने आपके जन्नती होने की ख़ुश–ख़ुबरी दी है, तो मैं आपका वह अ़मल देखने के लिए आया था कि आप वह कौन सा अ़मल करते हैं, जिसकी वजह से अल्लाह तआ़ला ने आपको यह मक़ाम अ़ता फ़रमाया। लेकिन मैंने दो तीन दिन आपके पास रह कर देख लिया कि आप कोई ख़ास अ़मल नहीं करते। सिर्फ़ फ़राइज़ व वाजिबात अदा करते हैं, और मामूल के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारते हैं। उन्हों ने जवाब दिया कि अगर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मेरे लिए यह ख़ुश–ख़बरी दी है तो यह मेरे लिए बड़ी नेमत है। और मुझ से कोई अ़मल होता नहीं और न मैं नवाफ़िल ज़्यादा पढ़ता हूं, लेकिन एक बात है, वह यह कि किसी शख़्स से हसद और बुग़्ज़ का मैल कभी मेरे दिल में नहीं आया, शायद इस बिना पर अल्लाह तआ़ला ने मुझे इस ख़ुश–ख़बरी का मिस्दाक़ बना दिया हो, कुछ रिवायतों में आता है कि यह साहिब हज़रत सअ़द बिन वक़्क़ास रज़ियल्लाहु अ़न्हु थे, जो अश्रा–ए–मुबश्शरा (वे दस सहाबा जिनको हुज़ूरे पाक ने उनकी ज़िन्दगी ही में जन्नती होने की

खुश–ख़बरी दे दी थी) में से हैं।

उसका फ़ायदा, मेरा नुक़सान

बहर हाल, आपने देखा कि उनके आमाल में बहुत ज़्यादा नवाफ़िल और ज़िक्र व अज़कार तो नहीं, लेकिन हसद और बुग़्ज़ से पाक है, दूसरे से हसद और बुग़्ज़ से अपने दिल को आईने की तरह पाक व साफ़ रखा हुआ है तो हसद का दूसरा इलाज यह है कि आदमी यह सोचे कि मैं जिस शख़्स से हसद कर रहा हूं, इस हसद के नतीजे में उसका तो फ़ायदा है और मेरा नुक़सान है। इस तसव्वुर से इस हसद की बीमारी में कमी आती है।

हसद का तीसरा इलाज

जैसा कि मैंने अर्ज़ किया कि हसद की बुनियाद है दुनिया की मुहब्बत और ओहदे व मर्तबे की मुहब्बत। इसलिये हसद का तीसरा इलाज यह है कि आदमी अपने दिल से दुनिया और ओहदे की मुहब्बत निकालने की फ़िक्र करे, इसलिये कि तमाम बीमारियों की जड़ दुनिया की मुहब्बत है, और इस दुनिया की मुहब्बत को दिल से निकालने का तरीक़ा यह है कि आदमी यह सोचे कि यह दुनिया कितने दिन की है, किसी भी वक़्त आंख बन्द हो जायेगी। इन्सान के लिये नजात का कोई रास्ता नहीं होगा। दुनिया की लज़्ज़तें, दुनिया की नेमतें, इसकी दौलतें, इसकी शोहरत, इसकी इज़्ज़त और इसकी ना पायदारी पर इन्सान ग़ौर करे, और यह सोचे कि किसी भी वक़्त आंख बन्द हो जायेगी तो सारा क़िस्सा ख़त्म हो जायेगा। उसके बाद फिर इन्सान के लिये नजात का कोई रास्ता नहीं होगा। बहर हाल, ये तीन चीज़ें हैं, जिनको सोचने से और ख़्याल करने से इस बीमारी में कमी आती है।

हसद की दो क़िस्में

एक बात और समझ लें, इसका समझना भी बहुत ज़रूरी है। वह

यह कि हसद की बुराइयां सुनने के बाद कभी कभी दिल में यह ख़्याल आता है कि यह बीमारी तो ऐसी है कि जो कभी कभी ग़ैर इख़्तियारी तौर पर पैदा हो जाती है। ख़ास तौर पर अपने हम जोलियों और अपने हम उमरों में और हम मर्तबा और हम पेशा लोगों में से किसी को आगे बढ़ता हुआ और तरक़्क़ी करता हुआ देखा तो दिल में यह ख़्याल आया कि अच्छा यह तो हम से आगे बढ़ गया, और दिल में उसकी तरफ़ से ग़ैर इख़्तियारी तौर पर कदूरत और मैल आ गया, अब न तो इसका इरादा किया था और न अपने इख़्तियार से यह ख़याल दिल में लाये थे, लेकिन दिल में ग़ैर इख़्तियारी तौर पर ख़्याल आ गया, इस से कैसे बचें? इस से बचने का क्या तरीक़ा है?

ख़ूब समझ लें कि हसद का एक दर्जा तो यह है कि आदमी के दिल में यह ख़्याल आए कि फ़लां शख़्स को जो नेमत हासिल है, उस से वह नेमत छिन जाए, लेकिन इस ख़्याल के साथ साथ हसद करने वाला अपने क़ौल से, उसका बुरा भी चाहता है। जैसे मज्लिस में बैठ कर उसकी बुराइयां बयान कर रहा है, और उसकी ग़ीबत कर रहा है। ताकि उसकी नेमत की वजह से लोगों के दिलों में जो इज़्ज़त पैदा हो गयी है, वह ख़त्म हो जाए, या इसकी कोशिश कर रहा है कि उस से वह नेमत छिन जाए, यह हसद तो बिल्कुल हराम है। इसके हराम होने में कोई शुबह नहीं।

लेकिन कभी कभी यह होता है कि दूसरे को नेमत हासिल होने की वजह से उसका दिल दुखा, और यह ख़्याल आया कि उसे यह नेमत क्यों मिली? लेकिन वह शख़्स अपने क़ौल से या अपने फ़ेल से, अपने अन्दाज़ और अदा से इस हसद को दूसरे पर ज़ाहिर नहीं करता, न उसकी बुराई करता है, न उसकी ग़ीबत करता है, न उसका बुरा चाहता है, न इस बात की कोशिश करता है कि उस से यह नेमत छिन जाए। बस दिल में यह एक दुख और कुढ़न है कि

उसको यह नेमत क्यों मिली? हकीकत में तो यह भी हसद और गुनाह है, लेकिन इसका इलाज आसान है और ज़रा सी तवज्जोह से इस गुनाह से बच सकता है।

फ़ौरन इस्तिग़फ़ार करे

इसका इलाज यह है कि जब दिल में यह कुढ़न और जलन पैदा हो तो साथ ही साथ दिल में इस बात का तसव्वुर करे कि यह हसद कितनी बुरी चीज़ है, और मेरे दिल में यह जो कुढ़न पैदा हो रही है, यह बहुत बुरी बात है, और जब इस किस्म का ख़्याल दिल में पैदा हो, फ़ौरन इस्तिग़फ़ार करे, और यह सोचे कि मुझे नफ़्स और शैतान बहका रहे हैं। यह मेरे लिए ऐब की बात है। इसलिये जब हसद के ख़्याल के साथ साथ इस हसद की बुराई भी दिल में ले आया तो इस हसद का गुनाह ख़त्म हो जायेगा, इन्शा अल्लाह।

उसके हक़ में दुआ करे

बुज़ुर्गों ने लिखा है कि जब दिल में दूसरे की नेमत देख कर हसद और जलन पैदा हो, तो इसका एक इलाज यह है कि तन्हाई में बैठ कर अल्लाह तआला से उसके हक़ में दुआ करे कि या अल्लाह, यह नेमत जो आपने उसको अता फ़रमाई है, और ज़्यादा अता फ़रमा। और जिस वक़्त वह यह दुआ करेगा, उसके दिल पे आरे चलेंगे, और यह दुआ करना दिल पर बहुत भारी गुज़रेगा। लेकिन ज़बरदस्ती यह दुआ करे कि या अल्लाह, उसको और तरक़्क़ी अता फ़रमा, उसकी नेमत में और बर्कत अता फ़रमा। और साथ साथ अपने हक़ में भी दुआ करे कि या अल्लाह, मेरे दिल में उसकी नेमत की वजह से जो कुढ़न और जलन पैदा हो रही है अपने फ़ज़्ल और रहमत से इसको ख़त्म फ़रमा। खुलासा यह है कि ये तीन काम करे. एक यह कि अपने दिल में जो कुढ़न पैदा हो रही है, और उसकी नेमत के ज़ाया हो जाने का जो ख़्याल आ रहा है, उसको दिल से बुरा समझे। दूसरा यह कि उसके हक़ में दुआ-ए-ख़ैर करे, तीसरे

अपने हक़ में दुआ करे कि या अल्लाह! मेरे दिल से इसको ख़त्म फ़रमा। इन तीनों कामों के करने के बाद भी अगर दिल में ग़ैर इख़्तियारी तौर पर ख़्याल आ रहा है, तो उम्मीद है कि अल्लाह तआला के यहां उस पर पकड़ नहीं होगी, इन्शा अल्लाह। लेकिन अगर दिल में ख़्याल तो आ रहा है लेकिन उस ख़्याल को बुरा नहीं समझता है, और न उसकी तलाफ़ी की फ़िक्र करता है, न उसकी तलाफ़ी करता है, तो इस सूरत में वह गुनाह से ख़ाली नहीं।

हक़-तल्फ़ी का ख़ुलासा

यह मस्अला मैं कई बार बयान कर चुका हूं कि जिन गुनाहों का ताल्लुक़ अल्लाह से है, उन गुनाहों का इलाज तो आसान है कि इन्सान तौबा और इस्तिग़फ़ार कर ले। वह गुनाह माफ़ हो जायेगा, लेकिन जिन कोताहियों और गुनाहों का ताल्लुक़ बन्दों के हुक़ूक़ से है, वे सिर्फ़ तौबा करने से माफ़ नहीं होते, जब तक हक़ वाले से माफ़ न कराया जाये, और वह माफ़ न करे, या जब तक उसका हक़ अदा न कर दिया जाये। उस वक़्त तक माफ़ नहीं होगा।

हसद का मामला यह है कि अगर आप इसको अपनी ज़बान पर ले आये और इस हसद के नतीजे में आपने उसकी ग़ीबत कर ली। या उसका बुरा चाहने के लिए कोई अमली कोशिश कर ली, तो इस सूरत में इस हसद का ताल्लुक़ बन्दों के हुक़ूक़ से हो जायेगा। इसलिये जब तक वह शख़्स माफ़ नहीं करेगा, यह गुनाह माफ़ नहीं होगा। लेकिन अगर हसद दिल ही दिल में रहा, ज़बान से कोई लफ़्ज़ उसकी बुराई और ग़ीबत का नहीं निकाला, और उसकी नेमत के ख़त्म करने के लिए कोई अमली क़दम नहीं उठाया तो इस सूरत में इस हसद का ताल्लुक़ अल्लाह के हुक़ूक़ से है, इसलिये यह गुनाह उस शख़्स से माफ़ी मांगे बग़ैर सिर्फ़ तौबा से माफ़ हो जायेगा। इसलिये जब तक हसद दिल ही दिल में है, तो आदमी सोच ले कि अभी मामला क़ाबू में है। आसानी के साथ इसकी तलाफ़ी भी

हो सकती है, और माफ़ी भी आसान है, वरना अगर यह आगे बढ़ गया तो यह बन्दों के हुक़ूक़ में दाख़िल हो जायेगा। फिर इसकी माफ़ी का कोई रास्ता नहीं रहेगा।

ज़्यादा रश्क करना भी अच्छा नहीं

जैसा कि मैंने अर्ज़ किया कि अगर दूसरे की नेमत के छिन जाने की ख़्वाहिश दिल में न हो, बल्कि सिर्फ़ यह ख़्याल हो कि यह नेमत मुझे भी मिल जाए, अगरचे यह हसद तो नहीं है, बल्कि यह रश्क है। लेकिन इसका बहुत ज़्यादा ख़्याल जमाना और सोचना आख़िर कार हसद तक पहुंचा देता है, इसलिये अगर दुनिया के माल व दौलत की वजह से किसी पर रश्क आ गया तो यह भी कोई अच्छी बात नहीं है, इसलिये कि यही रश्क कभी कभी दिल में माल व दौलत का लालच पैदा कर देता है, और कभी कभी यह रश्क आगे चल कर हसद बन जाता है।

दीन की वजह से रश्क करना अच्छा है

लेकिन अगर दीनदारी की वजह से रश्क पैदा हो रहा है तो यह अच्छी बात है। इसलिये कि हदीस शरीफ़ में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि:

"لا حسد الا فی اثنین، رجل اتاه الله مالا فسلط علی هلکته فی الحق،
ورجل اتاه الله الحکمة، فهو یقضی بها ویعلمها" (بخاری شریف)

इस हदीस में हसद से मुराद रश्क है, यानी हक़ीक़त में रश्क के क़ाबिल सिर्फ़ दो इन्सान हैं, एक वह इन्सान क़ाबिले रश्क है जिसको अल्लाह तआला ने माल दिया है, और वह उस माल को अल्लाह तआला के रास्ते में ख़र्च कर रहा है, और उसको अपने लिये आख़िरत का ज़ख़ीरा बना रहा है। यह शख़्स क़ाबिले रश्क है। दूसरा शख़्स वह है, जिसको अल्लाह तआला ने इल्म अता फ़रमाया है, और वह उस इल्म के ज़रिये से लोगों को नफ़ा पहुंचा रहा है। अपनी तक़रीर और तहरीर से लोगों को दीन की बात पहुंचा रहा है। यह

शख़्स भी क़ाबिले रश्क है कि वह ख़ुद भी नेक अमल कर रहा है और दूसरों को भी नेकी की तर्ग़ीब दे रहा है, और जो लोग उसकी तर्ग़ीब और तालीम के नतीजे में दीन पर अमल करने वाले होंगे, उनका सवाब भी उसके नामा–ए–आमाल में लिखा जायेगा। इसलिये अगर दीन की वजह से कोई शख़्स रश्क कर रहा है कि फ़लां शख़्स दीनदारी में मुझ से आगे बढ़ा हुआ है, यह रश्क पसन्दीदा है और बड़ी अच्छी बात है।

दुनिया की वजह से रश्क पसन्दीदा नहीं

लेकिन दुनिया के माल व दौलत की वजह से दूसरे पर रश्क करना कि फ़लां के पास माल ज़्यादा है। फ़लां के पास दौलत ज़्यादा है। फ़लां की शोहरत ज़्यादा है। फ़लां की इज़्ज़त ज़्यादा है। इन दुनियावी चीज़ों पर भी रश्क करना अच्छी बात नहीं। इसलिये कि इन चीज़ों में ज़्यादा रश्क करने के नतीजे में आख़िर कार लालच पैदा होगा, और उसके बाद हसद पैदा होने का भी अन्देशा है। इसलिये रश्क की भी ज़्यादा हिम्मत नहीं बढ़ानी चाहिए, बल्कि जब कभी ऐसा ख़्याल आये तो उस वक़्त यह सोचे कि अगर फ़लां नेमत उसको हासिल है, तो अल्लाह तआला ने मुझे भी बहुत सी नेमतें अता फ़रमाई हैं, जो उसके पास नहीं हैं। और जो नेमतें मुझे नहीं मिलीं तो मेरी भलाई और मस्लिहत भी इसमें है कि मुझे वह नेमत न मिले। इसलिये कि अल्लाह तआला ने किसी मस्लिहत की वजह से मुझे वह नेमत नहीं अता फ़रमाई, अगर वह नेमत मुझे हासिल हो जाती तो ख़ुदा जाने मैं किस मुसीबत के अन्दर मुब्तला हो जाता। बहर हाल इन बातों को सोचे और इस रश्क के ख़्याल को भी अपने दिल से निकालने की कोशिश करे। ये कुछ बातें हसद के बारे में अर्ज़ कर दीं। अल्लाह तआला अपनी रहमत से इसकी हक़ीक़त समझने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

शैख़ और मुरब्बी की ज़रूरत

लेकिन जैसा कि मैं बार बार अर्ज़ करता रहता हूं कि अन्दर की जितनी बीमारियां हैं, बातिन (अन्दर) के जितने बुरे अख़्लाक़ और गुनाह हैं, उनसे बचने का असल इलाज यह है कि किसी मुआलिज (इलाज करने वाले) से रुजू किया जाए। अगर डाक्टर एक बार मरीज़ को अपने पास बिठा कर ख़ूब अच्छी तरह से यह बता दे कि बुख़ार की हक़ीक़त क्या है? इसके अस्बाब क्या होते हैं? इसका इलाज और दवायें क्या क्या हैं? लेकिन जब उसको बुख़ार आयेगा तो क्या वह शख़्स डा० की बताई हुई बातों को याद करके उसके मुताबिक़ अपना इलाज खुद करना शुरू कर देगा? ज़ाहिर है कि वह ऐसा नहीं करेगा, इसलिये कि हालात मुख़्तलिफ़ होते हैं, और कभी कभी दवाओं को अपने ऊपर सही मुवाफ़िक़ और फ़िट करने में ग़लती भी हो जाती है, इसलिये डा० या मुआलिज की तरफ़ रुजू करने की ज़रूरत होती है।

इसी तरह यह बातिन (अन्दर) की बीमारियां हैं। जैसे दिखावा है, हसद है, बुग़्ज़ है, तकब्बुर है। आपने इनकी हक़ीक़त सुन ली, लेकिन जब कोई शख़्स इनमें से किसी बीमारी में मुब्तला हो तो उसको चाहिए कि वह ऐसे मुआलिज की तरफ़ रुजू करे जो अपना इलाज करा चुका हो और दूसरों का इलाज करने में माहिर हो। और उसको बताये कि मेरे दिल ये ख़्यालात और वस्वसे पैदा होते हैं, इसका क्या हल है? और क्या इलाज है? फिर वह सही इलाज तज्वीज़ करता है। कभी कभी यह होता है कि आदमी अपने आपको बीमार समझता है मगर हक़ीक़त में बीमार नहीं होता। और कभी कभी यह होता है कि आदमी अपने आपको तन्दुरुस्त समझता है मगर हक़ीक़त में वह बीमार होता है। और कभी कभी ऐसा होता है कि उसके लिये कोई इलाज मुफ़ीद होता है, मगर वह दूसरे इलाज में लगा हुआ है। इसलिये बुनियादी बात यह है कि किसी शैख़ (बुज़ुर्ग)

से रुजू करके अपने हालात बताये जायें, और फिर उसके बताए हुए इलाज के मुताबिक़ अ़मल किया जाए। अल्लाह तआ़ला मुझे और आपको इस पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

واٰخردعوانا ان الحمدللّٰه رب العالمين

ख़्वाब की हैसियत

اَلْحَمْدُ لِلّٰہِ نَحْمَدُہٗ وَنَسْتَعِیْنُہٗ وَنَسْتَغْفِرُہٗ وَنُؤْمِنُ بِہٖ وَنَتَوَکَّلُ عَلَیْہِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰہِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَیِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ یَّھْدِہِ اللّٰہُ فَلَا مُضِلَّ لَہٗ وَمَنْ یُّضْلِلْہُ فَلَا ھَادِیَ لَہٗ وَنَشْھَدُ اَنْ لَّآ اِلٰہَ اِلَّااللّٰہُ وَحْدَہٗ لَا شَرِیْکَ لَہٗ وَنَشْھَدُ اَنَّ سَیِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُہٗ وَرَسُوْلُہٗ صَلَّی اللّٰہُ تَعَالٰی عَلَیْہِ وَعَلٰٓی اٰلِہٖ وَ اَصْحَابِہٖ وَبَارَکَ وَسَلَّمَ تَسْلِیْمًا کَثِیْرًا کَثِیْرًا۔ اَمَّا بَعْدُ:

"عن ابی هريرة رضی الله عنه قال: قال رسول الله صلی الله عليه وسلم: لم يبق من النبوة الا المبشرات، قالوا: وما المبشرات؟ قال الرؤياء الصالحة" (بخاری شریف)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि नुबुव्वत ख़त्म हो गयी और सिवाए मुबश्शिरात के नुबुव्वत का कोई हिस्सा बाक़ी नहीं रहा। सहाबा ने सवाल किया कि या रसूलल्लाह! (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) मुबश्शिरात क्या हैं? (मुबश्शिरात के मायने हैं ख़ुशख़बरी देने वाली चीज़ें) जवाब में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि "सच्चे ख़्वाब" ये अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से मुबश्शिरत होते हैं और यह नुबुव्वत का एक हिस्सा है। एक और हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि मोमिन का ख़्वाब नुबुव्वत का छियालीसवां हिस्सा है। (बुख़ारी शरीफ़)

सच्चे ख़्वाब नुबुव्वत का हिस्सा हैं

मतलब इसका यह है कि जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नबी की हैसियत से ज़ाहिर होने का वक़्त आया, तो शुरू में छः महीने तक आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर "वही" (अल्लाह का पैग़ाम) नहीं आई। बल्कि छः महीने तक आप सल्लल्लाहु

अलैहि व सल्लम को सच्चे ख़्वाब आते रहे। हदीस में आता है कि जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम कोई ख़्वाब देखते तो जो वाक़िआ आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ख़्वाब में देखा होता था बिल्कुल उसी तरह वही वाक़िआ जागने की हालत में पेश आ जाता और आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का वह ख़्वाब सच्चा हो जाता और सुबह के उजाले की तरह उस ख़्वाब का सच्चा होना लोगों के सामने ज़ाहिर हो जाता। इस तरह छः महीने तक आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सच्चे ख़्वाब आते रहे। उसके बाद फ़िर "वही" का सिलसिला शुरू हुआ और नुबुव्वत मिलने के तैईसे साल तक आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दुनिया में तश्रीफ़ फ़रमा रहे, उन तैईस सालों में से छः महीने का समय सिर्फ़ सच्चे ख़्वाबों का ज़माना था। अब तैईस साल को दो से गुना करेंगे तो छियालीस बन जायेंगे, इसलिये आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सच्चे ख़्वाब नुबुव्वत का छियालीसवां हिस्सा हैं। गोया कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नुबुव्वत के ज़माने को छियालीस हिस्सों में तक़्सीम किया जाए तो उसमें से एक हिस्से में आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नुबुव्वत के ज़माने को छियालीस हिस्सों में तक़्सीम किया जाए तो उसमें से एक हिस्से में आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ख़्वाब ही आते रहे। "वही" नहीं आई। इसलिए आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मोमिन का ख़्वाब नुबुव्वत का छियालीसवां हिस्सा है, और इशारा इस तरफ़ कर दिया कि यह सिलसिला मेरे बाद भी जारी रहेगा और मामिनों को सच्चे ख़्वाब दिखाये जायेंगे, और उनके ज़रिये बशारतें दी जायेंगी, और एक और हदीस में यह भी फ़रमाया कि क़ियामत के क़रीब आख़री ज़माने में मुसलमानों को ज़्यादातर ख़्वाब सच्चे आयेंगे। इस से मालूम हुआ कि ख़्वाब भी अल्लाह तआला की एक नेमत है, और आदमी को इसके ज़रिये बशारतें मिलती हैं। इसलिये अगर

ख़्वाब के ज़रिये कोई बशारत (खुश–ख़बरी) मिले तो उस पर अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करे।

ख़्वाब के बारे में दो राएं

लेकिन हमारे यहां ख़्वाब के मामले में बड़ी कमी ज़्यादती पाई जाती है। कुछ लोग तो वे हैं जो सच्चे ख़्वाबों के क़ायल ही नहीं, न ख़्वाब के क़ायल, न ख़्वाब की ताबीर के क़ायल हैं। यह ख़्याल ग़लत है। इसलिये कि अभी आप ने सुना कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सच्चे ख़्वाब नुबुव्वत का छियालीसवां हिस्सा हैं और आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ये सच्चे ख़्वाब मुबश्शिरात हैं। और दूसरी तरफ़ कुछ लोग वे हैं जो ख़्वाबों ही के पीछे पड़े रहते हैं, और ख़्वाब ही पर नजात और फ़ज़ीलत का दारो मदार समझते हैं, अगर किसी ने अच्छा ख़्वाब देख लिया तो बस उसके मोतक़िद हो गये, और किसी ने अपने बारे में अच्छा ख़्वाब देख लिया तो वह अपना ही मोतक़िद हो गया कि मैं अब पहुंचा हुआ बुज़ुर्ग हो गया हूं। यह ख़्वाब तो सोने की हालत में होता है। लेकिन कभी कभी अल्लाह तआ़ला जागने की की हालत में भी कुछ चीज़ें दिखा देते हैं। जिसको कश्फ़ कहते हैं। चुनांचे अगर किसी को कश्फ़ हो गया तो लोग उसी को सब कुछ समझ बैठे कि यह बहुत बड़ा बुज़ुर्ग आदमी है। अब चाहे जागने के अन्दर उसके हालात सुन्नत के मुताबिक़ न भी हों। ख़ूब समझ लीजिए कि इन्सान की फ़ज़ीलत का असल मेयार ख़्वाब और कश्फ़ नहीं, बल्कि असल मेयार यह है कि उसकी जागने की हालत की ज़िन्दगी सुन्नत के मुताबिक़ है या नहीं? जागने की हालत में वह गुनाहों से परहेज़ कर रहा है या नहीं? जागने की हालत में वह अल्लाह तआ़ला की इताअ़त (फ़रमांबरदारी) कर रहा है या नहीं? अगर इताअ़त नहीं कर रहा है तो फिर उसको हज़ार ख़्वाब नज़र आए हों, हज़ार कश्फ़ हुए हों, हज़ार करामतें उसके हाथ से ज़ाहिर हुई हों, वह फ़ज़ीलत का

मेयार नहीं। आज कल इस मामले में बड़ी सख़्त गुमराही फैली हुई है। पीरी मुरीदी के साथ इसको लाज़िम समझ लिया गया है। हर वक़्त लोग ख़्वाबों और कश्फ़ व करामात ही के पीछे पड़े रहते हैं।

ख़्वाब की हैसियत

हज़रत मुहम्मद बिन सीरीन रह्मतुल्लाहि अ़लैहि जो बड़े दर्जे के ताबिअ़ीन में से हैं, और ख़्वाब की ताबीर में इमाम हैं। पूरी उम्मते मुहम्मदिया में उनसे बड़ा आ़लिम ख़्वाब की सही ताबीर देने वाला शायद कोई और पैदा नहीं हुआ। अल्लाह तआ़ला ने उनको ख़्वाब की ताबीर देने में एक ख़ास महारत अ़ता फ़रमायी थी। उनके बड़े अ़जीब व ग़रीब वाक़िआ़त मशहूर हैं। लेकिन उनका एक इतना प्यारा छोटा सा जुमला (वाक्य) है जो याद रखने के क़ाबिल है। वह जुमला ख़्वाब की हक़ीक़त वाज़ेह करता है। फ़रमाया कि:

"الرؤيا تسر ولا تغر"

यानी ख़्वाब एक ऐसी चीज़ है जिस से इन्सान खुश हो जाए कि अल्लाह तआ़ला ने अच्छा ख़्वाब दिखाया, लेकिन ख़्वाब किसी इन्सान को धोखे में न डाले, और यह न समझे कि मैं बहुत पहुंचा हुआ हूं। और उसके नतीजे में जागने की हालत के आमाल से ग़ाफ़िल हो जाए।

हज़रत थानवी रह० और ख़्वाब की ताबीर

हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि से बहुत से लोग ख़्वाब की ताबीर पूछते कि मैंने यह ख़्वाब देखा, मैंने यह ख़्वाब देखा। हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि आम तौर पर जवाब में यह शेर पढ़ते कि:

न शबम न शब प्रस्तम कि हदीसे ख़्वाब गोयम
मन गुलामे आफ़ताबम हमा ज़-आफ़ताब गोयम

यानी न तो मैं रात हूं और न रात को पूजने वाला हुं कि ख़्वाब की बातें करूं, अल्लाह तआ़ला ने तो मुझे आफ़ताब (सूरज) से निस्बत अ़ता फ़रमाई है। यानी आफ़ताबे रिसालत सल्लल्लाहु अ़लैहि

व सल्लम से, इसलिये मैं तो उसी की बात कहता हूं। बहर हाल ख़्वाब कितने ही अच्छे आ जाएं, उन पर अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करो, वे मुबश्शिरात (खुश–ख़बरी देने वाले) हैं। हो सकता है कि अल्लाह पाक किसी वक़्त उनकी बर्कत अ़ता फ़रमा दे, लेकिन सिर्फ़ ख़्वाब की वजह से बुज़ुर्गी और फ़ज़ीलत का फ़ैसला नहीं करना चाहिए।

हज़रत मुफ़्ती साहिब रह० और मुबश्शिरात

मेरे वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के बारे में बीसयों अफ़राद ने ख़्वाब देखे। जैसे ख़्वाब में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ियारत हुई, और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को मेरे वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि की शक्ल में देखा। यह और इस क़िस्म के दूसरे ख़्वाब बे शुमार अफ़राद ने देखे, चुनांचे जब लोग इस क़िस्म के ख़्वाब लिख कर भेजते तो हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि उसको अपने पास महफ़ूज़ रख लेते, और एक रजिस्टर जिस पर यही उन्वान था "मुबश्शिरात" यानी खुश ख़बरी देने वाले ख़्वाब, उस रजिस्टर में नक़्ल करा देते थे, लेकिन उस रजिस्टर के पहले पेज पर अपने क़लम से यह नोट लिखा था कि:

"इस रजिस्टर में उन ख़्वाबों को नक़्ल कर रहा हूं जो अल्लाह तआ़ला के नेक बन्दों ने मेरे बारे में देखे हैं। इस ग़र्ज़ से नक़्ल कर रहा हूं कि बहर हाल ये मुबश्शिरात हैं, फ़ाले नेक हैं, अल्लाह तआ़ला इसकी बर्कत से मेरी इस्लाह फ़रमा दे। लेकिन मैं सब पढ़ने वालों को मुतनब्बह कर रहा हूं कि आगे जो ख़्वाब ज़िक्र किए जा रहे हैं, ये हरगिज़ मदारे फ़ज़ीलत नहीं, और इनकी बुनियाद पर मेरे बारे में फ़ैसला न किया जाए, बल्कि असल मदार बेदारी (जागने की हालत) के अफ़आ़ल व अक़्वाल हैं। इसलिये इसकी वजह से आदमी धोखे में न पड़े"।

यह आपने इसलिये लिख दिया था कि कोई पढ़ के धोखा न खाए। बस यह हक़ीक़त है ख़्वाब की। तो जब इन्सान अच्छा ख़्वाब देखे तो अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करे, और दुआ़ करे कि अल्लाह तआ़ला इसको मेरे हक़ में बर्कत का सबब बना दे। लेकिन उसकी वजह से धोखे में मुब्तला न हो, न दूसरे के बारे में, न अपने बारे में, ख़्वाब की हक़ीक़त इतनी ही है। इसी ख़्वाब से मुताल्लिक़ दो तीन हदीसें और हैं। जिनके बारे में अक्सर व बेश्तर लोगों को मालूमात नहीं हैं जिसकी वजह से ग़लत फ़हमी में पड़े रहते हैं। इसलिये इन हदीसों को पढ़ लेना मुनासिब और ज़रूरी है।

शैतान आप सल्ल० की सूरत में नहीं आ सकता

"عن ابی هریرة رضی الله عنه قال: قال رسول الله صلی الله علیه وسلم: من رانی في المنام فقد رانی لا يتمثل الشيطان بی" (مسلم شریف)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि जिस शख़्स ने मुझे ख़्वाब में देखा (यानी जिसने ख़्वाब में नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ियारत की) तो उसने मुझ ही को देखा। क्यों कि शैतान मेरी सूरत में नहीं आ सकता। अगर किसी शख़्स को अल्लाह तआ़ला ख़्वाब में नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ियारत की सआ़दत अ़ता फ़रमा दे तो यह बड़ी सआ़दत है, और उसकी ख़ुश–नसीबी का क्या ठिकाना है। इस हदीस का मतलब यह है कि जो शख़्स नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को उस मारूफ़ (जाने पहचाने) हुलिये के मुताबिक़ देखे जो हदीसों के ज़रिये साबित है तो वह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ही को देखता है, शैतान यह धोखा नहीं दे सकता कि मआ़ज़ल्लाह (अल्लाह अपनी पनाह में रखे) आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सूरते मुबारक में आ जाए। यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ख़्वाब में अपनी ज़ियारत की ख़ुसूसियत बयान फ़रमा दी।

हुज़ूर सल्ल० की ज़ियारत अज़ीम सआदत

अल्हम्दु लिल्लाह, अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल से बहुत से लोगों को यह सआदत अता फ़रमा देते हैं, और उन्हें ख़्वाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ियारत हो जाती है। यह बड़ी अज़ीम नेमत और सआदत है। लेकिन इस मामले में हमारे बुज़ुर्गों के ज़ौक़ मुख़्तलिफ़ रहे हैं। एक ज़ौक़ तो यह है कि इस सआदत को हासिल करने की कोशिश की जाती है। और ऐसे अमल किए जाते हैं जिस से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ियारत हो जाए और बुज़ुर्गों ने ऐसे ख़ास अमल लिखे हैं। जैसे यह कि जुमा की रात में इतनी बार दुरूद शरीफ़ पढ़ने के बाद फ़लां अमल करके सोए तो सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ियारत होने की उम्मीद होती है, इस क़िस्म के बहुत से आमाल मश्हूर हैं। कुछ हज़रात का ज़ौक़ और मज़ाक़ यह है, अब अगर कोई शख़्स इस ज़ौक़ को सामने रखते हुए ख़्वाब में ज़ियारत की कोशिश करना चाहे तो कर ले, और इस सआदत से सरफ़राज़ हो जाए।

ज़ियारत की अहलियत कहां?

लेकिन दूसरे कुछ हज़रात का ज़ौक़ कुछ और है। जैसे मेरे वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अलैहि के पास एक साहिब आया करते थे। एक बार आकर कहने लगे कि तबीयत में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ियारत का बहुत शौक़ हो रहा है, कोई ऐसा अमल बता दीजिए कि जिसके नतीजे में यह नेमत हासिल हो जाए, और सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ियारत ख़्वाब में हो जाए। हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि: भाई, तुम बड़े हौसले वाले आदमी हो कि तुम इस बात की तमन्ना करते हो कि सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ियारत हो जाए। हमें यह हौसला नहीं होता

कि यह तमन्ना करें। इसलिये कि हम कहां? और नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ियारत कहां? इसलिये कभी इस क़िस्म के अ़मल सीखने की नौबत नहीं आई और न कभी यह सोचा कि ऐसे अ़मल सीखे जाएं। जिनकी वजह से सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ियारत हो जाए। इसलिये कि अगर ज़ियारत हो तो हम उसके आदाब, उसके हुकूक़, उसके तक़ाज़े किस तरह पूरे करेंगे? इसलिये ख़ुद से हासिल करने की कोशिश नहीं की। लेकिन अगर अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल से ख़ुद ही ज़ियारत करा दें तो यह उनका इनाम है, और जब ख़ुद से ज़ियारत करायेंगे तो फिर उसके आदाब की भी तौफ़ीक़ बख़्शेंगे। लेकिन ख़ुद से हिम्मत नहीं होती, अलबत्ता जिस तरह एक मोमिन के दिल में आरज़ू होती है, इस तरह की आरज़ू दिल में है, लेकिन ज़ियारत की कोशिश करना बड़ी हिम्मत और हौसले वालों का काम है। मुझे तो हौसला होता नहीं है। बहर हाल इस सिलसिले में ज़ौक़ अलग अलग रहे हैं।

हज़रत मुफ़्ती साहिब और रौज़ा-ए-अक़्दस की ज़ियारत

मैंने अपने वालिद माजिद का यह वाक़िआ आपको पहले भी सुनाया था कि जब रौज़ा–ए–अक़्दस पर हाज़िर होते तो कभी रौज़ा–ए–अक़्दस की जाली तक पहुंच ही नहीं पाते थे, बल्कि हमेशा यह देखा कि जाली के सामने एक सुतून है, उस सुतून से लग कर खड़े हो जाते, और जाली का बिल्कुल सामना नहीं करते थे, बल्कि वहां अगर कोई आदमी खड़ा होता तो उसके पीछे जाकर खड़े हो जाते और एक दिन ख़ुद ही फ़रमाने लगे कि: एक मर्तबा मेरे दिल में यह ख़्याल पैदा हुआ कि शायद तू बड़ा बद नसीब आदमी है। ये अल्लाह के नेक बन्दे हैं जो जाली के क़रीब तक पहुंच जाते हैं, और क़ुर्ब हासिल करने की कोशिश करते हैं और सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का जितना भी क़ुर्ब हासिल हो जाए, वह

नेमत ही नेमत है। लेकिन मैं क्या करूं कि मेरा क़दम आगे बढ़ता ही नहीं। शायद कुछ दिल की बद नसीबी है। फ़रमाते हैं कि वहां खड़े खड़े मेरे दिल में यह ख़्याल पैदा हुआ मगर उसके बाद फ़ौरन यह महसूस हुआ जैसा कि रौज़ा-ए-अक़्दस से यह आवाज़ आ रही है कि:

जो शख़्स हमारी सुन्नतों पर अ़मल करता है, वह हम से क़रीब है, चाहे हज़ारों मील दूर हो, और जो शख़्स हमारी सुन्नतों पर अ़मल नहीं करता, वह हम से दूर है, चाहे वह हमारी जालियों से चिम्टा हुआ हो।

असल दारो मदार जागने की हालत के आमाल पर है

बहर हाल! असल दौलत हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नतों का इत्तिबा, अल्लाह तआ़ला इसकी तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन। जागने की हालत में इन सुन्नतों की तौफ़ीक़ हो जाए, यह है असल नेमत, असल दौलत, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का असल क़ुर्ब यही है, लेकिन अगर सुन्नतों पर अ़मल नहीं और रौज़ा-ए-अक़्दस की जालियों से चिम्टा खड़ा है और ज़ियारत की कोशिश कर रहा है तो हमारे ख़्याल में यह बड़ी जुर्रत है, इसलिये कि असल फ़िक्र इसकी होनी चाहिए कि सुन्नत की इत्तिबा हो रही है या नहीं? हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नतें ज़िन्दगी में दाख़िल हो रही हैं या नहीं? इसकी फ़िक्र करें। ख़्वाबों के पीछे बहुत ज़्यादा पड़ना मतलूब और मक़्सूद नहीं, अलबत्ता अगर हासिल हो जाए तो अल्लाह तआ़ला की नेमत है। लेकिन इस पर नजात का मदार नहीं। क्योंकि यह ग़ैर इख़्तियारी मामला है। हमारे तब्क़े में एक बड़ी तादाद है जो ख़्वाबों ही के पीछे पड़ी है। दिन रात यही फ़िक्र है कि कोई अच्छा ख़्वाब नज़र आ जाए। इसी को असल मक़्सूद समझा हुआ है। हालांकि यह बात दुरुस्त नहीं। इसलिये कि फिर यह होता है कि जब कभी कोई

अच्छा ख़्वाब अपने बारे में देख लिया तो बस यह समझा कि अब मैं कहीं से कहीं पहुंच गया हूं। ख़ूब समझ लें कि ख़्वाब अपनी ज़ात में न तो किसी का दर्जा बुलन्द करता है और न अज्र व सवाब का मूजिब होता है, बल्कि असल मदार जागने की हालत के आमाल पर है। यह देखो कि तुम जागने की हालत में क्या अ़मल कर रहे हो।

अच्छा ख़्वाब धोखे में न डाले

इसलिये अगर किसी शख़्स ने ख़्वाब में देखा कि मैं जन्नत में फिर रहा हूं और जन्नत के बाग़ों और महलों की सैर कर रहा हूं तो यह बड़ी अच्छी ख़ुश–ख़बरी है, लेकिन इसकी वजह से इस धोखे में न आये कि मैं तो जन्नती हो गया, इसलिये अब मुझे किसी अ़मल और कोशिश की हाजत और ज़रूरत नहीं। यह ख़्याल ग़लत है, बल्कि अगर कोई शख़्स अच्छा ख़्वाब देखने के बाद आमाल के अन्दर और ज़्यादा इत्तिबा का एहतिमाम करने लगता है तो यह इस बात की अ़लामत (निशानी) है कि वह ख़्वाब अच्छा और सच्चा था और ख़ुश–ख़बरी देने वाला था। और इस से उसने ग़लत नतीजा नहीं निकाला। लेकिन अगर ख़ुदा न करे यह हुआ कि ख़्वाब देखने के बाद आमाल छोड़ बैठा और आमाल की तरफ़ से ग़फ़लत हो गयी तो इसका मतलब यह है कि ख़्वाब ने इसको धोखे में डाल दिया।

ख़्वाब में हुज़ूरे पाक सल्ल० का किसी बात का हुक्म देना

यह बात समझ लेनी चाहिए कि अगर ख़्वाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ियारत हो गयी तो उसका हुक्म यह है कि चूंकि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का फ़रमान है कि जो काई मुझे ख़्वाब में देखता है तो मुझे ही देखता है। इसलिये कि शैतान मेरी सूरत में नहीं आ सकता। इसलिये अगर ख़्वाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ियारत हो, और यह कोई ऐसा काम करने को कहें जो शरीअ़त के दायरे में है,

जैसे फ़र्ज़ है, या वाजिब है, या सुन्नत है, या मुबाह है, तो फिर उसको एहितमाम से करना चाहिए, इसलिये कि जो काम शरीअ़त के दायरे में है, उसके करने का जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हुक्म फ़रमा रहे हैं तो वह ख़्वाब सच्चा होगा, उस काम का करना ही उसके हक़ में मुफ़ीद है, और अगर नहीं करेगा तो कभी कभी उसके हक़ में बे बर्कती शदीद हो जाती है।

ख़्वाब शरअ़ी हुज्जत नहीं

लेकिन अगर ख़्वाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम किसी ऐसी बात का हुक्म दें, जो शरीअ़त के दायरे में नहीं है। जैसे ख़्वाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ियारत हुई, और ऐसा महसूस हुआ कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक ऐसी बात का हुक्म फ़रमाया जो शरीअ़त के ज़ाहिरी अहकाम के दायरे में नहीं है। तो समझ लीजिए कि इस ख़्वाब की वजह से वह काम करना जायज़ नहीं होगा। इसलिये कि हमारे देखे हुए ख़्वाब की बात को अल्लाह तआ़ला ने शरीअ़त के मसाइल में हुज्जत नहीं बनाया, और जो इर्शादात हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से क़ाबिले एतिमाद वास्तों से हम तक पहुंचे हैं, वे हुज्जत हैं। उन पर अ़मल करना ज़रूरी है। ख़्वाब की बात पर अ़मल करना ज़रूरी नहीं। क्यों कि यह बात तो सही है कि शैतान हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुबारक सूरत में नहीं आ सकता, लेकिन बहुत सी बार ख़्वाब देखने वाले के ज़ाती ख़्यालात उस ख़्वाब के साथ गड–मड हो जाते हैं, और उसकी वजह से उसको ग़लत बात याद रह जाती है, या समझने में ग़लती हो जाती है, इसलिये हमारे ख़्वाब हुज्जत नहीं।

ख़्वाब का एक अ़जीब वाक़िआ़

एक क़ाज़ी थे, लोगों के दरमियान फ़ैसले किया करते थे, एक बार एक मुक़द्दमा सामने आया, और मुक़द्दमा के अन्दर गवाह पेश

हुए, और शरीअत के मुताबिक गवाहों की जांच पड़ताल का जो तरीका है वह पूरा कर लिया, और आखिर में मुद्दई (दावा करने वाले) के हक में फैसला करने का दिल में इरादा भी हो गया, लेकिन काज़ी साहिब ने कहा कि इस फैसले का ऐलान कल करेंगे। यह ख़्याल हुआ कि कल तक ज़रा और सोच लूंगा। लेकिन जब रात को सोए तो ख़्वाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ियारत हुई और सुबह जब जागे तो ऐसा याद आया कि ख़्वाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यह फरमा रहे थे कि जो तुम फैसला करने का इरादा कर रहे हो, यह फैसला ग़लत है, यह फैसला यों करना चाहिए। अब उठ कर जो ग़ौर किया तो जिस तरीके से फैसला करने के बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फरमाया था, वह किसी तरह शरीअ़त के दायरे में फ़िट नहीं होता। अब बड़े परेशान हुए कि ज़ाहिरी तौर पर शरीअ़त का जो तकाज़ा है उसके लिहाज़ से तो यह फ़ैसला इस तरह होना चाहिए, लेकिन दूसरी तरफ़ ख़्वाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फरमा रहे हैं कि यों फ़ैसला करो। अब मामला बड़ा संगीन हो गया, और यह जो मुकद्दमे की ज़िम्मेदारी होती है, यह बड़ी संगीन ज़िम्मेदारी है। जिन लोगों पर गुज़रती है वही उसको जानते हैं, रातों की नीदें हराम हो जाती हैं।

चुनांचे ख़लीफ़ा-ए-वक़्त से जाकर बताया कि इस तरह से यह मुकद्दमा पेश आ गया, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ख़्वाब में इस तरह फैसला करने को फरमाया है। आप उलमा को जमा फरमाएं, ताकि इसके बारे उनसे मश्विरा हो जाए। चुनांचे सारे शहर के उलमा जमा हुए और उनके सामने यह मामला रखा गया कि इस तरह से मुकद्दमा पेश आया है। ज़ाहिरी तौर पर शरीअ़त का तकाज़ा यह है लेकिन दूसरी तरफ़ ख़्वाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह फरमाया है। अब क्या

किया जाए? उलमा ने फ़रमाया कि हक़ीक़त में यह बड़ा संगीन मामला है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ियारत हुई, और शैतान आपकी सूरत में आ नहीं सकता, इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के फ़रमान पर अमल करना चाहिए। लेकिन उस ज़माने के एक बुज़ुर्ग जो अपनी सदी के मुजद्दिद कहलाते थे, हज़रत शैख़ अिज़्ज़ुद्दीन बिन अब्दुस्सलाम रहमतुल्लाहि अलैहि वह भी मज्लिस में हाज़िर थे, वह खड़े हुए और फ़रमाया कि मैं पूरे यक़ीन और ऐतमाद के साथ कहता हूं कि शरीअत के क़ायदे के मुताबिक़ आप जो फ़ैसला करने जा रहे हैं वही फ़ैसला कीजिए और सारा गुनाह सवाब मेरी गर्दन पर है, ख़्वाब की बात पर फ़ैसला करना जायज़ नहीं। इसलिये कि ख़्वाब में हज़ारों वह्म व गुमान हो सकते हैं। खुदा जाने अपने दिल की कोई बात उसमें आ गई हो। अगरचे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुबारक सूरत में शैतान नहीं आ सकता, लेकिन हो सकता है कि जागने के बाद शैतान ने वस्वसा डाल दिया हो। कोई ग़लत बात दिल में आ गयी हो। शरीअत ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जागने की हालत में सुने हुए इर्शादात के मुक़ाबले में हमारे ख़्वाब को हुज्जत क़रार नहीं दिया। और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जो इर्शादात हम तक मुत्तसिल (लगातार और मुसलसल) सनद के साथ पहुंचे हैं, वही हमारे लिए हुज्जत हैं। हमें उन्हीं पर अमल करना है। आप भी इस पर अमल कीजिए, और गुनाह सवाब मेरी गर्दन पर है।

ख़्वाब और कश्फ़ वग़ैरह से शरअ़ी हुक्म नहीं बदल सकता

ये अल्लाह के ख़ास बन्दे होते हैं, जो इस कुव्वत के साथ कह सकते हैं वरना यह बात कहना आसान काम नहीं था कि "गुनाह

सवाब मेरी गर्दन पर'' जिन लोगों को अल्लाह तआला इस दीन की तशरीह के लिए और इस दिन की हिफ़ाज़त के लिए भेजते हैं उनसे ऐसी बातें करा देते हैं। अगर एक बार यह उसूल मान लिया जाता कि ख़्वाब से शरीअ़त बदल सकती है तो फिर शरीअ़त का कोई ठिकाना न रहता, एक से एक ख़्वाब लोग देख लेते और आकर बयान कर देते, आज आप देखें कि यह जितने जाहिल पड़े हैं, जो बिद्अ़तों में मुब्तला हैं, वे इन्हीं ख़्वाबों को सब कुछ समझते हैं। कोई ख़्वाब देख लिया, या कश्फ़ हो गया, इल्हाम हो गया, और इस बुनियाद पर शरीअ़त के ख़िलाफ़ अमल कर लिया, ख़्वाब तो ख़्वाब है। अगर किसी को कश्फ़ हो जाए जो जागने और बेदारी की हालत में होता है, उसमें आवाज़ आती है, और वह आवाज़ कानों को सुनाई देती है, लेकिन इसके बावजूद कश्फ़ शरीअ़त में हुज्जत नहीं, कोई शख़्स कितना ही पहुंचा हुआ आ़लिम या बुजुर्ग हो, उसने अगर ख़्वाब देख लिया, या उसको कोई कश्फ़ या इल्हाम हो गया, वह भी शरअ़ी अहकाम के मुक़ाबले में हुज्जत नहीं है।

हज़रत शैख़ अ़ब्दुल क़ादिर जीलानी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि का एक वाक़िआ़

हज़रत मौलाना शैख़ अ़ब्दुल क़ादिर जीलानी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि जो वलियों के सरदार हैं। एक बार रात को इबादत में मश्गूल थे। तहज्जुद का वक़्त है, शैख़ अ़ब्दुल क़ादिर जीलानी जैसा अल्लाह का वली इबादत कर रहा है, उस वक़्त एक ज़बर्दस्त नूर चम्का और उस नूर में से यह आवाज़ आई कि ऐ अ़ब्दुल क़ादिर, तूने हमारी इबादत का हक़ अदा कर दिया, अब तू इस मक़ाम पर पहुंच गया कि आज के बाद हमारी तरफ़ से तुम पर कोई इबादत फ़र्ज़ व वाजिब नहीं, नमाज़ तेरी माफ़, तेरा रोज़ा माफ़, तेरा हज और ज़कात माफ़। अब तू जिस तरह चाहे अ़मल कर, हमने तुम्हें जन्नती बना दिया। शैख़ अ़ब्दुल क़ादिर जीलानी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने यह सुनते ही फ़ौरन

जवाब में फ़रमाया कि: "मरदूद, दूर हो जा। यह नमाज़ हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से तो माफ़ नहीं हुई। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सहाबा–ए–किराम से तो माफ़ नहीं हुई, मुझ से कैसे माफ़ हो जायेगी? दूर होजा" यह कह कर शैतान को दूर कर दिया। उसके बाद एक और नूर चम्का जो पहले नूर से भी बड़ा था, उसमें से आवाज़ आई कि: अ़ब्दुल क़ादिर तेरे इल्म ने आज तुझे बचा लिया। वर्ना यह वह दाव है, जिस से मैंने बड़ों बड़ों को हलाक कर दिया है। अगर तेरे पास इल्म न होता तो तू हलाक हो जाता। हज़रत शैख़ ने फ़रमाया कि: मरदूद, दोबारा बहकाता है, मेरे इल्म ने मुझे नहीं बचाया, मेरे अल्लाह ने मुझे बचाया है। बुज़ुर्ग हज़रात फ़रमाते हैं कि यह दूसरा दाव पहले दाव से ज़्यादा संगीन था, इसलिये कि उस वक़्त शैतान ने उनके अन्दर इल्म का नाज़ पैदा करना चाहा था, कि तुम्हारे इल्म और तक़्वे ने तुम्हें बचा लिया। लेकिन आपने उसको भी रद्द कर दिया।

ख़्वाब के ज़रिये हदीस का रद्द करना जायज़ नहीं

भाई! यह रास्ता बड़ा ख़तरनाक है, आज कल ख़ास तौर पर जिस तरह का मिज़ाज बना हुआ है कि लोग ख़्वाब, कश्फ़, करामात और इल्हामात के पीछे पड़े हुए हैं, यह देखे बग़ैर कि शरीअ़त का तक़ाज़ा क्या है? अच्छे ख़ासे दीनदार और पढ़े लिखे लोगों ने यह दावा करना शुरू कर दिया कि मुझे यह कश्फ़ हुआ है कि फ़लां हदीस सही नहीं है, और सही बुख़ारी और सही मुस्लिम की फ़लां हदीस यहूदी की घड़ी हुई है, और मुझे यह बात कश्फ़ से मालूम हुई है। अगर इस तरीक़े से कश्फ़ होने लगे तो दीन की बुनियादें हिल जाएं, अल्लाह तआ़ला उन आ़लिमों को अपनी रहमतों में ढांप ले, जिनको हक़ीक़त में अल्लाह तआ़ला ने दीन का मुहाफ़िज़ बनाया, ये दीन के चौकीदार हैं। लोग उन पर हज़ार लानतें मलामतें करें, लेकिन अल्लाह तआ़ला ने उनको दीन का मुहाफ़िज़ और निगहबान

बनाया, ताकि कोई दीन पर हमला न कर सके, और दीन में कमी ज़्यादती न हो। चुनांचे उलमा ने साफ़ साफ़ कह दिया कि चाहे ख़्वाब हो, या कश्फ़ हो, या करामत हो, इन में से कोई चीज़ भी दीन में हुज्जत नहीं, वे चीज़ें हुज्जत हैं जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से बेदारी (जागने) के आलम में साबित हैं। कभी ख़्वाब, कश्फ़ और इल्हाम और करामत के धोखे में मत आना। हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि सही कश्फ़ तो दीवानों, बल्कि काफ़िरों को भी हो जाता है, इसलिये कभी इस धोखे में मत आना कि नूर नज़र आ गया, या दिल चलने लगा, या दिल धड़कने लगा वग़ैरह। इसलिये कि ये सब चीज़ें ऐसी हैं कि शरीअत में इन चीज़ों पर फ़ज़ीलत का कोई मदार नहीं।

ख़्वाब देखने वाला क्या करे?

हज़रत अबू क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि अच्छा ख़्वाब अल्लाह तआला की तरफ़ से होता है, और बुरा ख़्वाब शैतान की तरफ़ से होता है। इसलिये जो शख़्स ख़्वाब में कोई ऐसी चीज़ देखे जो नागवार (ना पसन्द) हो, तो बायें जानिब तीन बार थुत्कार दे, और "अऊज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम" पढ़ ले, जिस करवट पर ख़्वाब देखा था उसकी जगह दूसरी करवट बदल ले, फिर यह ख़्वाब इन्शा अल्लाह उसको कोई नुक़्सान नहीं पहुंचायेगा। जैसे कभी कभी इन्सान कुछ डरावने ख़्वाब देख लेता है, या कोई बुरा वाक़िआ देख लेता है तो ऐसे मौक़े के लिए हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तल्क़ीन फ़रमा दी कि जैसे ही आंख खुले, फ़ौरन यह अमल करे, और अगर कोई अच्छा ख़्वाब देखे। जैसे अपने बारे में कोई दीनी या दुनियावी तरक़्क़ी देखी, तो इस सूरत में अपने जानने वाले और अपने मुहब्बत करने वालों के सामने उस ख़्वाब का

तज़्किरा करे, दूसरों को न बताये, क्योंकि कभी कभी एक आदमी वह ख़्वाब सुन कर उसकी उल्टी सीधी ताबीर बयान कर देता है, जिसकी वजह से उस अच्छे ख़्वाब की ताबीर उसके मुताबिक़ हो जाती है, इसलिये अपने मुहब्बत करने वालों को वह ख़्वाब बताए, और उस पर अल्लाह तआला का शुक्र अदा करे। (बुख़ारी शरीफ़)

ख़्वाब बयान करने वाले के लिए दुआ करना

अगर कोई शख़्स यह कहे कि मैंने ख़्वाब देखा है, और फिर वह अपना ख़्वाब बयान करने लगे तो ऐसे मौक़े पर हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मामूल यह था कि जब कोई शख़्स आकर बताता कि मैंने यह ख़्वाब देखा है, तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यह दुआ पढ़ते थेः

"خيرا تلقاه وشرا توقاه، خيرلنا وشرلاعدائنا"

यानी अल्लाह तआला इस ख़्वाब की ख़ैर तुमको अता फ़रमाए, और इसकी बुराई से तुम्हारी हिफ़ाज़त फ़रमाए, और ख़ुदा करे कि यह ख़्वाब हमारे लिए अच्छा हो, और हमारे दुश्मनों के लिए बुरा हो, इस दुआ में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सारी बातें जमा फ़रमा दीं, आप हज़रात भी इसका मामूल बना लें कि जब भी कोई शख़्स आकर अपना ख़्वाब बयान करे तो उसके लिए यह दुआ करें, अगर अ़र्बी में याद न हो तो उर्दू ही में कर लें। ये हैं ख़्वाब के आदाब, और ख़्वाब की हैसियत, बस इन बातों को ज़ेहन में रखना चहिए। लोगों में बहुत सी फ़ुज़ूल बातें ख़्वाब के बारे में फैली हुई हैं, उनसे अपने आपको बचाना चाहिए। अल्लाह तआला हम सब की हिफ़ाज़त फ़रमाए और दीन पर सही तरीक़े से अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

واخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

सुस्ती का इलाज

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰٓى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا۔ اَمَّا بَعْدُ:

امابعد! فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ۔ وَالَّذِيْنَ جَاهَدُوْا فِيْنَا لَنَهْدِيَنَّهُمْ سُبُلَنَا، وَاِنَّ اللّٰهَ لَمَعَ الْمُحْسِنِيْنَ۔ (العنكبوت:٦٩)

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم، وصدق رسوله النبی الكريم، ونحن علىٰ ذالك من الشاهدين والشاكرين، والحمد لله رب العالمين۔

सुस्ती का मुक़ाबला "हिम्मत" से करें

मैं पिछले दिनों रंगून और बर्मा के कुछ दूसरे शहरों के सफ़र पर था। मुसल्सल दस बारह दिन सफ़र में गुज़रे। लगातार बयानात का सिलसिला रहा। एक एक दिन में कभी कभी चार चार, पांच पांच बयानात हुए। इसलिये आवाज़ बैठी हुई है, और तबीयत में थकान भी है, और इत्तिफ़ाक़ से कल दोबारा हरमैन शरीफ़ैन (यानी मक्का और मदीना पाक) का सफ़र पेश आ गया है। इसलिये आज तबीयत सुस्ती कर रही थी, और यह ख़्याल हो रहा था कि जब पिछले जुमा में नाग़ा हो गया था तो एक जुमा और सही, लेकिन अपने हज़रत डा० साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि की एक बात याद आ गयी, वह यह कि एक बार आपने इर्शाद फ़रमाया कि:

"जब किसी मामूल के पूरा करने में सुस्ती हो रही हो तो वही मौक़ा इन्सान के इम्तिहान का है, अब एक सूरत तो यह है कि उस सुस्ती के आगे हथियार डाल दे, और नफ़्स की बात मान ले। तो फिर इसका नतीजा यह होगा कि आज एक मामूल में हथियार डाले,

कल को नफ़्स दूसरे मामूल में हथियार डलवायेगा, और फिर आहिस्ता आहिस्ता तबीयत उस सुस्ती के ताबे और उसकी आदी हो जायेगी।

और दूसरी सूरत यह है कि इन्सान उस सुस्ती का हिम्मत से मुकाबला करके उस काम को कर गुज़रे, मेहनत और मशक़्क़त करके ज़बर्दस्ती उस काम को करे, तो फिर मेहनत और मशक़्क़त और मुक़ाबला करने की बर्कत से अल्लाह तआला आइन्दा भी मामूलात के पूरा करने की तौफ़ीक़ फ़रमायेंगे।"

तसव्वुफ़ का हासिल "दो बातें"

और ऐसे मौक़े पर हमारे हज़रते वाला हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि का एक मल्फूज़ (कही हुई बात) सुनाया करते थे। हक़ीक़त में यह मल्फूज़ याद रखने, बल्कि दिल पर नक़्श करने के क़ाबिल है, हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि:

"वह ज़रा सी बात जो हासिल है तसव्वुफ़ का, यह है कि जिस वक़्त किसी ताअत (नेक काम) की अदायगी में सुस्ती हो, तो उस सुस्ती का मुक़ाबला करके उस ताअत को करे, और जिस वक़्त किसी गुनाह का दाअिया (तक़ाज़ा) पैदा हो, तो उस दाअिए (तक़ाज़े) का मुक़ाबला करके उस गुनाह से बचे, जब यह बात हासिल हो जाए तो फिर किसी और चीज़ की ज़रूरत नहीं। इसी से अल्लाह के साथ ताल्लुक़ पैदा होता है। इसी से मज़्बूत होता है और इसी से तरक़्क़ी करता है"।

बहर हाल, सुस्ती दूर करने का सिर्फ़ एक ही रास्ता है, यानी उस सुस्ती का हिम्मत से मुक़ाबला करना, लोग यह समझते हैं कि शैख़ कोई नुस्ख़ा घोल कर पिला देगा तो सारी सुस्ती दूर हो जायेगी, और सब काम ठीक होते चले जायेंगे। याद रखो कि सुस्ती का मुक़ाबला हिम्मत से ही होगा, इसका और कोई इलाज नहीं।

नफ़्स को बहला फुस्ला कर इस से काम लो

हमारे हज़रत डाक्टर अब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि नफ़्स को ज़रा बहला फुस्ला कर इस से काम लिया करो, अपना वाक़िआ बयान फ़रमाया कि रोज़ाना तहज्जुद पढ़ने का मामूल था, आख़िर उमर और कमज़ोरी के ज़माने में एक दिन बिहम्दिल्लाह तहज्जुद के वक़्त जब आंख खुली तो तबीयत में बड़ी सुस्ती और भारी पन था, दिल में ख़्याल आया कि आज तो तबीयत भी पूरी तरह ठीक नहीं है, सुस्ती भी है, और उमर भी तुम्हारी ज़्यादा है, और तहज्जुद की नमाज़ कोई फ़र्ज़ व वाजिब भी नहीं है, पड़े रहो, और आज अगर तहज्जुद छोड़ दोगे तो क्या हो जायेगा, फ़रमाते हैं कि मैंने सोचा कि बात तो ठीक है, कि तहज्जुद फ़र्ज़ या वाजिब भी नहीं है और तबीयत भी ठीक नहीं है, बाक़ी यह वक़्त तो अल्लाह तआ़ला की बारगाह में क़ुबूलियत का वक़्त है। हदीस शरीफ़ में आता है कि जब रात का एक तिहाई हिस्सा गुज़र जाता है तो अल्लाह तआ़ला की खुसूसी रहमतें ज़मीन वालों पर मुतवज्जह होती हैं और अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से मुनादी पुकारता है कि कोई मग़फ़िरत का मांगने वाला है कि उसकी मग़फ़िरत की जाये, ऐसे वक़्त को बेकार गुज़ारना भी ठीक नहीं है, फिर अपने नफ़्स को ख़िताब करके कहा कि अच्छा ऐसा करो कि नमाज़ मत पढ़ो लेकिन उठ कर बिस्तर पर ही बैठ जाओ और बैठ कर थोड़ी सी दुआ़ कर लो, और दुआ़ करके फिर दोबारा सो जाना, चुनांचे मैं फ़ौरन उठ कर बैठ गया, और दुआ़ करनी शुरू कर दी, अब दुआ़ करते करते फिर नफ़्स से कहा कि मियांः जब तुम उठ कर बैठ गये तो नींद तो तुम्हारी चली गयी, अब तो गुस्ल ख़ाने तक चले जाओ, और इस्तिंजा वग़ैरह से फ़ारिग़ हो जाओ, फिर आराम से आकर लेट जाना, चुनांचे मैं गुस्ल ख़ाने में पहुंच गया, और इस्तिंजा वग़ैरह से फ़ारिग़ हो गया तो

सोचा कि चलो वुज़ू कर लो, इसलिये कि वुज़ू करके दुआ करने में कुबूलियत की उम्मीद ज़्यादा है, चुनांचे वुज़ू भी कर लिया, और बिस्तर पर वापस आकर बैठ गया, और दुआ शुरू कर दी, फिर नफ़्स को बहलाया कि बिस्तर पर बैठ कर क्या दुआ हो रही है, दुआ करने की जो तुम्हारी जगह है, वहीं जाकर दुआ कर लो और नफ़्स को जाये नमाज़ तक खींच कर ले गया, और जब जाये नमाज़ पर पहुंचा तो जल्दी से दो रक्अ़त तहज्जुद की नियत बांध ली।

फिर फ़रमाया कि: इस नफ़्स को थोड़ा सा बहलावा दे देकर भी लाना पड़ता है, जिस तरह यह नफ़्स तुम्हारे साथ नेक काम को टलाने का मामला करता है इसी तरह तुम भी इसके साथ ऐसा ही मामला किया करो, और इसको खींच खींच कर ले जाया करो, इन्शा अल्लाह इसकी बरकत से अल्लाह तआ़ला फिर उस अ़मल की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमा देंगे।

अगर राष्ट्रपति की तरफ़ से बुलावा आ जाए

हमारे हज़रत डा० साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि अगर तुमने अपना यह मामूल बना कर रखा है कि फ़लां वक़्त में तिलावत करूंगा, या फ़लां वक़्त में नफ़िल नमाज़ पढूंगा। लेकिन जब वह वक़्त आया तो तबीयत में सुस्ती हो रही है और उठने को दिल नहीं चाह रहा है तो ऐसे वक़्त में अपने नफ़्स की ज़रा तर्बियत किया करो, और उस नफ़्स से कहो कि अच्छा इस वक़्त तो तुम्हें सुस्ती हो रही है, और उठने को दिल नहीं चाह रहा है। लेकिन यह बताओ कि अगर इस वक़्त राष्ट्रपति की तरफ़ से यह पैग़ाम आ जाए कि हम तुम्हें बहुत बड़ा इनाम या बहुत बड़ा ओहदा देना चाहते हैं, इसलिये तुम इस वक़्त फ़ौरन हमारे पास आ जाओ। बताओ, क्या उस वक़्त भी सुस्ती रहेगी? और क्या तुम पैग़ाम लाने वाले को यह जवाब दोगे कि मैं इस वक़्त नहीं आ सकता, क्योंकि इस वक़्त तो मुझे नींद आ

रही है। कोई भी इन्सान जिस में ज़रा भी अक्ल व होश है, राष्ट्रपति का यह पैग़ाम सुन कर उसकी सारी सुस्ती, काहिली और नींद दूर हो जायेगी और खुशी के मारे फौरन इनाम हासिल करने के लिए भाग खड़ा होगा।

इसलिये अगर उस वक़्त यह नफ़्स इनाम के हासिल करने के लिए भाग पड़ेगा तो इस से मालूम हुआ कि हकीकत में उठने से कोई उज्र नहीं था। अगर हकीकत में उठने से कोई उज्र होता तो राष्ट्रपति का पैग़ाम सुन कर न उठते, बल्कि बिस्तर पर पड़े रहते। इसके बाद यह सोचो कि दुनिया का एक बादशाह जो बिल्कुल आजिज़, इन्तिहाई आजिज़ है, वह अगर तुम्हें एक इनाम या ओहदा देने के लिए बुला रहा है तो तुम उसके लिए इतना भाग सकते हो, लेकिन वह तमाम हाकिमों का हाकिम, जिसके कब्ज़ा-ए-कुदरत में पूरी कायनात है। देने वाला वही है, छीनने वाला वही है। उसकी तरफ से बुलावा आ रहा है तो उसके दरबार में हाज़िर होने में सुस्ती कर रहे हो? इन बातों का तसव्वुर करने से इन्शा अल्लाह उस काम की हिम्मत हो जायेगी, और सुस्ती दूर हो जायेगी।

कल पर मत टालो

कभी कभी यह होता है कि एक नेक अमल का दिल में ख़्याल पैदा हुआ, कि यह नेक काम करना चाहिए, लेकिन फिर इन्सान का नफ़्स उसको यह बहकाता है कि यह काम तो अच्छा है लेकिन कल से यह काम शुरू करेंगे। याद रखो, यह नफ़्स का धोखा है। इसलिये कि वह कल फिर नहीं आती, जो काम करना है वह आज ही अभी शुरू कर दो, क्या पता कल आए या न आए, क्या मालूम कि कल को मौका मिले या न मिले, क्या पता कल यह दाईया (जज़्बा और तकाज़ा) मौजूद रहे या न रहे, क्या पता कल को हालात मुवाफिक रहें या न रहें, और क्या पता कल को ज़िन्दगी रहे या न रहे। इसलिये कुरआने करीम में अल्लाह तआला ने इरशद फरमाया:

"وَسَارِعُوْآ إِلَىٰ مَغْفِرَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَجَنَّةٍ عَرْضُهَا السَّمٰوٰتُ وَالْأَرْضُ"

(سورة آل عمران:١٣٣)

"यानी अपने परवर्दिगार की मग़्फ़िरत की तरफ़ जल्दी दौड़ो, देर न करो, और उस जन्नत की तरफ़ दौड़ो, जिसकी चौड़ाई सारे आसमान और ज़मीन के बराबर है।"

बहर हाल, यह अर्ज़ कर रहा था कि आज मुझे सुस्ती हो रही थी, मगर अपने हज़रते वाला की ये बातें याद आ गयीं, जिसकी वजह से आने की हिम्मत हो गयी, और चला आया।

अपने फ़ायदे के लिए हाज़िर होता हूं

दूसरे यह कि यहां हकीकत में अपने फ़ायदे के लिए हाज़िर होता हूं, और मैं तो यह सोचता हूं कि अल्लाह के नेक बन्दे नेक तलब लेकर दीन की बातें सुनने के लिए यहां जमा होते हैं, मुझे भी उनकी बर्कतें हासिल हो जाती हैं। बत यह है कि जब अल्लाह के बन्दे दीन की ख़ातिर किसी जगह जमा होते हैं तो आपस में एक दूसरे पर बर्कतों का साया पड़ता है, इसलिये मैं तो हमेश इस नियत से आता हूं कि नेक लोगों की बकर्तें हासिल करूं।

ज़िन्दगी के ये लम्हात किस काम के?

तीसरे यह कि हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि की एक बात और याद आ गयी, यह बात भी मैंने हज़रते वाला ही से सुनी! फ़रमाया कि जब हज़रते वाला बीमार और बिस्तर पर थे, और इलाज करने वालों और डाक्टरों ने आपको मिलने जुलने और बात करने से मना कर रखा था, एक दिन आंखें बन्द करके बिस्तर पर लेटे हुए थे, लेटे लेटे अचानक आंख खोली और फ़रमाया कि मौलवी मुहम्मद शफ़ी साहिब कहां हैं, उनको बुलाओ। "मौलवी मुहम्मद शफ़ी साहिब" से मुराद मेरे वालिद साहिब हैं, हज़रते वाला ने मेरे वालिद साहिब को "अहकामुल कुरआन" अरबी ज़बान में लिखने पर लगा रखा था। चुनांचे वालिद साहिब तशरीफ़ लाए तो उनसे फ़रमाया कि आप

"अह्कामुल कुरआन" लिख रहे हैं. मुझे अभी ख़्याल आया कि कुरआने करीम की जो फलां आयत है. उस से फलां मस्अला निकलता है. यह मस्अला मैंने इस से पहले कहीं नहीं देखा. मैंने आपको इसलिये बता दिया कि जब आप इस आयत पर पहुंचें तो इस मस्अले को भी लिख लीजियेगा। यह कह कर फिर आंखें बन्द करके लेट गए। अब देखिए कि मौत की बीमारी में लेटे हुए हैं. मगर दिल व दिमाग़ में कुरआने करीम की आयात और उनकी तफ़्सीर घूम रही है। थोड़ी देर के बाद फिर आंखें खोलीं और फ़रमाया कि फलां शख़्स को बुलाओ। जब वह साहिब आ गये तो उन से मुताल्लिक़ कुछ काम बता दिया। जब बार बार आपने ऐसा किया तो मौलाना शब्बीर अली साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि जो हज़रत की ख़ानक़ाह के नाज़िम थे. और हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि से बे-तकल्लुफ़ थे. उन्हों ने हज़रत से फ़रमाया कि हज़रत, डाक्टरों और हकीमों ने तो बात चीत करने से मना कर रखा है, मगर आप लोगों को बार बार बुला कर उनसे बातें करते रहते हैं। खुदा के लिए आप हमारी जान पर तो रहम करें। उनके जवाब में हज़रते वाला ने क्या अजीब जुम्ला इरशाद फ़रमाया। फ़रमाया कि:

"बात तो तुम ठीक कहते हो. लेकिन मैं यह सोचता हूं कि वे ज़िन्दगी के लम्हे किस काम के जो किसी की ख़िदमत में ख़र्च न हों. अगर किसी की ख़िदमत के अन्दर उमर गुज़र जाए तो यह अल्लाह तआला की नेमत है।"

दुनिया के मनासिब और ओह्दे

यह "ख़ादमियत" यह बड़ी अजीब है। अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल व करम से हमारे दिलों में पैदा फ़रमा दे। हर एक के ख़ादिम बनो, अपने अन्दर ख़िदमत का जज़्बा पैदा करो। हज़रत डा० साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि दुनिया के तमाम ओहदों का हाल यह है कि अगर इन्सान उनको हासिल करना चाहे, तो

हासिल करना इख़्तियार में नहीं होता। जैसे दिल चाह रहा है कि मैं "राष्ट्रपति" बन जाऊं, लेकिन राष्ट्रपति बनना अपने इख़्तियार में नहीं। या दिल चाह रहा है कि "वज़ीरे आज़म" (प्रधान मन्त्री) बन जाऊं। लेकिन वज़ीरे आज़म बनना अपने इख़्तियार में नहीं, या दिल चाह रहा है कि विधान सभा का सिर्फ़ मिम्बर बन जाऊं, वह भी इख़्तियार में नहीं, या कहीं अफ़सर बनना चाहता है, नौकरी हासिल करना चाहता है, तो अब उसके लिए दरख़्वास्त दो, इन्टरव्यू दो, कितने पापड़ बेलो, और तमाम कोशिशें करने के बाद जब वह ओहदा हासिल हो गया तो अब लोग हसद करने लगे कि यह हम से आगे बढ़ गया और हम पीछे रह गये। अब उसके ख़िलाफ़ साज़िशें होने लगीं कि किसी तरह यह ओहदा उस से छीन लिया जाए। चुनांचे अच्छा ख़ासा वज़ीरे आज़म बना हुआ था, अब ख़त्म हो गया। ओहदा छिन गया। सदर बना हुआ था, ख़त्म हो गया। तो दुनिया के सारे ओहदों और मन्सबों का यही हाल है कि न तो इनका हासिल करना अपने इख़्तियार में है और अगर हासिल हो जाए तो उस पर बर–क़रार रहना अपने इख़्तियार में नहीं। फिर लोग उस पर हसद भी करते हैं। फ़रमाया करते थे कि:

"मैं तुम्हें एक ऐसा अलग ओहदा बताता हूं कि जिसका हासिल करना भी अपने इख़्तियार में है, और अगर तुम वह ओहदा हासिल कर लो तो कोई तुम्हारे ऊपर हसद भी नहीं करेगा, और न कोई तुम से लड़ेगा। और न कोई तुम्हें उस से बर–तरफ़ कर सकता है। वह है "ख़ादिम" का ओहदा, तुम ख़ादिम बन जाओ। यह ओहदा अपने इख़्तियार में है, इसके लिये दरख़्वास्त देने की भी ज़रूरत नहीं, न वोट डालने की ज़रूरत है न चुनाव की ज़रूरत है, अगर यह ओहदा हासिल हो जाए तो इस पर दूसरों को हसद भी नहीं नहीं होता, इसलिये कि यह तो काम ही ख़िदमत का कर रहा है तो अब दूसरा शख़्स इस पर क्या हसद करेगा, और न कोई शख़्स तुम्हें इस ओहदे

से हटा सकता है। इसलिये फ़रमाया कि ख़ादिम बन जाओ, किस के ख़ादिम बन जाओ? अपने घर वालों के ख़ादिम बन जाओ, घर का जो काम करो ख़िदमत की नियत से करो। अपनी बीवी का ख़ादिम, अपने बच्चों का ख़ादिम, अपने दोस्तों का ख़ादिम और जो कोई मिलने वाले आयें, उनकी भी ख़िदमत करो, और अल्लाह की मख़्लूक़ की अल्लाह के नेक बन्दों की ख़िदमत करो, जो काम भी करो, ख़िदमत की नियत से करो, अगर वअ्ज़ कह रहे हो, यह भी ख़िदमत के लिए, किताब लिख रहे हो, वह भी ख़िदमत के लिए, इस ख़ादमियत के ओहदे को हासिल करो, इसलिये कि सारे झगड़े मख़्दूम बनने में हैं। इसलिये हज़रते वाला ख़ुद अपने बारे में फ़रमाया करते थे कि मैं तो अपने आपको ख़ादिम समझता हूं, अपनी बीवी का ख़ादिम, अपने बच्चों का ख़ादिम, अपने मुरीदों का ख़ादिम, अपने ताल्लुक़ात वालों का ख़ादिम, और यह वह ओहदा है कि जिस में शैतानी वस्वसे भी कम होते हैं। इसलिये कि घमंड, तकब्बुर, बड़ाई, वग़ैरह उन ओहदों में पैदा होती है, जो दुनियावी एतिबार से बड़े समझे जाते हैं, अब ख़ादिम के ओहदे में क्या बड़ाई है। इसलिये शैतानी वस्वसे भी नहीं आते, इस वास्ते इसको हासिल करने की कोशिश करो।

बुज़ुर्गों की ख़िदमत में हाज़री का फ़ायदा

बहर हाल, मैं यह अर्ज़ कर रहा था कि आज तबीयत में सुस्ती हो रही थी, लेकिन हमारे हज़रते वाला की ये बातें याद आ गयीं और हिम्मत हो गयी, और अल्लाह वालों से ताल्लुक़ क़ायम करने का यही फ़ायदा होता है, अब मालूम नहीं कि ये बातें हज़रते वाला ने कब कही होंगी, हमारी तरफ़ से न तो तलब थी, न ख़्वाहिश थी, न कोई कोशिश थी, मगर हज़रते वाला ने ज़बर्दस्ती कुछ बातें कान में डाल दीं, और वे बातें अल्लाह का शुक्र है कि वक़्त पर याद आ जाती हैं, और काम बना देती हैं।

यह बात तुम्हारी हो गयी, वक़्त पर याद आ जायेगी

हज़रते वाला फ़रमाया करते थे कि मज्लिस में जो बातें होती हैं। कुछ लोग यह चाहते हैं कि उन बातों को याद कर लें, मगर ये बातें याद नहीं होतीं। इस पर अपना वाक़िआ सुनाया कि मैं भी हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि की मज्लिस में जब हाज़िर होता था तो यह दिल चाहता था कि हज़रते वाला की बातें लिख लिया करूं, कुछ लोग लिख लिया करते थे। मुझ से तेज़ लिखा नहीं जाता था इसलिये मैं लिखने से रह जाता था। मैंने एक दिन हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि से अर्ज़ किया कि हज़रत! मेरा दिल चाहता है कि मल्फ़ूज़ात लिख लिया करूं मगर लिखा नहीं जाता, और याद रहते नहीं हैं, भूल जाता हूं। हज़रत थानवी रह० ने जवाब में फ़रमाया कि लिखने की क्या ज़रूरत है, ख़ुद साहिबे मल्फ़ूज़ क्यों नहीं बन जाते? हज़रते वाला फ़रमाते हैं कि मैं तो थर्रा गया कि मैं कहां साहिबे मल्फ़ूज़ बन सकता हूं, फिर हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि बात असल में यह है कि जो बात हक़ हो और सही समझ पर मब्नी हो, सही फ़िक्र पर मब्नी हो। जब ऐसी बात तुम्हारे कान में पड़ गयी और तुम्हारे दिल ने उसे क़ुबूल कर लिया, तो वह बात तुम्हारी हो गयी, अब चाहे वह बात उसी तरह उन्हीं लफ़्ज़ों में याद रहे या न रहे, जब वक़्त आयेगा इन्शा अल्लाह उस वक़्त याद आ जायेगी, और उस पर अमल की तौफ़ीक़ हो जायेगी।

बुज़ुर्गों की ख़िदमत में जाने और उनकी बातें सुनने का यही फ़ायदा होता है कि वे कान में बातें डालते रहते हैं, डालते रहते हैं। यहां तक कि ये बातें इन्सान की तबीयत में दाख़िल हो जाती हैं और फिर वक़्त पर याद आ जाती हैं।

ज़बरदस्ती कान में बातें डाल दीं

मैं आज सोचता हूं कि हज़रत वालिद माजिद रहमतुल्लाहि

अलैहि, हज़रत डा० साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि और हज़रत मौलाना मसीहुल्लाह ख़ां साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि इन तीनों बुज़ुर्गों से मेरा ताल्लुक रहा है, अपना हाल तो तबाह ही था मगर अल्लाह तआला ने इन बुज़ुर्गों की ख़िदमत में हाज़री की तौफ़ीक़ अता फ़रमा दी, यह उनका फ़ज़्ल व करम था, अब सारी उमर भी इस पर शुक्र अदा करूं तब भी अदा नहीं हो सकता, ये बुज़ुर्ग कुछ बातें ज़बरदस्ती कानों में डाल गये, अपनी तरफ़ से जिनकी न तो तलब थी और न ख़्वाहिश, और अगर मैं उन बातों को अब नम्बरवार लिखना चाहूं जो इन बुज़ुर्गों की मज्लिस में सुनी थीं, तो फ़ौरी तौर पर सब का याद आना मुश्किल है, लेकिन किसी न किसी मौके पर वे बातें याद आ जाती हैं, और बुज़ुर्गों से ताल्लुक का यही फ़ायदा होता है, और जिस तरह बुज़ुर्गों की ख़िदमत में हाज़री नेमत है, और उनकी बात सुनना नेमत है, इसी तरह इन बुज़ुर्गों के मल्फ़ूज़ात, हालात, जीवनियां पढ़ना भी उसके क़ायम मक़ाम हो जाता है। आज ये हज़रात मौजूद नहीं हैं मगर अल्लाह का शुक्र है कि सब बातें लिखी हुई छोड़ गये हैं, उनको पढ़ना चाहिए ये बातें काम आ जाती हैं। अल्लाह तआला अपनी रहमत से हमें इन बुज़ुर्गों का दामन थामे रखने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

"उज़्र" और "सुस्ती" में फ़र्क़

बहर हाल, यह अर्ज़ कर रहा था कि जब भी सुस्ती हो, इस सुस्ती का मुक़ाबला करना चाहिए, और मामूल को पूरा करना चाहिए। देखिए, "उज़्र" और चीज़ है, "सुस्ती" और चीज़ है, अगर उज़्र की वजह से मामूल छूट जाए तो फिर कोई ग़म नहीं। जैसे बीमारी की वजह से मामूल छूट गया, या सफ़र की वजह से मामूल छूट गया, इसमें कोई हर्ज नहीं, इसलिये कि अल्लाह तआला ने इस पर पकड़ नहीं फ़रमाई, बल्कि उज़्र की वजह से रियायत दी है, तो फिर हम

खुद कौन होते हैं पाबन्दी कराने वाले? इसलिये किसी उज़ की वजह से उसके छूटने पर रंज नहीं करना चाहिए।

यह रोज़ा किस के लिए रख रहे थे?

हमारे हज़रत डा० अब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि हज़रत थानवी रह० की यह बात नक़ल फ़रमाते थे कि एक शख़्स रमज़ान में बीमार हो गया, और बीमारी की वजह से रोज़ा छूट गया, अब उसको इस बात का ग़म हो रहा है कि रमज़ान का रोज़ा छूट गया। हज़रत फ़रमाते हैं कि ग़म करने की कोई बात नहीं, इसलिये कि यह देखो कि तुम रोज़ा किस के लिए रख रहे हो? अगर तुम अपनी ज़ात के लिए, अपना जी ख़ुश करने के लिए, अपना शौक़ पूरा करने के लिए रोज़ा रख रहे हो, फिर तो बेशक इस पर ग़म और सदमा करो कि बीमारी आ गयी और रोज़ा छूट गया, लेकिन अगर अल्लाह तआला के लिए रोज़ा रख रहे हो तो फिर ग़म करने की ज़रूरत नहीं, इसलिये कि अल्लाह तआला ने तो खुद फ़रमा दिया है कि बीमारी में रोज़ा छोड़ दो।

इसलिये अगर शरई उज़ की वजह से रोज़े क़ज़ा हो रहे हैं, या मामूलात छूट रहे हैं, जैसे बीमारी है, सफ़र है, या औरतों की तबई मज्बूरी है या किसी ज़्यादा अहम मस्रूफ़ियत की वजह से जो दीन ही का तक़ाज़ा थी, मामूल छूट गया, जैसे मां बाप बीमार हैं, उनकी ख़िदमत में लगा हुआ है, और उस ख़िदमत की वजह से मामूल छूट गया, तो इस से बिल्कुल रन्जीदा और ग़मगीन न होना चाहिए। लेकिन सुस्ती की वजह से मामूल छोड़ना नहीं चाहिए। उज़ की वजह से छूट जाए तो उस पर रन्जीदा न होना चाहिए।

सुस्ती का इलाज

और सुस्ती का अकेला इलाज यह है कि इसका मुक़ाबला करो, और इसके आगे डट जाओ, और हिम्मत से मुक़ाबला करो, इसका इलाज सिवाए हिम्मत इस्तेमाल करने के और कुछ नहीं है। अगर

हमारी ज़िन्दगियों में सिर्फ़ यह बात भी आ जाए, यानी "सुस्ती का मुकाबला करना" तो समझ लो कि आधा काम हो गया, और उसके बाद बकिया आधे काम के हासिल करने की कोशिश करे। अल्लाह तआला अपनी रहमत से सुस्ती का मुकाबला करने की हिम्मत और तौफ़ीक अता फ़रमाये, आमीन।

واٰخر دعوانا ان الحمد للّٰہ رب العالمین

आंखों की हिफ़ाज़त कीजिए

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰٓى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا. اَمَّا بَعْدُ:

اما بعد! فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ. قُلْ لِّلْمُؤْمِنِيْنَ يَغُضُّوْا مِنْ اَبْصَارِهِمْ وَيَحْفَظُوْا فُرُوْجَهُمْ، ذٰلِكَ اَزْكٰى لَهُمْ اِنَّ اللّٰهَ خَبِيْرٌۢ بِمَا يَصْنَعُوْنَo (النور: ٣٠)

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم، وصدق رسوله النبى الكريم، ونحن على ذالك من الشاهدين والشاكرين، والحمد لله رب العالمين.

एक हलाक करने वाली बीमारी

इस आयत में अल्लाह तआला ने हमारी एक बीमारी का बयान फ़रमाया है। वह है "बद—निगाही" यह बद—निगाही ऐसी बीमारी है जिसमें लोग बेहद मुब्तला हैं, अच्छे ख़ासे पढ़े लिखे लोग, उलमा, अल्लाह वालों की सोहबत में उठने बैठने वाले, दीनदार, नमाज़ रोज़े के पाबन्द भी इस बीमारी के अन्दर मुब्तला हो जाते हैं, और आज कल तो हालत यह है कि अगर आदमी घर से बाहर निकले तो आंखों का बचाना मुश्किल नज़र आता है, हर तरफ़ ऐसे मनाज़िर हैं कि उन से आंखों को पनाह मिलनी मुश्किल है।

बद-निगाही की हक़ीक़त

"बद—निगाही" का हासिल यह है कि किसी ग़ैर मेहरम पर निगाह डालना, ख़ास कर जब्कि शहवत (ख़्वाहिश) के साथ निगाह डाली जाए, या लज़्ज़त हासिल करने के लिए निगाह डाली जाए, चाहे वह ग़ैर मेहरम हक़ीक़ी तौर पर ज़िन्दा हो, और चाहे ग़ैर मेहरम

की तस्वीर हो। उस पर भी निगाह डालना हराम है, और "बद–निगाही" के अन्दर दाख़िल है।

यह बद–निगाही का अ़मल अपने नफ़्स की इस्लाह के रास्ते में सब से बड़ी रुकावट है, और यह अ़मल इन्सान के बातिन के लिए इतना तबाह–कुन है कि दूसरे गुनाहों से यह बहुत आगे बढ़ा हुआ है, और इन्सान के बातिन (अन्दर) को ख़राब करने में इसका बहुत दख़ल है, जब तक इस अ़मल की इस्लाह न हो, और निगाह क़ाबू में न आए, उस वक़्त तक बातिन की इस्लाह का तसव्वुर तक़रीबन मुहाल है, हदीस शरीफ़ में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि:

"النظر سهم مسموم من سهام ابليس" (مجمع الزوائد)

यानी यह "नज़र" शैतान के तीरों में से एक ज़हर भरा तीर है, यह तीर जो शैतान के कमान से निकल रहा है। अगर किसी ने उसको ठन्डे पेटों बर्दाश्त कर लिया, और उसके आगे हथियार डाल दिए, तो इसका मतलब यह है कि बातिन (अन्दर की हालत) की इस्लाह में अब बड़ी रुकावट खड़ी हो गयी, इसलिये कि इन्सान के बातिन को ख़राब करने में जितना दख़ल इस आंख के ग़लत इस्तेमाल का है, शायद किसी और अ़मल का न हो।

यह कड़वा घूंट पीना पड़ेगा

मैंने अपने शैख़ हज़रत डाक्टर अ़ब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि से सुना, फ़रमाते थे कि निगाह का ग़लत इस्तेमाल बातिन के लिए क़ातिल ज़हर है, अगर बातिन की इस्लाह (सुधार) मन्ज़ूर है तो सब से पहले इस निगाह की हिफ़ाज़त करनी होगी। यह काम बड़ा मुश्किल नज़र आता है। ढूंडने से भी आंखों को पनाह नहीं मिलती, हर तरफ़ बे पर्दगी, बे हिजाबी, नंगापन और अश्लीलता का बाज़ार गर्म है, ऐसे में अपनी निगाहों को बचाना मुश्किल नज़र आता है, लेकिन अगर ईमान की मिठास हासिल करना मन्ज़ूर है और अल्लाह

जल्ल जलालुहू के साथ ताल्लुक़ और मुहब्बत मन्ज़ूर है, और अपने बातिन की सफ़ाई, तज़्किया और तहारत मन्ज़ूर है, तो फिर यह कड़वा घूंट ऐसा है कि शुरू में तो बहुत कड़वा होता है, मगर जब ज़रा इसकी आदत डाल लो तो फिर यह घूंट ऐसा मीठा हो जाता है कि फिर इसके बग़ैर चैन भी नहीं आता।

अ़रब वालों का क़ह्वा

अ़रब के लोग क़ह्वा पिया करते हैं, आप हज़रात ने भी देखा होगा कि वे छोटे छोटे प्यालों में क़ह्वा पीते हैं। मुझे याद है कि जब मैं छोटा बच्चा ही था, उस वक़्त क़तर के एक शैख़ कराची आए हुए थे, हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के साथ में भी उनसे मिलने के लिए चला गया, उस मुलाक़ात के दौरान वहां मज्लिस में पहली बार वह क़ह्वा देखा, वह क़ह्वा सब को पीने के लिए पेश किया गया। जब क़ह्वा का लफ़्ज़ सुना तो ज़ेहन में यही ख़्याल आया कि मीठा होगा, लेकिन जब उसको ज़बान से लगाया तो वह इतना कड़वा था कि उसको हलक़ से उतारना मुश्किल हो गया। हालांकि वह ज़रा सा क़ह्वा था, और उसका ज़ायक़ा भी कड़वा था, और अब वहां मज्लिस में बैठ कर कुल्ली तो कर नहीं सकते थे, इसलिये मज्बूरन उसको किसी तरह हलक़ से उतारा, लेकिन जब हलक़ से उतारा तो अब ज़रा उसका सुरूर महसूस हुआ, उसके बाद फिर एक और मज्लिस में पीने का इत्तिफ़ाक़ हुआ, आहिस्ता आहिस्ता अब यह हालत हो गयी कि अब इतना प्यारा और इतना मज़ेदार लगता है जिसकी कोई इन्तिहा नहीं, इसलिये कि अब पीने की आ़दत हो गयी है।

फिर मिठास और लज़्ज़त हासिल होगी

इसी तरह यह भी ऐसा कड़वा घूंट है कि शुरू में इसको पीना बड़ा दुश्वार मालूम होता है। लेकिन पीने के बाद जब इसका सुरूर चढ़ेगा तो फिर देखोगे कि इसके पीने में क्या लुत्फ़ है। अल्लाह

तआला इसकी मिठास हम सब को अता फ़रमा दे, आमीन। बहर हाल, यह ऐसी कड़वी चीज़ है कि एक बार इसकी कड़वाहट को बर्दाश्त कर लो, और एक बार दिल पर पत्थर रख कर इसकी कड़वाहट को निगल जाओ, तो फिर इन्शा अल्लाह, अल्लाह तआला ऐसी मिठास, ऐसा सुरूर और ऐसी लज़्ज़त अता फ़रमायेंगे कि उसके आगे इस बद-निगाही की लज़्ज़त कुछ नहीं है, उसके आगे इसकी कोई हक़ीक़त नहीं।

आंखें बड़ी नेमत हैं

यह आंख एक मशीन है और यह अल्लाह तआला की ऐसी नेमत है कि इन्सान इसका तसव्वुर नहीं कर सकता, और बे मांगे मिल गयी, और मुफ़्त में मिल गयी है, इसके लिए कोई मेहनत और पैसा ख़र्च नहीं करना पड़ा, इसलिये इस नेमत की क़द्र नहीं है। उन लोगों से जाकर पूछो जो इस नेमत से महरूम हैं। नाबीना हैं, या तो बीनाई (निगाह) चली गयी है। या जिनके पास यह नेमत शुरू ही से नहीं है, उनसे पूछो कि यह आंख क्या चीज़ है? और ख़ुदा न करे, अगर बीनाई (निगाह) में कोई ख़लल आने लगे, और बीनाई जाती हुई मालूम होने लगे तो उस वक़्त मालूम होगा कि सारी कायनात अन्धेरी हो गयी है। और उस वक़्त इन्सान अपनी सारी दौलत ख़र्च करके भी यह चाहेगा कि मुझे यह दौलत दोबारा हासिल हो जाए, और यह ऐसी मशीन है कि आज तक ऐसी मशीन कोई ईजाद नहीं कर सका।

सात मील का सफ़र एक लम्हे में

मैंने एक किताब में पढ़ा था कि अल्लाह तआला ने इन्सान की आंख में जो यह पुत्ली रखी है, यह अन्धेरे में फैलती है और रोशनी में सकुड़ जाती है। जब आदमी अन्धेरे से रोशनी में आता है या रोशनी से अन्धेरे में आता है तो उस वक़्त यह सकुड़ने और फैलने का अमल होता है, और इस सकुड़ने और फैलने में आंख के आसाब सात मील का फ़ासला तै करते हैं, लेकिन इन्सान को पता भी नहीं

चलता कि क्या बात हुई, ऐसी नेमत अल्लाह तआला ने हमें अता फ़रमा दी है।

आंख का सही इस्तेमाल

अब अगर इस नेमत का सही इस्तेमाल करोगे तो अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि मैं तुमको उस पर सवाब भी दूंगा, जैसे इस आंख के ज़रिये मुहब्बत की निगाह अपने मां बाप पर डालो, तो हदीस शरीफ़ में है कि एक हज और एक उमरे का सवाब मिलेगा, अल्लाहु अक्बर, एक दूसरी हदीस में है कि शौहर घर में दाख़िल हुआ, और उसने अपनी बीवी को मुहब्बत की निगाह से देखा और बीवी ने शौहर को मुहब्बत की निगाह से देखा तो अल्लाह तआला दोनों को रहमत की निगाह से देखते हैं। जब इस आंख को सही जगह पर इस्तेमाल किया जा रहा है तो सिर्फ़ यह नहीं कि अल्लाह तआला उस पर लज़्ज़त और लुत्फ़ अता फ़रमा रहे हैं बल्कि उस पर अज्र और सवाब भी अता फ़रमा रहे हैं। लेकिन अगर इसका ग़लत इस्तेमाल करोगे और ग़लत जगह पर निगाह डालोगे, और ग़लत चीज़ें देखोगे तो फिर इसका वबाल भी बड़ा सख़्त है। और यह अमल इन्सान के बातिन को ख़राब करने वाला है।

बद-निगाही से बचने का इलाज

इस बद–गिनाही से बचने का एक ही रास्ता है, वह यह है कि हिम्मत से काम लेकर यह तै कर लो कि यह निगाह ग़लत जगह पर नहीं उठेगी। उसके बाद फिर चाहे दिल पर आरे ही क्यों न चल जाएं, लेकिन इस निगाह को मत डालो।

आरज़ुएं ख़ून हों या हस्रतें बर्बाद हों
अब तो इस दिल को बनाना है तेरे क़ाबिल मुझे

बस हिम्मत और इरादा करके इस निगाह को बचाऐ, तो फिर देखो कि अल्लाह तआला की तरफ़ से कैसी मदद और नुस्रत आती है, हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने इस आंख को बुरी नज़र से

बचाने की कुछ तदबीरें बयान फ़रमाई हैं, वे याद रखने की हैं, फ़रमाते हैं कि:

"अगर कोई औरत नज़र आए और नफ़्स यह कहे कि: एक दफ़ा देख ले, क्या हर्ज है? क्योंकि तू बद-फ़ेली तो करेगा नहीं। तो यह समझ लेना चाहिए कि यह नफ़्स का धोखा है और तरीक़ा नजात का यह है कि अ़मल न किया जाए"। (अन्फ़ासे ओ़सा)

इसलिये कि यह शैतान का धोखा है, वह कहता है कि देखने में क्या हर्ज है? देखना तो इसलिये मना है ताकि इन्सान किसी बुरे काम के अन्दर मुब्तला न हो, और यहां बुरे काम का इम्कान ही नहीं। इसलिये देख लो, कोई हर्ज नहीं। हज़रते वाला फ़रमाते हैं कि यह नफ़्स की चाल है, और इसका इलाज यह है कि इस पर अमल न किया जाए, और चाहे जितना भी तकाज़ा हो रहा हो निगाह को वहां से हटा ले।

शह्वानी ख़्यालात का इलाज

हज़रत डा० साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि एक बार फ़रमाने लगे कि यह जो गुनाह के दाओ़ए (जज़्बे) और तकाज़े पैदा होते हैं। इनका इलाज इस तरह करो कि जब दिल में यह सख़्त तकाज़ा पैदा हो कि इस निगाह को ग़लत जगह इस्तेमाल करूं और इस निगाह को ग़लत जगह इस्तेमाल करके लज़्ज़त हासिल करूं। तो उस वक़्त ज़रा सा यह तसव्वुर करो कि अगर मेरे वालिद साहिब मुझे इस हालत में देख लें, क्या फिर भी यह हर्कत करता रहूंगा? या अगर मुझे यह मालूम हो कि मेरे शैख़ मुझे इस हालत में देख रहे हैं, क्या फिर भी यह काम जारी रखूंगा? या मुझे पता हो कि मेरी औलाद मेरी इस हर्कत को देख रही है तो क्या फिर भी यह काम जारी रखूंगा? ज़ाहिर है कि अगर इनमें से कोई भी मेरी इस हर्कत को देख रहा होगा तो मैं अपनी नज़र नीची कर लूंगा, और यह काम नहीं करूंगा। चाहे दिल में कितना ही सख़्त तकाज़ा पैदा क्यों न हो।

फिर यह तसव्वुर करो कि इन लोगों के देखने से मेरी दुनिया व आख़िरत में कोई फर्क नहीं पड़ता। लेकिन मेरी इस हालत को जो अह्कमुल हाकिमीन देख रहा है उसकी परवाह मुझे क्यों न हो, इसलिये कि वह मुझे इस पर सज़ा भी दे सकता है। इस ख़्याल और तसव्वुर की बर्कत से उम्मीद है कि अल्लाह तआला इस गुनाह से महफ़ूज़ रखेंगे।

तुम्हारी ज़िन्दगी की फ़िल्म चला दी जाए तो?

हज़रत डाक्टर साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि की एक बात और याद आ गयी, फ़रमाते थे कि ज़रा इस बात का तसव्वुर करो कि अगर अल्लाह तआला आख़िरत में तुम से यों फ़रमायें कि: अच्छा अगर तुम्हें जहन्नम से डर लग रहा है, तो चलो हम तुम्हें जहन्नम से बचा लेंगे, लेकिन इसके लिये एक शर्त है, वह यह कि हम एक यह काम करेंगे कि तुम्हारी पूरी ज़िन्दगी जो बचपन से जवानी और बुढ़ापे तक और मरने तक तुमने गुज़ारी है, उसकी हम फ़िल्म चलायेंगे और उस फ़िल्म के देखने वालों में तुम्हारा बाप होगा, तुम्हारी मां होगी, बहन भाई होंगे, तुम्हारी औलाद होगी, तुम्हारे शागिर्द होंगे, तुम्हारे उस्ताद होंगे, तुम्हारे दोस्त व अह्बाब होंगे। और उस फ़िल्म के अन्दर तुम्हारी पूरी ज़िन्दगी का नक़्शा सामने कर दिया जायेगा, अगर तुम्हें यह बात मन्ज़ूर हो तो फिर तुम्हें जहन्नम से बचा लिया जायेगा।

इसके बाद हज़रत फ़रमाते थे कि ऐसे मौक़े पर आदमी शायद आग के अज़ाब को गवारा कर लेगा, मगर इस बात को गवारा नहीं करेगा कि इन तमाम लोगों के सामने मेरी ज़िन्दगी का नक़्शा आ जाए......इसलिये जब अपने मां बाप, दोस्त अह्बाब, अज़ीज़ व क़रीबी लोगों और मख़्लूक़ के सामने अपनी ज़िन्दगी के हालात का आना गवारा नहीं तो फिर इन हालात का अल्लाह तआला के सामने आना कैसे गवारा कर लोगे? इसको ज़रा सोच लिया करो।

दिल का माइल होना और मचलना गुनाह नहीं

फिर आगे दूसरे मल्फ़ूज़ में इर्शाद फ़रमाया कि:

"बद–निगाही में एक दर्जा मैलान का है, जो ग़ैर इख़्तियारी है, और उस पर पकड़ नहीं, और एक दर्जा है उसके तक़ाज़े पर अ़मल करने का, यह इख़्तियारी है। इस पर पकड़ है। (अन्फ़ासे ईसा)

मैलान का मतलब यह है कि देखने का बहुत दिल चाह रहा है, दिल मचल रहा है, यह दिल का चाहना, मचलना और माइल होना चूंकि यह ग़ैर इख़्तियारी है, इसलिये इस पर पकड़ भी नहीं, अल्लाह तआ़ला के यहां इस पर इन्शा अल्लाह कोई गिरफ़्त नहीं होगी, कोई गुनाह नहीं होगा......लेकिन दूसरा दर्जा यह है कि इस दिल के चाहने पर अ़मल कर लिया, और उसकी तरफ़ निगाह उठा दी, यह इख़्तियारी है, और इस पर पकड़ भी है। या निगाह ग़ैर इख़्तियारी तौर पर पड़ गयी थी, अब उस निगाह को अपने इख़्तियार से बाक़ी रखा। इस पर पकड़ है, और इस पर भी गुनाह है। तो मैलान का पहला दर्जा जो ग़ैर इख़्तियारी है, वह माफ़ है, इस पर गिरफ़्त नहीं, और दूसरा दर्जा इख़्तियारी है, इस पर पकड़ है, आगे फ़रमाया:

सोच कर मज़ा लेना हराम है

"और इस अ़मल में इरादा करके देखना और सोचना सब दाख़िल है, और इसका इलाज नफ़्स का रोकना और निगाह का झुकाना है"।

किसी अजनबी और ना–मेहरम औरत का तसव्वुर करके लज़्ज़त (मज़ा) लेना, यह भी इसी तरह हराम है जैसे बद–निगाही हराम है, तो देखना भी इसमें दाख़िल है और सोचना भी इस में दाख़िल है। और इसका इलाज यह बता दिया कि नफ़्स को रोको, आगे पीछे, इधर उधर, और दायें बायें देखने के बजाए ज़मीन की तरफ़ निगाह रखते हुए चले।

रास्ते में चलते वक़्त निगाह नीची रखो

हज़रते वाला रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि जब अल्लाह तआ़ला ने शैतान को जन्नत से निकाला तो ज़ाते जाते वह दुआ मांग गया कि या अल्लाह, मुझे क़ियामत तक की मोहलत दे दीजिए, और अल्लाह तआ़ला ने उसको मोहलत दे दी। अब उसने अकड़ फूं दिखाई, चुनांचे उस वक़्त उसने कहा कि:

"لَآتِيَنَّهُمْ مِنْ بَيْنِ أَيْدِيهِمْ وَمِنْ خَلْفِهِمْ وَعَنْ أَيْمَانِهِمْ وَعَنْ شَمَائِلِهِمْ"

(سورة الاعراف:١٧)

यानी मैं उन बन्दों के पास उनकी दायीं तरफ़ से, बायीं तरफ़ से, आगे से और पीछे से जाऊंगा, और चारों तरफ़ से उन पर हमला करूंगा। हज़रते वाला फ़रमाते हैं कि शैतान ने चार सिम्तें तो बयान कर दीं, तो मालूम हुआ कि शैतान इन्हीं चारों से हमला करता है, कभी आगे से करेगा, कभी पीछे से करेगा, कभी बायें से करेगा, कभी बायें से करेगा, लेकिन दो सिम्तें वह छोड़ गया, उनको नहीं बयान किया। एक ऊपर की सिम्त और एक नीचे की सिम्त। इसलिये ऊपर की सिम्त भी महफ़ूज़ और नीचे की सिम्त भी महफ़ूज़ है, अब अगर निगाह ऊपर करके चलोगे तो ठोकर खाकर गिर जाओगे, इसलिये अब एक ही रास्ता रह गया कि नीचे की तरफ़ निगाह करके चलोगे तो इन्शा अल्लाह चारों तरफ़ के हमले से महफ़ूज़ रहोगे। इसलिये बिला वजह इधर उधर न देखो, बस अल्लाह अल्लाह करते हुए नीचे देखते हुए चलो। फिर देखोगे कि अल्लाह तआ़ला किस तरह तुम्हारी हिफ़ाज़त करते हैं, अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि:

"قُلْ لِلْمُؤْمِنِينَ يَغُضُّوا مِنْ أَبْصَارِهِمْ وَيَحْفَظُوا فُرُوجَهُمْ" (النور:٣٠)

यानी मोमिनों से कह दो कि अपनी निगाहों को नीची कर लें, तो ख़ुद क़ुरआने करीम में अल्लाह तआ़ला ने निगहा नीचे करने का हुक्म फ़रमा दिया, और फिर आगे इसका नतीजा बयान फ़रमा दिया कि इसकी वजह से शरम-गाहों की हिफ़ाज़त हो जायेगी।

यह तक्लीफ़ जहन्नम की तक्लीफ़ से कम है

हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि आगे फ़रमाते हैं कि:

"हिम्मत करके इन (दोनों) को इख़्तियार करे, अगरचे नफ़्स को तक्लीफ़ हो, मगर यह तक्लीफ़ जहन्नम की आग की तक्लीफ़ से कम है।"

यानी इस वक़्त तो निगाह को बचाने से तक्लीफ़ हो रही है। लेकिन इस बद-निगाही के बदले जो जहन्नम का अज़ाब है, उस तक्लीफ़ के मुक़ाबले में यह तक्लीफ़ लाखों करोड़ों बल्कि अरबों गुना कम है, बल्कि यहां की तक्लीफ़ को वहां की तक्लीफ़ से कोई निस्बत ही नहीं, क्योंकि वहां का अज़ाब बे इन्तिहा है, कभी ख़त्म होने वाला नहीं, और यहां की तक्लीफ़ ख़त्म होने वाली है। आगे फ़रमाया कि:

हिम्मत से काम लो

"जब कुछ दिन हिम्मत से ऐसा किया जायेगा तो मैलान में भी कमी हो जायेगी, बस यही इलाज है, इसके सिवा कुछ इलाज नहीं, चाहे सारी उमर परेशान रहे।"

इसलिये कि जब इन्सान मेहनत और मशक़्क़त बर्दाश्त करता है, तो अल्लाह तआला ने उसके लिए वादा फ़रमाया है कि:

"وَالَّذِيْنَ جَاهَدُوْا فِيْنَا لَنَهْدِيَنَّهُمْ سُبُلَنَا" (سورة العنكبوت:٦٩)

यानी जो शख़्स हमारे रास्ते में मुजाहदा करेगा हम ज़रूर उसको रास्ता दिखा देंगे। तो वह मुजाहदा करने वाले को रास्ता देते हैं, इसलिये मुजाहदा करके नज़र नीची कर लोगे तो आख़िर कार अल्लाह तआला मैलान भी कम फ़रमा देंगे, इन्शा अल्लाह। बस यही इलाज है इसके अलावा कुछ इलाज नहीं, अगरचे सारी उमर हैरान व परेशान रहो, लोग यह चाहते हैं कि जब हम शैख़ के पास जायें तो शैख़ ऐसी फूंक मारे, या ऐसा नुस्ख़ा पिला दे, या ऐसा वज़ीफ़ा पढ़ दे, कि बस यह मैलान ख़त्म हो जाए। अरे भाई ऐसा नहीं हुआ करता। जब तक इन्सान हिम्मत से काम न ले।

दो काम कर लो

देखो, दो काम कर लो, एक हिम्मत को इस्तेमाल करो, दूसरे अल्लाह तआला की तरफ़ रुजू करो। " हिम्मत के इस्तेमाल" का मतलब यह है कि अपने आपको जहां तक हो सके जितना बचा सकते हो बचा लो, और "अल्लाह की तरफ़ रुजू" का मतलब यह कि जब कभी ऐसी आज़माइश पेश आए तो फ़ौरन अल्लाह तआला की तरफ़ रुजू करके कहो, या अल्लाह अपनी रहमत से मुझे बचा लीजिए, मेरी आंख को बचा लीजिए, मेरे ख़्यालात को बचा लीजिए। अगर आपने मदद न फ़रमाई तो मैं मुब्तला हो जाऊंगा।

हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम की सीरत अपनाओ

हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम जब आज़माइश में मुब्तला हुए तो उन्हों ने भी यही काम किया कि अपनी तरफ़ से कोशिश की। चुनांचे जब जुलेख़ा ने चारों तरफ़ से दरवाज़े में ताले डाल दिए और हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम को गुनाह की दावत दी, उस वक़्त हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम अपनी आंखों से देख रहे थे कि दरवाज़े पर ताले पड़े हुए हैं और निकलने का कोई रास्ता नहीं है, मगर हज़रत यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम दरवाज़ों की तरफ़ भाग पड़े, अब जब्कि आंखों से नज़र आ रहा है कि दरवाज़ों पर ताले पड़े हुए हैं तो भाग कर कहां जाओगे रास्ता तो है नहीं। मगर चूंकि अपने इख़्तियार में तो इतना ही था कि दरवाज़े तक भाग जाते, चुनांचे जब अपने हिस्से का काम कर लिया और अपने इख़्तियार में जो था वह कर लिया, और दरवाज़े तक पहुंच गये तो अल्लाह तआला से यह कहने के हक़दार बन गये कि या अल्लाह मेरे इख़्तियार में तो बस इतना ही था, मेरे बस में इस से ज़्यादा नहीं, अब आगे तो आपके करने का काम है, तो जब अपने हिस्से का काम करके अल्लाह तआला से मांग लिया कि या अल्लाह बाक़ी आगे का काम आपके क़ब्ज़े में है, तो फिर अल्लाह तआला ने भी अपने हिस्से का काम कर लिया, और उन्हों ने

भी दरवाज़ों के ताले तोड़ दीए। इसी बात को मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अलैहि कितने ख़ूबसूरत अन्दाज़ में बयान फ़रमाते हैं कि:

गरचे रख़्ना नेस्त आलम रा पदीद
ख़ैरा यूसुफ़ दार मी बायद दवीद

अगरचे तुम्हें इस दुनिया के अन्दर कोई रास्ता और कोई पनाह लेने की जगह नज़र नहीं आ रही है। चारों तरफ़ से गुनाहों की दावत दी जा रही है, लेकिन तुम दीवानों की तरह इस तरह भागो जिस तरह हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम भागे, तुम जितना भाग सकते हो उतना तो भाग लो, बाक़ी अल्लाह से मांगो। बहर हाल, अगर इन्सान ये दो काम कर ले, एक अपनी हिम्मत की हद तक काम कर ले, और दूसरे अल्लाह से मांगे, यक़ीन कीजिए दुनिया में कामयाबी का सब से बड़ा राज़ यही है।

हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम का तरीक़ा इख़्तियार करो

हमारे हज़रत डा० अब्दुल हई साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि भी बड़ी अजीब अजीब बातें इर्शाद फ़रमाया करते थे, फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम को तीन दिन तक मछली के पेट में रखा, अब वहां से निकलने का कोई रास्ता नहीं था, चारों तरफ़ तारीकियां और अन्धेरियां छाई हुई थीं, और मामला अपने बस से बाहर हो गया था। बस उस वक़्त उन अन्धेरियों में अल्लाह तआला को पुकारा और यह कलिमा पढ़ा:

"لَآ اِلٰهَ اِلَّآ اَنْتَ سُبْحَانَكَ اِنِّیْ كُنْتُ مِنَ الظّٰلِمِیْنَ"

'ला इला–ह इल्ला अन्–त सुब्हान–क इन्नी कुन्तु मिन–ज़्ज़ालिमीन'

अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि जब उसने हमें अन्धेरियों के अन्दर पुकारा तो फिर हमने यह कहा:

"فَاسْتَجَبْنَا لَهٗ وَنَجَّيْنَاهُ مِنَ الْغَمِّ، وَكَذٰلِكَ نُنْجِي الْمُؤْمِنِيْنَ" (سورة الانبياء:٨٨)

यानी हमने उसकी पुकार सुनी, और हमने उस घुटन से उसको

नजात अता फ़रमा दी, चुनांचे तीन दिन के बाद मछली के पेट से निकल आए। आगे अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि हम इसी तरह मोमिनों को नजात देते हैं और देंगे। हज़रत डा० साहिब फ़रमाया करते थे कि तुम ज़रा सोचो तो सही कि अल्लाह तआला ने यहां क्या लफ़्ज़ इस्तेमाल फ़रमाया, कि हम मोमिनों को इसी तरह नजात देंगे? क्या हर मोमिन पहले मछली के पेट में जायेगा, और वहां जाकर अल्लाह तआला को पुकारेगा, तो अल्लाह तआला उसको नजात देंगे? क्या इस आयत का यही मतलब है? आयत का यह मतलब नहीं, बल्कि आयत का मतलब यह है कि जिस तरह हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम मछली के पेट में अन्धेरियों में गिरफ़्तार हुए थे, इसी तरह तुम किसी और क़िस्म की अन्धेरियों में गिरफ़्तार हो सकते हो, लेकिन वहां पर भी तुम्हारा सहारा वही है जिसे हज़रत यूनुस अलैहिस्सलाम ने इख़्तियार किया था। वह यह कि हमें इन अल्फ़ाज़ से पुकारो!

"لَآ اِلٰهَ اِلَّآ اَنْتَ سُبْحَانَكَ اِنِّیْ كُنْتُ مِنَ الظّٰلِمِیْنَ"

'ला इला–ह इल्ला अन्–त सुब्हान–क इन्नी कुन्तु मिन–ज़्ज़ालिमीन'

जब तुम इन अल्फ़ाज़ से हमें पुकारोगे तो जिस क़िस्म की अन्धेरी में गिरफ़्तार होगे, हम तुम्हें नजात दे देंगे।

हमें पुकारो

इसलिये जब नफ़्स के तक़ाज़ों की तारीकियां (अन्धेरियां) सामने आयें, माहौल की ज़ुल्मतें और तारीकियां सामने आयें तो उस वक़्त तुम हमें पुकारो, या अल्लाह, इन तारीकियों से बचा लीजिए। इन तारीकियों से निकाल दीजिए। इन अन्धेरों से बाहर कर दीजिए। इनकी बुराई से महफ़ूज़ फ़रमाइये। जब दुआ करोगे तो फिर मुम्किन नहीं है कि यह दुआ क़बूल न हो।

दुनियावी मक़सदों के लिए दुआ की क़ुबूलियत

देखिए, जब इन्सान किसी दुनियावी मक़सद के लिए अल्लाह पाक से दुआ मांगता है। जैसे ये दुआयें करता है कि या अल्लाह मुझे सेहत दे दे, या अल्लाह मुझे पैसे दे दे, या अल्लाह, मुझे फलां नौकरी दे दे, या अल्लाह, मुझे फलां ओहदा दे दे। वैसे तो हर दुआ क़ुबूल होती है, मगर क़ुबूलियत के अन्दाज़ अलग अलग होते हैं। कभी कभी तो वही चीज़ अल्लाह तआला दे देते हैं जो मांगी थी। जैसे पैसा मांगा था, अल्लाह तआला ने पैसा दे दिया। या अल्लाह तआला से कोई ओहदा मांगा था, वह दे दिया। लेकिन कभी कभी अल्लाह तआला यह समझते हैं कि यह इन्सान अपनी बे-वक़ूफ़ी और नादानी की वजह से ऐसी चीज़ मांग रहा है, अगर मैंने उसको दे दी तो वह चीज़ उसके लिए अज़ाब हो जायेगी। जैसे पैसा मांग रहा है, लेकिन अगर मैंने उसको पैसा दे दिया तो उसका दिमाग़ ख़राब हो जायेगा, और यह फ़िरऔन बन जायेगा। अपनी दुनिया भी ख़राब करेगा, और आख़िरत भी ख़राब करेगा। इसलिऐ हम इसको ज़्यादा पैसे नहीं देते, या जैसे एक शख़्स ने कोई ओहदा या मन्सब मांग लिया लेकिन अल्लाह तआला को मालूम था कि अगर यह ओहदा इसको मिल गया तो यह मालूम नहीं क्या क्या फसाद बर्पा करेगा, इसलिये कभी कभी वह चीज़ देना मुनासिब नहीं होता जो उसने मांगी है, इसलिये उसके बजाए अल्लाह तआला उस से अच्छी चीज़ दे देते हैं।

दीनी मक़सद की दुआ ज़रूर क़ुबूल होती है

लेकिन अगर कोई शख़्स दीन मांग रहा है, और यह दुआ कर रहा है कि या अल्लाह, मुझे दीन पर चला दे, मुझे सुन्नत पर चला दीजिए, मुझे गुनाहों से बचा लीजिए, तो क्या इसमें इस बात का इम्कान (संभावना) है कि दीन पर चलने में नुक़सान ज़्यादा है, और किसी और रास्ते पर चलने में नुक़सान कम है? और अल्लाह तआला दीन के बजाए वह दूसरे रास्ते पर चला दें? चूंकि इस बात का

इम्कान ही नहीं इसलिये वह दुआ जो दीन के लिए मांगी जाती है। कि या अल्लाह, मुझे दीन अता फ़रमा दे। या अल्लाह, मुझे गुनाहों से बचा ले। या अल्लाह, मुझे नेकियां और अच्छाइयां अता फ़रमा दे। ये दुआयें तो ज़रूर क़बूल होनी हैं, इसमें क़बूल न होने का कोई इम्कान ही नहीं। इसलिये जब भी अल्लाह तआला से दुआ मांगो तो इस यक़ीन के साथ मांगो कि ज़रूर क़बूल होगी।

दुआ के बाद अगर गुनाह हो जाए?

हमारे हज़रत डा० साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि जब तुमने यह दुआ मांग ली कि या अल्लाह, मुझे गुनाह से बचा लीजिए, लेकिन इस दुआ के बाद फिर तुम गुनाह के अन्दर मुब्तला हो गये, इसका मतलब यह हुआ कि दुआ क़बूल नहीं हुई। दुनिया के मामले में तो यह जवाब दिया था कि जो चीज़ बन्दे ने मांगी थी, चूंकि वह बन्दे के लिए मुनासिब नहीं थी इसलिये अल्लाह तआला ने वह चीज़ नहीं दी, बल्कि कोई और चीज़ दे दी। लेकिन एक शख़्स यह दुआ करता है कि या अल्लाह, मैं गुनाह से बचना चाहता हूं मुझे गुनाह से बचने की तौफ़ीक़ दे दीजिए, तो क्या यहां भी यह जवाब दे सकते हैं कि गुनाह से बचना अच्छा नहीं था, इस से अच्छी कोई चीज़ थी, जो अल्लाह तआला ने इस दुआ मांगने वाले को दे दी?

तौबा की तौफ़ीक़ ज़रूर हो जाती है

बात असल में यह है कि गुनाह से बचने की यह दुआ क़बूल तो हुई, लेकिन इस दुआ का असर यह होगा कि अव्वल तो इन्शा अल्लाह गुनाह सर्ज़द नहीं होगा, (अमल में नहीं आयेगा) और अगर मान लें कि गुनाह हो भी गया तो तौबा की तौफ़ीक़ ज़रूर हो जायेगी, इन्शा अल्लाह। यह नहीं हो सकता कि तौबा की तौफ़ीक़ न हो, इसलिये दीन के बारे में यह दुआ कभी रायगां नहीं जा सकती, कभी यह दुआ बेकार नहीं हो सकती। और अगर गुनाह के बाद तौबा की तौफ़ीक़ हो जाए तो वह तौबा कभी कभी इन्सान को इतना ऊंचा ले

जाती है. और उसका इतना दर्जा बुलन्द करती है कि कभी कभी गुनाह न करने की सूरत में उसका दर्जा इतना बुलन्द न होता। और वह इतना ऊंचा न जाता. इसलिये कि ग़लती सादिर होने के बाद जब अल्लाह तआला के सामने उसने तौबा की, रोया, गिड़गिड़ाया तो अल्लाह तआला ने उसके नतीजे में उसका दर्जा और ज़्यादा बुलन्द कर दिया।

फिर हम तुम्हें बुलन्द मक़ाम पर पहुंचायेंगे

इसलिये हमारे हज़रत डा० साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि इस दुआ करने के बा-वजूद अगर पांव फिसल गया, और वह गुनाह उस से हो गया तो अल्लाह तआला से बदगुमान मत हो जाओ कि अल्लाह मियां ने हमारी दुआ क़ुबूल नहीं की, अरे नादान! तुझे क्या मालूम, हम तुझे कहां पहुंचाना चाहते हैं। इसलिये कि जब गुनाह ज़ाहिर होगा तो फिर हम तुम्हें तौबा की तौफ़ीक़ देंगे, फिर हम तुम्हें अपनी सत्तारी का, ग़फ़्फ़ारी का, अपनी पर्दा पोशी का, अपनी रहमतों के नाज़िल होने का मक़ाम बनायेंगे। इसलिये इस दुआ को कभी रायगां और बेकार मत समझो। बस ये दो काम करते रहो। हिम्मत से काम लो और दुआ मांगते रहो। फिर देखो, क्या से क्या हो जाता है, इन्शा अल्लाहु तआला।

तमाम गुनाहों से बचने का सिर्फ़ एक ही नुस्ख़ा

बद-निगाही के बारे में ये बातें अर्ज़ कर दीं। अल्लाह तआला अपनी रहमत से इस पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़र्माये, आमीन। सिर्फ़ बद-निगाही नहीं, दुनिया के हर गुनाह के अन्दर यह ज़रूरी है कि हिम्मत का इस्तेमाल करना, उसको बार बार ताज़ा करना, और अल्लाह तआला से रुजू और दुआ करना, ये दोनों चीज़ें ज़रूरी हैं। इनमें से सिर्फ़ एक चीज़ से काम नहीं बनेगा। अगर सिर्फ़ दुआ करते रहोगे और हिम्मत नहीं करोगे, तो यह चीज़ हासिल नहीं होगी। जैसे एक आदमी पूरब की तरफ़ भागा जा रहा है और साथ में

अल्लाह तआला से दुआ यह कर रहा है कि या अल्लाह, मुझे पश्चिम में पहुंचा दे। अरे तू पूरब की तरफ़ भाग रहा है, और दुआ पश्चिम की कर रहा है, यह दुआ कैसे कुबूल होगी? कम से कम पहले अपना रुख़ तो पश्चिम की तरफ़ कर, और जितना तेरे बस में है वह तो कर ले, और फिर अल्लाह तआला से मांग कि या अल्लाह, मुझे पश्चिम में पहुंचा दे, तब तो वह दुआ फ़ायदेमन्द है, वर्ना वह दुआ दुआ नहीं, वह तो अल्लाह तआला से मज़ाक़ है।

इसलिए पहले रुख़ इस तरफ़ करो और हिम्मत करो, और जितना हो सके, उस तरफ़ क़दम बढ़ाओ, और फिर अल्लाह तआला से मांगो, तमाम गुनाहों से बचने का यही नुस्ख़ा है। इसके अलावा कोई नुस्ख़ा नहीं है, और सारी ताआत (अ़िबादतों और नेक आमाल) को हासिल करने का भी यही नुस्ख़ा है। अल्लाह तआला हम सब को इस पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

واخر دعوانا ان الحمد للہ رب العالمین

खाने के आदाब

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا. اَمَّا بَعْدُ:

عن عمرو بن ابي سلمة رضی الله تعالیٰ عنهما قال: كنت غلاما فی حجر رسول الله صلی الله علیه وسلم وكانت یدی تطیش فی الصحفة، فقال لی رسول الله صلی الله علیه وسلم: یا غلام سم الله وكل بیمینك وكل مما یلیك.

(بخاری شریف)

दीन के पांच शोबे

आप हज़रात के सामने पहले भी कई मर्तबा अर्ज़ कर चुका हूं कि दीन इस्लाम ने जो अहकाम हम पर आयद किए हैं, वे पांच शोबों से मुताल्लिक़ हैं। यानी अक़ायद, इबादात, मामलात, मुआशरत, अख़्लाक़, दीन इन पांच शोबों से मुकम्मल होता है, अगर इनमें से एक को भी छोड़ दिया जायेगा तो फिर दीन मुकम्मल नहीं होगा। इसलिये अक़ायद भी दुरुस्त होने चाहिएं, इबादतें भी सही तरीक़े से अन्जाम देनी चाहिएं। लोगों के साथ लेन देन और ख़रीद व फ़रोख़्त के मामलात भी शरीअ़त के मुताबिक़ होने चाहिएं और बातिन के अख़्लाक़ भी दुरुस्त होने चाहिएं। और ज़िन्दगी गुज़ारने के तरीक़े भी दुरुस्त होने चाहिएं जिस को मुआशरत कहा जाता है।

"मुआशरत" की इस्लाह के बग़ैर दीन नाक़िस है

अब तक अख़्लाक़ का बयान चल रहा था, इमाम नववी रहमतुल्लाहि अलैहि ने एक नया बाब क़ायम फ़रमाया है। इसमें दीन

के जिस शोबे के बारे में हदीसें लाये हैं, वह है "मुआशरत"। मुआशरत का मतलब है दूसरों के साथ ज़िन्दगी गुज़ारना। ज़िन्दगी गुज़ारने के सही तरीक़े क्या हैं? यानी खाना किस तरह खाए? पानी किस तरह पिए? घर में किस तरह रहे? दूसरों के सामने किस तरह रहे? ये सब बातें मुआशरत के शोबे से ताल्लुक़ रखती हैं।

हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि "आज कल लोगों ने मुआशरत को तो दीन से बिल्कुल ख़ारिज कर दिया है, और इसमें दीन के अ़मल दख़ल को लोग क़ुबूल नहीं करते, यहां तक कि जो लोग नमाज़ रोज़े के पाबन्द हैं बल्कि तहज्जुद गुज़ार हैं, ज़िक्र व तस्बीह करने के पाबन्द हैं, लेकिन मुआशरत उनकी ख़राब है। दीन के मुताबिक़ नहीं है, जिसका नतीजा यह है कि उनका दीन नाक़िस है"। इसलिये मुआशरत के बारे में जो अह्काम और तालीमात अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अ़ता फ़रमाई हैं उनको जानना, उनकी अहमियत पहचानना और उन पर अ़मल करना भी ज़रूरी है। अल्लाह तआ़ला हम सब को उन पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

हुज़ूरे अक़्दस सल्ल० हर हर चीज़ सिखा गए

मुआशरत के बारे में अ़ल्लमा नववी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने पहला बाब "खाने पीने के आदाब" से शुरू फ़रमाया है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जिस तरह ज़िन्दगी के हर शोबे से मुताल्लिक़ बड़ी अहम तालीमात अ़ता फ़रमाई हैं। इसी तरह खाने पीने के बारे में भी अहम तालीमात हमें अ़ता फ़रमाई हैं। एक मर्तबा एक मुश्रिक ने इस्लाम पर ऐतराज़ करते हुए हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से कहा कि:

"انی اریٰ صاحبکم یعلمکم کل شئ حتی الخراۃ" قال: اجل، امرنا ان لانستقبل القبلۃ ولا نستنجی بایماننا الخ" (ابن ماجه شریف)

तुम्हारे नबी तुम्हें हर चीज़ सिखाते हैं, यहां तक कि पाख़ाने के लिये आने जाने का तरीक़ा भी सिखाते हैं? उसका मक़्सद ऐतराज़ करना था कि भला पाख़ाने में आने जाने का तरीक़ा भी कोई सिखाने की चीज़ है। यह तो कोई ऐसी अहम बात नहीं थी कि एक नबी और पैग़म्बर जैसा जलीलु क़द्र और अज़ीमुश्शान इन्सान इसके बारे में कुछ कहे। हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु अन्हु ने जवाब में फ़रमाया कि जिस चीज़ को तुम ऐतराज़ के तौर पर बयान कर रहे हो, वह हमारे लिए फ़ख़्र की बात है। यानी हमारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हमें हर चीज़ सिखाई है, यहां तक कि हमें यह भी सिखाया कि जब हम पाख़ाने के लिए जाएं तो क़िब्ला रुख़ न बैठें, और न दाहिने हाथ से इस्तिन्जा करें। जैसे मां बाप अपनी औलाद को सब कुछ सिखाते हैं। इसलिये अगर मां बाप इस बात से शरमाने लगें कि अपनी औलाद को पेशाब पाख़ाने के तरीक़े क्या बताएं तो इस सूरत में औलाद को कभी पेशाब पाख़ाने का सही तरीक़ा नहीं आयेगा। इसी तरह नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हम पर और आप पर मां बाप से कहीं ज़्यादा शफ़ीक़ और मेहरबान हैं। इसलिये आपने हमें हर चीज़ के तरीक़े सिखाए। उनमें खाने का तरीक़ा भी है। और खाने के बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ऐसे ऐसे आदाब बयान फ़रमाए जिनके ज़रिये खाना खाना इबादत बन जाए। और अज्र व सवाब का सबब बन जाए।

खाने के तीन आदाब

चुनांचे यह हदीस जो मैंने अभी पढ़ी, इसमें हज़रत उमर बिन अबी सलमा रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुझ से फ़रमाया कि खाने के वक़्त अल्लाह का नाम लो। यानी "बिस्मिल्लाह" पढ़ कर खाना शुरू करो और अपने दायें हाथ से खाओ, और बर्तन के उस हिस्से से खाओ

जो तुम से क़रीब तर है, आगे हाथ बढ़ा कर दूसरी जगह से मत खाओ। इस हदीस में तीन आदाब बयान फ़रमा दिए।

पहला अदब "बिस्मिल्लाह" पढ़ना

एक और हदीस में हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि हुज़ुरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि जब तुम में से कोई खाना खाना शुरू करे तो अल्लाह का नाम ले, और अगर कोई शख़्स शुरू में बिस्मिल्लाह पढ़ना भूल गया तो उसको चाहिए कि खाना खाने के दौरान जब भी बिस्मिल्लाह पढ़ना याद आए, उस वक़्त ये अल्फ़ाज़ कह दे:

"بسم الله، اوله وآخره" (ابو داؤد شریف)

यानी अल्लाह के नाम के साथ शुरू करता हूं, अव्वल में भी अल्लाह का नाम और आख़िर में भी अल्लाह का नाम।

शैतान के ठहरने और खाने का इन्तिज़ाम मत करो

एक हदीस हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है। फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि जब कोई शख़्स अपने घर में दाख़िल होते वक़्त अल्लाह का नाम लेता है, और खाते वक़्त भी अल्लाह का नाम लेता है तो शैतान अपने साथियों से कहता है कि इस घर में न तो तुम्हारे लिए रात को रहने की कोई गुंजाइश है, और न ही खाने के लिए कोई गुंजाइश है, इसलिये कि उस शख़्स ने घर में दाख़िल होते वक़्त भी अल्लाह का नाम ले लिया, और खाना खाते वक़्त भी अल्लाह का नाम ले लिया। इसलिये न तो यहां ठहरने का इन्तिज़ाम है और न खाने का इन्तिज़ाम है। और अगर किसी शख़्स ने घर में दाख़िल होते वक़्त अल्लाह का नाम नहीं लिया, और वैसे ही घर में दाख़िल हो गया तो शैतान अपने साथियों से कहता है कि लो भाई, तुम्हारे ठहरने का इन्तिज़ाम हो गया। तुम यहां रात गुज़ार सकते हो। क्योंकि यहां पर अल्लाह का नाम नहीं लिया गया, और जब वह

शख़्स खाना खाते वक़्त भी अल्लाह का नाम नहीं लेता तो उस वक़्त शैतान अपने साथियों से कहता है कि तुम्हारे खाने का भी इन्तिज़ाम हो गया। (अबू दाऊद शरीफ़)

बहर हाल, इस से मालूम हुआ कि अल्लाह का नाम न लेने से शैतान का अमल दख़ल हो जाता है, और घर के अन्दर उसके ठहरने का इन्तिज़ाम हो जाने और उसका अमल दख़ल होने का मतलब यह है कि अब वह तुम्हें तरह तरह से बहकायेगा और गुनाह पर आमादा करेगा। ना जायज़ कामों पर आमादा करेगा और तुम्हारे दिल में बदी के ख़्यालात और वस्वसे डालेगा, वहम पैदा करेगा। और खाने का इन्तिज़ाम होने का मतलब यह है कि अब जो खाना तुम खाओगे उसमें अल्लाह की तरफ़ से बर्कत नहीं होगी, और वह खाना तुम्हारे ज़बान के चटख़ारे के लिए तो शायद काफ़ी हो जायेगा लेकिन उस खाने का नूर और बर्कत हासिल न होगी।

घर में दाख़िल होने की दुआ

इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दो बातों की ताकीद फ़रमाई है। एक यह कि जब आदमी घर में दाख़िल हो तो अल्लाह का नाम लेकर दाख़िल हो। और बेहतर यह है कि वह दुआ पढ़े जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मन्क़ूल है वह यह है कि:

"اللهم انى اسئلك خير المولج وخير المخرج، بسم الله ولجنا وبسم الله خرجنا، وعلى الله ربنا توكلنا" (ابوداؤد شریف)

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मामूल था कि जब घर में दाख़िल होते तो यह दुआ पढ़ते थे। जिसका तर्जुमा यह है कि ऐ अल्लाह मैं आप से बेहतरीन दाख़ला मांगता हूं कि मेरा दाख़ला ख़ैर के साथ हो, और जब घर से निकलूं तो भी ख़ैर के साथ निकलूं, इसलिये कि जब आदमी घर में दाख़िल होता है तो उसको कुछ पता नहीं होता कि मेरे पीछे घर में क्या हो गया, हो

सकता है कि घर में दाख़िल होने के बाद तक्लीफ़ की ख़बर मिले, या रंज और सदमे और परेशानी की ख़बर मिले, चाहे वह दुनियावी परेशानी की ख़बर हो, या दीनी परेशानी की ख़बर हो। इसलिये घर में दाख़िल होने से पहले अल्लाह तआ़ला से यह दुआ़ कर लो कि या अल्लाह! मैं घर में दाख़िल हो रहा हूं, अन्दर जाकर मैं अपने घर को और घर वालों को अच्छी हालत में पाऊं। और उसके बाद फिर ज़रूरत से दोबारा घर से निकलना तो होगा, लेकिन वह निकलना भी ख़ैर के साथ हो, कि परेशानी या दुख और तक्लीफ़ की वजह से घर से न निकलना पड़े। जैसे घर में दाख़िल होने के बाद पता चला कि घर वाले बीमार हैं, अब उनके इलाज और दवा के लिए घर से बाहर निकलना पड़ा, या घर में कोई परेशानी आ गयी, और अब परेशानी के इलाज के लिए घर से बाहर निकलना पड़ा, तो यह अच्छी हालत और अच्छे मक़्सद के लिए निकलना न हुआ। इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह दुआ़ तल्क़ीन फ़रमा दी कि घर में दाख़िल होते वक़्त यह दुआ़ पढ़ लिया करो।

दुआ़ पढ़ना याद न आए तो अपने घर के दरवाज़े पर लिख कर लगा लो, ताकि उसको देख कर याद आ जाए। इसलिये कि यह दुआ़ दुनियावी पेरशानियों से बचाने का सबब है और आख़िरत का सवाब और फ़ज़ीलत अलग हासिल होगी। इसलिये जब इन्सान यह दुआ़ पढ़ते हुए दाख़िल हुआ कि मेरा दाख़िल होना भी ख़ैर के साथ हो और मेरा निकलना भी ख़ैर के साथ हो तो फिर बताइये शैतान के उस घर में ठहरने की गुंजाइश कहां बाक़ी रहेगी, इसलिये शैतान कहता है कि इस घर में मेरे लिए ठहरने का इन्तिज़ाम नहीं।

बड़ा पहले खाना शुरू करे

हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि जब हम हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ किसी खाने में शरीक होते तो हमारा मामूल यह था कि जब तक हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु

अ़लैहि व सल्लम खाना शुरू न फ़रमाते, उस वक़्त तक हम लोग खाने की तरफ़ हाथ न बढ़ाते थे, बल्कि इसका इन्तिज़ार करते थे कि जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम खाने की तरफ़ हाथ बढ़ायें उस वक़्त हम खाना शुरू करें।

इस हदीस से फ़ुक़हा–ए–किराम ने यह मस्अला निकाला है कि जब कोई छोटा किसी बड़े के साथ खाना खा रहा हो तो अदब का तक़ाज़ा यह है कि वह छोटा खुद पहले खाना शुरू न करे, बल्कि बड़े के शुरू करने का इन्तिज़ार करे।

शैतान खाना हलाल करना चाहता था

हज़रत हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि एक बार खाने के वक़्त हम हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के साथ हाज़िर थे इतने में एक नौ–उमर बच्ची भागती हुई आई और ऐसा मालूम हो रहा था कि वह भूख से बेताब है। और अभी तक किसी ने खाना शुरू नहीं किया था। इसलिये कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अब तक खाना शुरू नहीं फ़रमाया था मगर उस बच्ची ने आकर जल्दी से खाने की तरफ़ हाथ बढ़ा दिया तो आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसका हाथ पकड़ लिया, और उसको खाने से रोक दिया, फिर थोड़ी देर बाद एक देहाती आया, और मालूम हो रहा था कि वह भी भूख से बहुत बेताब है, और खाने की तरफ़ लपक रहा है, उसने भी आकर खाने की तरफ़ हाथ बढ़ाने का इरादा किया तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसका भी हाथ पकड़ लिया, और उसको भी खाने से रोक दिया। उसके बाद आपने तमाम सहाबा–ए– किराम से ख़िताब फ़रमाते हुए फ़रमाया कि:

"ان الشيطان يستحل الطعام ان لا يذكر اسم الله تعالىٰ عليه وانه جاء بهذه الجارية ليستحل بها، فاخذت ها فجاء هذاالاعرابى ليستحل به فاخذت بيده، والذى نفسى بيده، ان يده فى يدى مع يدها" (مسلم شريف)

शैतान उस खाने को इस तरह अपने लिए हलाल करना चाहता था कि उस खाने पर अल्लाह का नाम न लिया जाए चुनांचे उसने लड़की के ज़रिए खाना हलाल करना चाहा, मगर मैंने उसका हाथ पकड़ लिया। उसके बाद उसने उस देहाती के ज़रिए खाना हलाल करना चाहा, मैंने उसका हाथ पकड़ लिया। अल्लाह की क़सम शैतान का हाथ उस लड़की के हाथ के साथ मेरे हाथ में है।

बच्चों की हिफ़ाज़त करें

इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि बड़े का काम यह है कि अगर छोटा उसकी मौजूदगी में अल्लाह का नाम लिए बग़ैर शुरू कर रहा है तो बड़े को चाहिए कि वह उसको मुतनब्बह करे और ज़रूरत हो तो उसका हाथ भी पकड़ ले, और उस से कहे कि पहले "बिस्मिल्लाह" कहो, फिर खाना खाओ।

आज हम लोग भी अपने घर वालों और बाल बच्चों के साथ खाने पर बैठते हैं। लेकिन इस बात का ख़्याल नहीं होता कि औलाद इस्लामी आदाब का लिहाज़ कर रही है या नहीं, इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस हदीस में इस बात की तालीम दे दी कि बड़े का फ़र्ज़ है कि वह बच्चों की तरफ़ निगाह रखे और उनको टोकता रहे, और उनको इस्लामी आदाब सिखाए, वर्ना खाने की बर्कत दूर हो जायेगी।

शैतान ने क़ै (उल्टी) कर दी

हज़रत उमैया बिन मुह्शी रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तश्रीफ़ फ़रमा थे। आप के सामने एक शख़्स खाना खा रहा था, उसने बिस्मिल्लाह पढ़े बग़ैर यहां तक कि सारा खाना खा लिया, सिर्फ़ एक लुक़्मा बाक़ी रह गया था, जब वह शख़्स उस आख़री लुक़्मे को मुंह की तरफ़ ले जाने लगा तो उस वक़्त याद अया कि मैंने खाना शुरू करने से पहले

बिस्मिल्लाह नहीं पढ़ी थी, और हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तालीम यह है कि जब आदमी खाना खाते वक़्त बिस्मिल्लाह पढ़ना भूल जाए तो खाने के दौरान जब उसको बिस्मिल्लाह याद आए उस वक़्त वह "बिस्मिल्लाहि अव्व–लहू व आख़ि–रहू" पढ़ ले, जब उस शख़्स ने यह दुआ पढ़ी तो हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हंसने लगे, फिर आपने फ़रमाया कि जिस वक़्त यह खाना खा रहा था तो शैतान भी उसके साथ खाना खा रहा था। लेकिन जब उसने अल्लाह का नाम लिया और "बिस्मिल्लाहि अव्व–लहू व आख़ि–रहू" पढ़ लिया तो शैतान ने जो कुछ खाया था, उसकी कै कर दी, और उस खाने में उसका जो हिस्सा था इस एक छोटे से जुम्ले की वजह से वह ख़त्म हो गया। और आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इस मन्ज़र को अपनी आंखों से देख कर मुस्कुराये और आपने इस बात की तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि अगर आदमी खाना शुरू करने से पहले बिस्मिल्लाह पढ़ना भूल गया तो जब याद आ जाए उस वक़्त "बिस्मिल्लाहि अव्व–लहू व आख़ि–रहू" पढ़ ले, इसकी वजह से उस खाने की बे बर्कती ख़त्म हो जायेगी। (अबू दाऊद शरीफ़)

यह खाना अल्लाह की अता है

इन हदीसों से मालूम हुआ कि खाना शुरू करने से पहले बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम पढ़ लेना चाहिए और कहने को तो यह मामूली बात है कि "बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम" पढ़ कर खाना शुरू कर दिया, लेकिन अगर ग़ौर करोगे तो मालूम होगा कि यह इतनी अज़ीमुश्शान इबादत है कि इसकी वजह से एक तरफ़ तो यह खाना खाना इबादत और सवाब का सबब बन जाता है, और दूसरी तरफ़ आदमी अगर ज़रा ध्यान से "बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम" कह ले, तो इसकी वजह से अल्लाह जल्ल जलालुहू की मारिफ़त का बहुत बड़ा दरवाज़ा खुल जाता है, इसलिये कि "बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम" पढ़ना

हक़ीक़त में इन्सान को इस तरफ़ मुतवज्जह कर रहा है कि जो खाना मेरे सामने इस वक़्त मौजूद है यह मेरी हाथ की कुव्वत का करिश्मा नहीं है, बल्कि किसी देने वाले की अ़ता है। मेरे बस में यह बात नहीं थी कि मैं यह खाना मुहैया कर लेता, और इसके ज़रिये अपनी ज़रूरत पूरी कर लेता, अपनी भूख मिटा देता, यह महज़ अल्लाह तआ़ला की अ़ता है और उसका करम है कि उसने मुझे यह खाना अ़ता फ़रमा दिया।

यह खाना तुम तक किस तरह पहुंचा

और हक़ीक़त में यह "बिस्मिल्लाह" का पढ़ना इस तरफ़ तवज्जोह दिलाता है कि ज़रा ग़ौर तो करो कि यह एक निवाला जो तुमने मुंह में रखा और एक सैकन्ड में तुमने हलक़ से नीचे उतार लिया। इस एक निवाले को तुम्हारे मुंह तक पहुंचाने के लिए कायनात की कितनी कुव्वतें ख़र्च हुयीं। ज़रा सोचो तो सही कि रोटी का यह एक टुकड़ा किस तरह तुम तक पहुंचा? कहां किस किसान ने बीज बोने से पहले ज़मीन को नर्म और बराबर करने के लिए कितनी मुद्दत तक बैलों के ज़रिये हल चलाया? और फिर इस ज़मीन के अन्दर बीज डाला, और फिर उसको पानी दिया, फिर उसके ऊपर मुसल्सल हवायें चलीं, सूरज ने उसके ऊपर अपनी रोशनी की किरनें डालीं, और फिर अल्लाह तआ़ला ने बादल भेज कर बारिशें बरसायीं। उसके बाद जाकर बारीक और कमज़ोर सी एक कोंपल ज़ाहिर हुई, और वह कोंपल इतनी कमज़ोर कि अगर एक छोटा सा बच्चा भी उसको अपने हाथ से दबा दे तो वह मसल जाए। लेकिन ज़मीन जैसी सख़्त चीज़ का पेट फाड़ कर उसमें फटन और दरार डाल कर ज़ाहिर हो रही है। और फिर उस कोंपल से पौदा बना, और पौदे से दरख़्त बना, और फिर उसके ऊपर गुच्छे ज़ाहिर हुए। और फिर उस पर अनाज के दाने पैदा हुए। फिर कितने इन्सान उसे तोड़ने में शरीक हुए, और कितने जानवरों ने उसको रौंद कर उसका भूसा

अलग और दाना अलग किया, फिर वहां से कितने शहरों में होता हुआ तुम्हारे शहर में पहुंचा और कितने इन्सान उसकी ख़रीद व बेच में शरीक हुए, फिर किसने इस गेहूं को चक्की में पीस कर आटा बनाया। और फिर तुम इसको ख़रीद कर अपने घर लाये और किसने इस आटे को गूंद कर रोटी पकाई? और जब वह रोटी तुम्हारे सामने आई तो तुमने एक लम्हे के अन्दर मुंह में डाल कर हलक़ से नीचे उतार दिया।

अब ज़रा सोचो, क्या यह तुम्हारी क़ुदरत में था कि तुम कायनात की इन सारी क़ुव्वतों को जमा करके रोटी के एक निवाले को तैयार करके हलक़ से नीचे उतार लेते? क्या आसमान से बारिश बरसाना तुम्हारी क़ुदरत में था? क्या सूरज की किरनों को पहुंचाना तुम्हारी क़ुदरत में था? क्या तुम्हारी क़ुदरत में यह था कि तुम इस कमज़ोर कोंपल को ज़मीन से निकालते? क़ुरआन करीम में अल्लाह तआला फ़रमाते हैं:

"أَفَرَأَيْتُم مَّا تَحْرُثُونَ ۝ أَأَنتُمْ تَزْرَعُونَهُ أَمْ نَحْنُ الزَّارِعُونَ" (واقعة:٦٣)

यानी ज़रा ग़ौर करो कि तुम जो चीज़ ज़मीन में डालते हो, क्या तुम उसके उगाने वाले हो, या हम उसको उगाते हैं? तुम उसके लिए कितने भी पैसे ख़र्च कर लेते, कितने ही वसायल जमा कर लेते, मगर फिर भी यह काम तुम्हारे बस में नहीं था। यह सब अल्लाह तआला की अ़ता है और जब इस ध्यान और ख़्याल के साथ खाओगे कि यह अल्लाह तआला की अ़ता है और उनका करम है कि उन्हों ने मुझे अ़ता फ़रमाया तो वह सारा खाना तुम्हारे लिए इबादत बन जायेगा।

मुसलमान और काफ़िर के खाने में फ़र्क़

हमारे हज़रत डाक्टर अ़ब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि अल्लाह तआला उनके दरजात बुलन्द फ़रमाए, आमीन। फ़रमाया करते थे कि दीन हक़ीक़त में नुक़्ता–ए–निगाह की तब्दीली का नाम है। ज़रा सा नुक़्ता–ए–निगाह बदल लो तो यही दुनिया दीन बन

जायेगी। जैसे यही खाना "बिस्मिल्लाह" पढ़े बग़ैर खा लो, और अल्लाह तआ़ला की नेमत के ध्यान के बग़ैर खा लो। तो फिर इस खाने की हद तक तुम में और काफ़िर में कोई फ़र्क नहीं। इसलिये कि खाना काफ़िर भी खा रहा है और तुम भी खा रहे हो उस खाने के ज़रिये तुम्हारी भूख दूर हो जायेगी, और ज़बान को चटख़ारा मिल जायेगा। लेकिन वह खाना तुम्हारी दुनिया है, दीन से इसका कोई ताल्लुक़ नहीं, और जैसे गाय, भैंस और बकरी और दूसरे जानवर खा रहे हैं। इसी तरह तुम भी खा रहे हो, दोनों में कोई फ़र्क नहीं।

ज़्यादा खाना कमाल नहीं

दारुल उलूम देवबन्द के बानी (संसथापक) हज़रत मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहिब नानौतवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि का एक बड़ा हकीमाना वाक़िआ़ है। उनके ज़माने में आर्य समाज हिन्दुओं ने इस्लाम के ख़िलाफ़ बड़ा शोर मचाया हुआ था। हज़रत नानौतवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि उन आर्य समाज वालों से मुनाज़रा किया करते थे, ताकि लोगों पर हक़ीक़ते हाल वाज़ेह हो जाए। चुनांचे एक बार आप एक मुनाज़रे के लिए तशरीफ़ ले गये, वहां एक आर्य समाज के पन्डित से मुनाज़रा था, और मुनाज़रे से पहले खाने का इन्तिज़ाम था। हज़रत नानौतवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि बहुत थोड़ा खाना खाने के आदी थे, जब खाना खाने बैठे तो हज़रते वाला चन्द निवाले खाकर उठ गये और जो आर्य समाज के आ़लिम थे, वह खाने के उस्ताद थे, उन्हों ने ख़ूब डट कर खाया, जब खाने से फ़रागत हुई तो मेज़बान ने हज़रत नानौतवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि से फ़रमाया कि हज़रत आपने तो बहुत थोड़ा सा खाना खाया, हज़रत ने फ़रमाया कि मुझे जितनी ख़्वाहिश थी उतना खा लिया। वह आर्य समाज भी क़रीब बैठा हुआ था, उसने हज़रत से कहा कि मौलाना आप खाने के मुक़ाबले में तो अभी से हार गये, और यह आपके लिए बद्-फ़ाली है कि जब आप खाने पर हार गये तो अब दलीलों का मुक़ाबला होगा तो उसमें

भी हार जायेंगे। हज़रत नानौतवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने जवाब दिया कि भाई अगर खाने के अन्दर मुनाज़रा और मुकाबला करना था तो मुझ से करने की क्या ज़रूरत थी, किसी भैंस से या बैल से कर लिया होता। अगर उस से मुनाज़रा करेंगे तो आप यकीनन भैंस से हार जायेंगे, मैं तो दलीलों में मुनाज़रा करने आया था। खाने में मुनाज़रा और मुकाबला करने तो नहीं आया था।

जानवर और इन्सान में फ़र्क़

हज़रत नानौतवी ने इस जवाब में इस तरफ़ इशारा फ़रमा दिया कि अगर ग़ौर से देखो तो खाने पीने के अन्दर इन्सान और जानवरों में कोई फ़र्क़ नहीं। जानवर भी खाता है, और इन्सान भी खाता है। और अल्लाह तआला हर जानवर को रिज़्क़ देते हैं और बहुत सी बार उनको तुम से अच्छा रिज़्क़ देता है। लेकिन उनके दरमियान और तुम्हारे दरमियान फ़र्क़ यह है कि तुम खाना खाते वक़्त अपने खिलाने वाले को न भुला दो। बस जानवर और इन्सान में यही फ़र्क़ है।

हज़रत सुलैमान अलैहिस्सलाम की मख़्लूक़ को दावत

वाकिआ लिखा है कि जब अल्लाह तआला ने हज़रत सुलैमान अलैहिस्सलाम को सारी दुनिया पर हुकूमत अता फ़रमा दी तो उन्हों ने अल्लाह तआला से दरख़्वास्त की, या अल्लाह जब आपने मुझे सारी दुनिया की हुकूमत अता फ़रमा दी तो मेरा दिल चाहता है कि मैं आपकी सारी मख़्लूक़ की एक साल तक दावत करूं। अल्लाह तआला ने कहा कि यह काम तुम्हारी कुदरत और बस में नहीं है। उन्हों ने फिर दरख़्वास्त की कि या अल्लाह एक महीने की दावत की इजाज़त दे दें। अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि यह तुम्हारी कुदरत में नहीं, आख़िर में हज़रत सुलैमान अलैहिस्सलाम ने फ़रमाया कि या अल्लाह एक दिन की इजाज़त दे दें तो अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि तुम इसकी भी कुदरत नहीं रखते, लेकिन अगर तुम्हारा ज़िद है तो चलो हम तुम्हें इसकी इजाज़त दे देते हैं, जब इजाज़त मिल गयी

तो हज़रत सुलैमान अलैहिस्सलाम ने जिन्नात और इन्सानों को गल्ले और गिज़ायें जमा करने का हुक्म दिया, और खाना पकना शुरू हुआ, और कई महीनों तक खाना तैयार होता रहा, और फिर समुन्दर के किनारे एक बहुत लम्बा चौड़ा दस्तरख़्वान बिछाया गया और उस पर खाना चुना गया, और हवा को हुक्म दिया कि वह उस पर चलती रहे ताकि खाना ख़राब न हो जाए। उसके बाद हज़रत सुलैमान अलैहिस्सलाम ने अल्लाह तआला से दरख़्वास्त की, या अल्लाह खाना तैयार हो गया है। आप अपनी मख़्लूक़ में से किसी को भेज दें, अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि हम पहले समुन्द्री मख़्लूक़ में से एक मछली को तुम्हारी दावत खाने के लिए भेज देते हैं। चुनांचे एक मछली समुन्द्र से निकली और कहा कि ऐ सुलैमान, मालूम हुआ है कि आज तुम्हारी तरफ़ से दावत है? उन्हों ने फ़रमाया कि हां तशरीफ़ लायें। खाना खायें। चुनांचे उस मछली ने दस्तरख़्वान के एक किनारे से खाना शुरू किया और दूसरे किनारे तक सारा खना ख़त्म कर गयी, फिर हज़रत सुलैमान अलैहिस्सलाम से कहा कि और लायें, हज़रत सुलैमान ने फ़रमाया कि तुम तो सारा खाना खा गयीं। मछली ने कहा कि क्या मेज़बान की तरफ़ से मेहमान को यही जवाब दिया जाता है। जब से मैं पैदा हुई हूं उस वक़्त से लेकर आज तक हमेशा पेट भर कर खाना खाया है, लेकिन आज तुम्हारी दावत की वजह से भूखी रही हूं। और जितना खाना तुमने तैयार किया था अल्लाह तआला रोज़ाना मुझे इतना खाना दिन में दो बार खिलाते हैं, मगर आज पेट भर के खाना नहीं मिला। बस हज़रत सुलैमान अलैहिस्सलाम फ़ौरन सज्दे में गिर गये, और इस्तिग़फ़ार किया।

(नफ़हतुल अरब)

खाना खा कर अल्लाह का शुक्र अदा करो

बहर हाल, अल्लाह तआला हर एक मख़्लूक़ को रिज़्क़ देते हैं, समुन्द्र कि तह में और उसकी अन्धेरियों में रिज़्क़ अता फ़रमाते हैं,

क़ुरआने करीम में है किः

"وَمَا مِنْ دَآبَّةٍ فِی الْاَرْضِ اِلَّا عَلَی اللّٰهِ رِزْقُهَا" (سورة هود:٦)

यानी कोई जानदार ज़मीन पर चलने वाला ऐसा नहीं है कि उसकी रोज़ी अल्लाह के ज़िम्मे न हो, इसलिये खाने की हद तक तुम्हारे और जानवरों के दरमियान कोई फ़र्क़ नहीं। अल्लाह तआ़ला की नेमतें उनको भी मिल रही हैं। जानवरों को छोड़िए, अल्लाह तआ़ला तो अपने उन दुश्मनों को भी रिज़्क़ दे रहा है जो अल्लाह के वजूद का इन्कार कर रहे हैं, ख़ुदा का मज़ाक़ उड़ा रहे हैं। अल्लाह तआ़ला उनको भी रिज़्क़ दे रहा है। इसलिये खाने के ऐतबार से तुम में और उनमें क्या फ़र्क़ है? वह फ़र्क़ यह है कि जानवर और काफ़िर और मुश्रिक सिर्फ़ ज़बान के चटख़ारे और पेट की आग बुझाने की ख़ातिर खाता है, इसलिये वह खाना खाते वक़्त अल्लह का नाम नहीं लेता। अल्लाह का ज़िक्र नहीं करता, तुम मुसलमान हो, तुम ज़रा सा ख़्याल और ध्यान करके उस खाने को अल्लाह की अ़ता समझ कर उसका नाम लेकर खाओ, और फिर उसका शुक्र अदा करो, तो यही खाना दीन बन जायेगा।

हर काम के वक़्त नुक़्ता-ए-नज़र बदल लो

मेरे हज़रत डाक्टर साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि मैं ने मुद्दतों इस बात की मश्क़ की है। जैसे घर में दाख़िल हुआ और खाने का वक़्त आया, और दस्तरख़्वान पर बैठे, खाना सामने आया। अब भूख बहुत ज़्यादा है और खाना भी मज़ेदार है, दिल भी चाह रहा है कि फ़ौरन खाना शुरू कर दूं। लेकिन एक लम्हे के लिये खाने से रुक गया और दिल से कहा कि यह खाना नहीं खायेंगे। उसके बाद दूसरे लम्हे यह सोचा कि यह खाना अल्लाह की अ़ता है। और जो अल्लाह तआ़ला ने मुझे अ़ता फ़रमाया है यह मेरे ताक़त व क़ुदरत का करिश्मा नहीं है। और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की आ़दते शरीफ़ा यह थी कि जब खाना सामने आता तो

अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करके उसको खा लिया करते थे। इसलिये मैं भी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इत्तिबा में इस खाने को खाऊंगा। उसके बाद बिस्मिल्लाह पढ़ कर शुरू करता।

घर में दाख़िल हुए और बच्चा खेलता हुआ अच्छा मालूम हुआ, दिल चाहा कि उसको गोद में उठा कर प्यार करें। लेकिन एक लम्हे के लिए रुक गये, और सोचा कि सिर्फ़ दिल के चाहने पर बच्चे को गोद में नहीं लेंगे, फिर दूसरे लम्हे यह ख़्याल लाए कि हदीस शरीफ़ में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम बच्चों से मुहब्बत फ़रमाया करते थे, और उनको गोद में ले लिया करते थे। अब मैं भी आपकी सुन्नत की इत्तिबा में बच्चे को गोद में उठाऊंगा। उसके बाद बच्चे को उठा लिया। हज़रते वाला फ़रमाया करते थे कि मैंने मुद्दतों तक इस अ़मल की मश्क़ की है और यह शेर सुनाया करते थे कि:

जिगर पानी किया है मुद्दतों ग़म की कशा कशी में
कोई आसान है क्या ख़ूगरे आज़ार हो जाना

मुद्दतों की मश्क़ के बाद यह चीज़ हासिल हुई है। और अल्हम्दु लिल्लाह अब इसके ख़िलाफ़ नहीं होता। अब जब भी इस क़िस्म की कोई नेमत सामने आती है तो पहले ज़ेहन इस तरफ़ जाता है कि यह अल्लाह तआ़ला की अ़ता है। और फिर उस पर शुक्र अदा करके बिस्मिल्लाह पढ़ कर उस काम को कर लेता हूं। और अब आ़दत पड़ गयी है, और इसी को नुक़्ता–ए–नज़र की तब्दीली कहते हैं। इसके नतीजे में दुनिया की चीज़ भी दीन बन जाती है।

खाना, एक नेमत

एक बार हज़रत डा० साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि के साथ एक दावत में गये।

जब दस्तरख़्वान पर खाना आया और खाना शुरू किया गया तो हज़रते वाला ने फ़रमाया कि तुम ज़रा ग़ौर करो कि इस एक खाने

में जो तुम इस वक़्त खा रहे हो, इसमें अल्लाह तआला की मुख़्तलिफ़ क़िस्म की कितनी नेमतें शामिल हैं, सब से पहले तो खाना मुस्तक़िल नेमत है। इसलिये कि अगर इन्सान शदीद भूखा हो, और भूख की वजह से मर रहा हो, और खाने की कोई चीज़ मयस्सर न हो तो उस वक़्त चाहे कितना ही ख़राब से ख़राब खाना उसके सामने लाया जाए, वह उसको भी ग़नीमत समझ कर खाने के लिए तैयार हो जायेगा, और उसको भी अल्लाह तआला की एक नेमत समझेगा। इस से मालूम हुआ कि खाना अच्छा हो या बुरा हो, मज़ेदार हो या बेमज़ा हो, वह खाना अपने आप में एक नेमत है। इसलिये कि वह भूख की तकलीफ़ को दूर कर रहा है।

खाने की लज़्ज़त, दूसरी नेमत

दूसरी नेमत यह है कि यह खाना मज़ेदार भी है। अपनी तबीयत के मुताबिक़ भी है, अब अगर खाना तो मौजूद होता लेकिन मज़ेदार न होता और अपनी तबीयत के मुवाफ़िक़ न होता तो ऐसे खाने को खाकर किसी तरह पेट भर कर भूख मार लेते, लेकिन लज़्ज़त हासिल नहीं होती।

इज़्ज़त से खाना मिलना, तीसरी नेमत

तीसरी नेमत यह है कि खिलाने वाला इज़्ज़त से खिला रहा है। अब अगर खाना भी मयस्सर होता, और मज़ेदार भी होता, लज़ीज़ भी होता, लेकिन खिलाने वाला ज़िल्लत से खिलाता, और जैसे किसी नौकर और गुलाम को खिलाया जाता है, इस तरह ज़लील करके खिलाता, तो उस वक़्त उस खाने की सारी लज़्ज़त धरी रह जाती, और सारा मज़ा ख़राब हो जाता, जैसे किसी ने कहा है कि:

ऐ ताइरे लाहूती उस रिज़्क़ से मौत अच्छी
जिस रिज़्क़ से आती हो परवाज़ में कोताही

इसलिये अगर कोई शख़्स ज़लील करके खाना खिला रहा है, तो उस खाने में कोई लुत्फ़ नहीं, वह खाना बे-हक़ीक़त है, अल्हम्दु

लिल्लाह हमें यह तीसरी नेमत भी हासिल है कि खिलाने वाला इज़्ज़त से खिला रहा है।

भूख लगना, चौथी नेमत

चौथी नेमत यह है कि भूख और खाने की ख़्वाहिश भी है। इसलिये कि अगर खाना भी मयस्सर होता, और वह खाना लज़ीज़ भी होता, और खिलाने वाला इज़्ज़त से भी खिलाता, लेकिन भूख न होती, और पेट ख़राब होता, तो इस सूरत में आला से आला खाना भी बेकार है, इसलिये कि इन्सान उसको नहीं खा सकता। तो अल्लाह का शुक्र है, खाना भी लज़ीज़ है, खिलाने वाला इज़्ज़त से खिला रहा है, और खाने की भूख और ख़्वाहिश भी मौजूद है।

खाने के वक़्त आफ़ियत, पांचवीं नेमत

पांचवीं नेमत यह है कि आफ़ियत और इत्मीनान के साथ खा रहे हैं, कोई परेशानी नहीं है, इसलिये कि अगर खाना तो लज़ीज़ होता, खिलाने वाला इज़्ज़त से खिलाता, भूख भी होती, लेकिन तबीयत में कोई ऐसी परेशानी लगी होती, कोई फ़िक्र तबीयत पर होती या उस वक़्त कोई ख़तरनाक क़िस्म की ख़बर मिल जाती, जिस से दिल व दिमाग़ परेशान और सदमे से दोचार हो जाता, तो ऐसी सूरत में भूख होते हुए भी वह खाना इन्सान के लिए बेकार हो जाता। अल्लाह का शुक्र है, आफ़ियत और इत्मीनान हासिल है, कोई ऐसी परेशानी नहीं है, जिसकी वजह से खाना बे-लज़्ज़त बे-मज़ा हो जाता।

दोस्तों के साथ खाना, छठी नेमत

छठी नेमत यह है कि अपने यार और दोस्तों के साथ मिल कर खाना खा रहे हैं, अगर ये सब नेमतें हासिल होतीं लेकिन अकेले बैठे खा रहे होते, इसलिये कि तन्हा खाने में और अपने दोस्तों के साथ मिल कर खाने में बड़ा फ़र्क़ है। अपने दोस्त व अहबाब के साथ मिल कर खाने में जो मज़ा और लुत्फ़ हासिल होता है वह तन्हा खाते

वक़्त हासिल नही हो सकता। इसलिये यह एक मुस्तकिल नेमत है, बहर हाल, फ़रमाया करते थे कि यह खाना एक नेमत है, लेकिन इस एक खाने में अल्लाह तआ़ला की कितनी नेमतें शामिल हैं, तो क्या फिर भी अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा नहीं करोगे?

यह खाना इबादतों का मज्मूआ है

इसलिये कि जब यह खाना इस ध्यान और ख़्याल के साथ खाया कि अल्लाह तआ़ला ने मुझे इतनी नेमतें अ़ता फ़रमाई हैं, तो फिर हर नेमत पर अल्लाह का शुक्र अदा करके खाना खाओ। और जब इस तरह हर नेमत पर शुक्र अदा करते हुए खाओगे तो एक तरफ़ तो खाने के अन्दर इबादतों में इज़ाफ़ा हो रहा है, इसलिये कि अगर सिर्फ़ "बिस्मिल्लाह" पढ़ कर खा लेते, और इन नेमतों का ध्यान न करते, तो भी यह खाना इबादत बन जाता, लेकिन कई नेमतों का ख़्याल और ध्यान करते हुए और उन पर अल्लाह का शुक्र अदा करते हुए खाना खाया तो यह खाना बहुत सी इबादतों का मज्मूआ बन गया। और इसके नतीजे में यह खाना जो हकीक़त में दुनिया है, एक तरफ़ इसके ज़रिये लज़्ज़त भी हासिल हो रही है, और दूसरी तरफ़ तुम्हारी नेकियों में भी इज़ाफ़े का सबब बन रहा है। बस इसी का नाम "नुक़्ता–ए– नज़र की तब्दीली है। और इस नुक़्ता–ए–नज़र की तब्दीली से इन्सान की दुनिया भी दीन बन जाती है। मौलाना शैख़ सअ़दी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि:

अब्र व बाद व मह व खुर्शीद व फ़लक दर कार अन्द
ता तू नाने ब-कफ़ आरी व ब-ग़फ़लत न खुरी

(गुलिस्तां)

यानी अल्लाह तआ़ला ने यह आसमान, यह ज़मीन, यह बादल, यह चांद, यह सूरज, इन सब को तुम्हारी ख़िदमत के लिए लगाया हुआ है। ताकि एक रोटी तुम्हें हासिल हो जाए, मगर उस रोटी को ग़फ़लत के साथ मत खाना, बस तुम्हारा काम इतना ही है, बल्कि

अल्लाह का नाम लेकर, अल्लाह का ज़िक्र करके खाओ, और खाने से पहले भूल जाओ तो जब याद आ जाये उस वक़्त "बिस्मिल्लाहि अव्व–लहू व आख़ि– रहू" पढ़ लो।

नफ़्ल काम की तलाफ़ी

हमारे हज़रत डा० अ़ब्दुल हई रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने इस हदीस की बुनियाद पर जिस में दुआ़ भूल जाने का ज़िक्र है, फ़रमाया कि जब भी आदमी कोई नफ़्ली इबादत अपने वक़्त पर अदा करना भूल गया, या किसी उज़्र की वजह से वह नफ़्ली इबादत न कर सका, तो यह न समझे कि बस अब उस नफ़्ली इबादत का वक़्त चला गया, अब छुट्टी हो गयी, बल्कि बाद में जब मौक़ा मिल जाए, उस नफ़्ली इबादत को कर ले। चुनांचे एक बार हम लोग हज़रते वाला रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के साथ एक इज्तिमा में शिर्कत के लिए जा रहे थे, मग़रिब के वक़्त वहां पहुंचना था, मगर हमें निकलते हुए देर हो गयी, जिसकी वजह से मग़रिब की नमाज़ रास्ते में ही एक मस्जिद में पढ़ी, चूंकि ख़्याल यह था कि वहां पर लोग इन्तिज़ार में होंगे, इसलिये हज़रते वाला ने सिर्फ़ तीन फ़र्ज़ और दो सुन्नतें पढ़ीं। और हमने भी तीन फ़र्ज़ और दो सुन्नतें पढ़ लीं और वहां से जल्दी रवाना हो गये, ताकि जो लोग इन्तिज़ार कर रहे हैं उनको इन्तिज़ार ज़्यादा न करना पड़े। चुनांचे थोड़ी देर बाद वहां पहुंच गये, इज्तिमा हुआ, फिर इशा की नमाज़ भी वहीं पढ़ी और रात के दस बजे तक इज्तिमा रहा। फिर हज़रते वाला वहां से रुख़्सत होने लगे तो हम लोगों को बुला कर पूछा कि भाई! आज मग़रिब के बाद की अव्वाबीन कहां गयी? हमने कहा कि हज़रत, वह तो आज रह गयी। चूंकि रास्ते में जल्दी थी इसलिये नहीं पढ़ सके, हज़रते वाला ने फ़रमाया कि रह गयीं और बग़ैर किसी मुआ़वज़े के रह गयीं! हमने कहा कि हज़रत चूंकि लोग इन्तिज़ार में थे, जल्दी पहुंचना था, इस उज़्र की वजह से अव्वाबीन की नमाज़ रह गयी। हज़रत ने फ़रमाया कि अल्लाह का

शुक्र है, जब मैंने इशा की नमाज़ पढ़ी, तो इशा की नमाज़ के साथ जो नवाफ़िल पढ़ा करता हूं उनके अलावा और छः रक्अतें पढ़ लीं, अब अगरचे वे नवाफ़िल अव्वाबीन न हों। इसलिये कि अव्वाबीन का वक़्त तो मग़रिब के बाद है लेकिन यह सोचा कि वे छः रक्अतें पढ़ कर अव्वाबीन की तलाफ़ी कर ली है। अब तुम जानो, तुम्हारा काम जाने।

फिर फ़रमाया कि तुम मौलवी हो, यह कहोगे कि नवाफ़िल की क़ज़ा नहीं होती। इसलिये कि मस्अला यह है कि फ़र्ज़ों और वाजिबात की क़ज़ा होती है, सुन्नत और नफ़्ल की क़ज़ा नहीं होती, आपने अव्वाबीन की क़ज़ा कैसे कर ली? तो भाई तुम ने वह हदीस पढ़ी है जिस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया था कि अगर तुम खाने के शुरू में बिस्मिल्लाह पढ़ना भूल जाओ तो जब दरमियान में याद आ जाए तो उस वक़्त पढ़ लो, और अगर आख़िर में याद आ जाए, उस वक़्त पढ़ लो। अब दुआ पढ़ना कोई फ़र्ज़ व वाजिब तो था नहीं, फिर आपने क्यों फ़रमाया कि बाद में पढ़ लो। बात असल में यह है कि एक नफ़्ल और मुस्तहब काम जो एक नेकी का काम था और जिसके ज़रिये नामा-ए-आमाल में इज़ाफ़ा हो सकता था, वह अगर किसी वजह से छूट गया तो उसको बिल्कुल ही मत छोड़ो, दूसरे वक़्त कर लो, अब चाहे इसको "क़ज़ा" कहो या न कहो, लेकिन उस नफ़्ल काम की तलाफ़ी हो जाए।

यही बातें बुज़ुर्गों से सीखने की होती हैं, उस दिन हज़रते वाला ने एक अज़ीम बाब खोल दिया। हम लोग वाक़ई यह समझते थे, और मस्अलों की किताबों के अन्दर लिखा है कि नवाफ़िल की क़ज़ा नहीं होती, लेकिन अब मालूम हुआ कि ठीक है क़ज़ा नहीं हो सकती, लेकिन तलाफ़ी तो सकती है। इसलिये कि उस नफ़्ल के छूटने की वजह से नुक़सान हो गया, नेकियां तो गयीं, लेकिन बाद में जब अल्लाह तआला फ़रागत अता फ़रमाए, उस वक़्त उस नफ़्ल को अदा

कर लो। अल्लाह तआला हज़रते वाला के दर्जात बुलन्द फ़रमाए, आमीन।

दस्तरख़्वान उठाते वक़्त की दुआ

"عن ابی امامة رضی الله عنه ان النبی صلی الله علیه وسلم كان اذا رفع مائدته قال: الحمد لله كثيراً طيبا مباركا فيه،غير مكفى ولا مودع ولا مستغنى عنه ربنا" (بخاری شریف)

हज़रत अबू अमामा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु फ़रमाते हैं कि जब दस्तरख़्वान उठता तो हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यह दुआ पढ़ा करते थे:

"اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ حَمْدًا كَثِيْرًا طَيِّبًا مُّبَارَكًا فِيْهِ،غَيْرَ مَكْفِيٍّ وَّلَا مُوَدَّعٍ وَّلَا مُسْتَغْنًى عَنْهُ رَبَّنَا"

"अल्हम्दु लिल्लाहि हम्दन् कसीरन् तय्यिबन् मुबा-रकन् फ़ीहि ग़ै-र मुक्फ़िय्यिन् व ला मुवद्दिअिन् व ला मुस्तग़्निन् अन्हु रब्बना"

यह अजीब व ग़रीब दुआ हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तल्क़ीन फ़रमाई, इसकी तल्क़ीन इसलिये फ़रमाई कि इन्सान का भी अजीब मिज़ाज है वह यह कि जब इन्सान को किसी चीज़ की सख़्त ख़्वाहिश और हाजत होती है, उस वक़्त तो वह बहुत बेताब होता है, लेकिन जब उस चीज़ की हाजत पूरी हो जाए, और उस से दिल भर जाए तो फिर उसी चीज़ से उसको नफ़रत होने लगती है। जैसे जब इन्सान को भूख लगती है तो उस वक़्त उसको खाने की तरफ़ रग़बत और शौक़ था। और खाने की तरफ़ तबीयत माइल हो रही थी, लेकिन जब पेट भर गया और भूख मिट गयी तो उसके बाद अगर वही खाना दोबारा लाया जाए तो तबीयत उस से नफ़रत करती है, और कभी कभी खाने के तसव्वुर से मतली आने लगती है। इसलिये हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस दुआ के ज़रिये यह तालीम दी कि यह तुम्हारे दिल में खाने की नफ़रत पैदा हो रही है, इस नफ़रत के नतीजे में कहीं अल्लाह के

रिज़्क़ की ना क़द्री और ना शुक्री न हो जाए, इसलिये आपने यह दुआ फ़रमाई कि या अल्लाह! इस वक़्त यह दस्तरख़्वान हम अपने सामने से उठा रहे हैं, लेकिन इस वजह से नहीं उठा रहे हैं कि हमारे दिल में इसकी क़द्र नहीं, बल्कि इसी खाने ने हमारी भूख भी मिटाई, और इसी खाने के ज़रिए हमें लज़्ज़त भी हासिल हुई, और न इस वजह से उठा रहे हैं कि हम इस से बे-परवाह, और बे-नियाज़ हैं, ऐ अल्लाह! हम इस से बे-नियाज़ी नहीं हो सकते, इसलिये कि दोबारा हमें इसकी ज़रूरत और हाजत पेश आयेगी। दस्तरख़्वान उठाते वक़्त यह दुआ कर लो, ताकि अल्लाह तआला के रिज़्क़ की ना क़द्री न हो, और दूसरी इस बात की दुआ भी हो जाए कि या अल्लाह, हमें दोबारा यह रिज़्क़ अता फ़रमाइये।

खाने के बाद की दुआ पढ़ कर गुनाह माफ़ करा लें

"عن معاذ بن انس رضي الله عنه قال: قال رسول الله صلى الله عليه وسلم: من اكل طعامافقال الحمد لله الذى اطعمنى هذا ورزقنى من غير حول منى ولا قوة غفرله ما تقدم من ذنبه" (ترمذى شريف)

हज़रत मुआज़ बिन अनस रज़ियल्लाहु अन्हु रिवायत करते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स खाना खाने के बाद अगर ये अल्फ़ाज़ कहे कि:

"अल्लाह का शुक्र है जिसने मुझे यह खाना खिलाया, और मेरी ताक़त और क़ुव्वत के बग़ैर यह खाना मुझे अता फ़रमाया"।

उसके यह कहने से अल्लाह तआला उसके तमाम पिछले गुनाह माफ़ फ़रमा देते हैं। अब आप अन्दाज़ा लगायें कि यह छोटा सा अमल है, लेकिन इसका अज्र व सवाब यह है कि तमाम पिछले गुनाह माफ़ हो जाते हैं। यह उनका कितना बड़ा करम है।

अमल छोटा, सवाब बड़ा

यह बात मैं पहले भी कई बार अर्ज़ कर चुका हूं कि जहां कहीं हदीसों में यह आता है कि फ़लां अमल से गुनाह माफ़ हो जाते हैं।

इस से मुराद छोटे गुनाह होते हैं और बड़े गुनाहों के बारे में क़ायदा यह है कि वे बग़ैर तौबा के माफ़ नहीं होते। इसी तरह बन्दों के हुक़ूक़ भी हक़ वाले के माफ़ किए बग़ैर माफ़ नहीं होते, लेकिन अल्लाह तआला छोटे गुनाहों को नेक अ़मल के ज़रिये भी माफ़ फ़रमा देते हैं। और वह आदमी छोटे गुनाहों से पाक हो जाता है, यह इतना छोटा सा अ़मल है, लेकिन इस पर सवाब इतना बड़ा है, हमारे हज़रत डा० साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हम सब को नुस्ख़ा—ए—कीमिया बता गए, अब चाहे इस दुआ को आदमी ज़ोर से पढ़े या हलकी आवाज़ से पढ़े, या दिल में पढ़ ले तो भी शुक्र की नेमत हासिल हो जाती है, और आदमी इस नेमत का हक़दार हो जाता है, अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल से इन आदाब पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

खाने के अन्दर ऐब मत निकालो

"عن ابی هریرة رضی الله عنه قال: ماعاب رسول الله صلی الله علیه وسلم طعاما قط، ان اشتهاه اکله وان کرهه ترکه" (بخاری شریف)

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कभी किसी खाने में ऐब नहीं निकाला, और किसी खाने की बुराई नहीं की, अगर उसके खाने की ख़्वाहिश होती तो खा लेते, और अगर खाने की ख़्वाहिश न होती तो उसको छोड़ देते"।

यानी अगर खाना पसन्द नहीं है तो उसको नहीं खाया, मगर उसकी बुराई बयान नहीं करते थे, इसलिये कि जो खाना है, वह चाहे हमें पसन्द आ रहा हो या पसन्द न आ रहा हो, लेकिन वह अल्लाह तआला का अ़ता किया हुआ रिज़्क़ है, और अल्लाह तआला के अ़ता किये हुए रिज़्क़ का एहतिराम और अदब हमारे ज़िम्मे वाजिब है।

कोई बुरा नहीं कुदरत के कारख़ाने में

यों तो इस कायनात में कोई भी चीज़ ऐसी नहीं है जो अल्लाह तआला ने किसी हिक्मत और मस्लिहत के बग़ैर पैदा की हो, इस कायनात में हर चीज़ अल्लाह तआला ने अपनी हिक्मत और मस्लिहत के तहत पैदा फ़रमाई है, हर चीज़ का कोई न कोई अमल और फ़ायदा ज़रूर है, इक़बाल मरहूम ने ख़ूब कहा किः

नहीं कोई चीज़ निकम्मी ज़माने में
कोई बुरा नहीं कुदरत के कारख़ाने में

अल्लाह तआला ने इस कायनात में कोई चीज़ बुरी पैदा नहीं फ़रमाई, वजूद में लाने के ऐतबार से सब से अच्छी हैं। हर एक के अन्दर कोई न कोई पैदायशी मस्लिहत ज़रूर है। लेकिन जब हमें किसी चीज़ की हिक्मत और मस्लिहत का पता नहीं लगता तो हम कह देते हैं कि यह चीज़ बुरी है, वर्ना हक़ीक़त में कोई चीज़ बुरी नहीं। यहां तक कि वे मख़्लूक़ात जो बज़ाहिर नुक़सान पहुंचाने वाली और तक्लीफ़ देह मालूम होती हैं, जैसे सांप बिच्छू हैं। इनको हम इसलिये बुरा समझते हैं कि कभी कभी यह हमें नुक़सान पहुंचाते हैं, लेकिन कायनात के मजमूई इन्तिज़ाम के लिहाज़ से इनमें भी कोई न कोई हिक्मत और मस्लिहत ज़रूर है। इनमें फ़ायदा मौजूद है, चाहे हमें पता चले या न चले।

एक बादशाह एक मक्खी

एक बादशाह का क़िस्सा लिखा है कि वह एक दिन अपने दरबार में बड़े शान व शौकत से बैठा हुआ था, एक मक्खी आकर उसकी नाक पर बैठ गयी, उस बादशाह ने उसको उड़ा दिया, वह फिर आकर बैठ गयी, उसने दोबारा उड़ाया, वह फिर आकर बैठ गयी। आपने देखा कि बाज़ी मक्खियां बहुत लीचड़ किस्म की होती हैं, उनको कितना ही उड़ा लो, वे दोबारा उसी जगह पर आकर बैठ जाती हैं, वह भी इसी क़िस्म की थी, बादशाह ने उस वक़्त कहा कि

ख़ुदा जाने यह मक्खी अल्लाह तआला ने क्यों पैदा की? यह तो तक्लीफ़ ही तक्लीफ़ पहुंचा रही है, इसका कोई फ़ायदा तो नज़र नहीं आता, उस वक़्त दरबार में एक बुज़ुर्ग मौजूद थे। उन बुज़ुर्ग ने उस बादशाह से कहा कि इस मक्खी का एक फ़ायदा तो यह है कि जैसे घमण्डी और जाबिर इन्सानों के दिमाग़ दुरुस्त करने के लिए पैदा की है, तुम अपनी नाक पर बैठने नहीं देते, लेकिन अल्लाह तआला ने दिखा दिया कि तुम इतने आजिज़ हो कि अगर एक मक्खी तुम्हें सताना चाहे तो तुम्हारे अन्दर इतनी ताक़त नहीं है कि अपने आपको उसकी तक्लीफ़ से बचा लो। उसकी पैदाइश की यही हिक्मत और मस्लिहत क्या कम है। बहर हाल अल्लाह तआला ने हर चीज़ किसी न किसी मस्लिहत और हिक्मत के तहत पैदा की है।

एक बिच्छू का अजीब वाक़िआ

इमाम राज़ी रहमतुल्लाहि अलैहि मशहूर बुज़ुर्ग और इल्मे कलाम के माहिर गुज़रे हैं। जिन्हों ने "तफ़्सीरे कबीर" के नाम से क़ुरआन करीम की मशहूर तफ़्सीर लिखी है। इस तफ़्सीर में सिर्फ़ सूरः फ़ातिहः की तफ़्सीर दो सौ पेजों पर मुश्तमिल है, और तफ़्सीर में सूरः फ़ातिहः की पहली आयत "अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल आ–लमीन" की तफ़्सीर के तहत एक वाक़िआ लिखा है कि मैंने एक बुज़ुर्ग से ख़ुद उनका वाक़िआ सुना, वह बग़दाद में रहते थे। वह बुज़ुर्ग फ़रमाते हैं कि मैं एक दिन शाम को सैर करने के लिए "दरिया–ए–दजला" के किनारे की तरफ़ चला गया, जब मैं दरिया–ए–दजला के किनारे किनारे चलने लगा तो मैंने देखा कि मेरे आगे एक बिच्छू चला जा रहा है, मेरे दिल में ख़्याल आया कि यह बिच्छू भी अल्लाह तआला की मख़्लूक़ है, और ज़ाहिर है कि अल्लाह तआला ने इसको किसी न किसी हिक्मत और मस्लिहत के तहत ही पैदा किया है, अब इस वक़्त पता नहीं यह कहां से आ रहा है? कहां जा रहा है? इसकी मन्ज़िल क्या है? वहां जाकर क्या करेगा। मेरे दिल में यह ख़्याल आया कि

मेरे पास तो कुव्वत है, मैं सैर के लिए निकला हूं, आज मैं इस बिच्छू का पीछा करता हूं कि यह कहां जाता है, चुनांचे वह बिच्छू आगे आगे चलता रहा और मैं उसके पीछे पीछे चलता रहा, चलते चलते उसने दरिया की तरफ़ रुख़ किया और किनारे पर जाकर खड़ा हो गया, मैं भी क़रीब ही खड़ा हो गया। थोड़ी देर के बाद मैंने देखा कि दरिया में एक कछुआ तैरता हुआ आ रहा है, वह कछुआ आकर किनारे लग गया और यह बिच्छू छलांग लगा कर उसकी पुश्त पर सवार हो गया। इस तरह अल्लाह तआला ने दरिया पार करने के लिए कश्ती भेज दी। चुनांचे वह कुछआ उसको अपनी पीठ पर सवार करके रवाना हो गया, चूंकि मैंने यह तय कर लिया था कि आज मैं यह देखूंगा कि बिच्छू कहां जा रहा ह, इसलिये मैंने भी कश्ती किराए पर ली और उसके पीछे रवाना हो गया। यहां तक कि उस कछुए ने दरिया पार कर लिया, और जाकर इसी तरह दूसरे किनारे जाकर लग गया और बिच्छू छलांग लगा कर उतर गया। अब बिच्छू आगे चला और मैंने उसका फिर पीछा करना शुरू कर दिया।

आगे मैंने देखा कि एक आदमी एक पेड़ के नीचे सो रहा है, मेरे दिल में ख़्याल आया कि शायद यह बिच्छू उस आदमी को काटने जा रहा है। मैंने सोचा कि जल्दी से उस आदमी को जगा दूं, ताकि वह शख़्स उस बिच्छू से बच जाए। लेकिन जब मैं उस आदमी के क़रीब गया तो मैंने देखा कि एक ज़हरीला सांप अपना फन उठाए उस आदमी के सर के पास खड़ा है, और क़रीब है कि वह सांप उसको डस ले, इतने में यह बिच्छू तेज़ी के साथ सांप के ऊपर सवार हो गया और उसको एक ऐसा डंक मारा कि वह सांप बल खाकर ज़मीन पर गि पड़ा और तड़पने लगा, फिर वह बिच्छू किसी और मन्ज़िल पर रवाना हो गया, अचानक उस वक़्त उस सोने वाले शख़्स की आंख खुल गयी और उसने देखा कि क़रीब से एक बिच्छू जा रहा है, उसने फ़ौरन एक पत्थर उठा कर उस बिच्छू को मारने के लिए दौड़ा, मैं

क़रीब ही खड़ा होकर सारा मन्ज़र देख रहा था, इसलिये मैंने फ़ौरन उसका हाथ पकड़ लिया। और उस से कहा कि तुम जिस बिच्छू को मारने जा रहे हो यह तुम्हार मुहसिन है, और इसने तुम्हारी जान बचाई है, हक़ीक़त में यह सांप जो यहां मरा पड़ा है तुम पर हमला करने वाला था और क़रीब था कि डंक मार कर तुम्हें मौत के घाट उतार दे, लेकिन अल्लाह तआला ने बहुत दूरे से इस बिच्छू को तुम्हारी जान बचाने के लिए भेजा है, और अब तुम इस बिच्छू को मारने की कोशिश कर रहे हो। वह बुज़ुर्ग फ़रमाते हैं कि मैंने उस दिन अल्लाह तआला के रब होने यह करिश्मा देखा कि किस तरह अल्लाह तआला उस बिच्छू को दरिया के दूसरे किनारे से उस शख़्स की जान बचाने के लिए यहां लाए। बहर हाल दुनिया में कोई ऐसी चीज़ नहीं है जिसके पैदा करने में कोई न कोई तक्वीनी हिक्मत और मस्लिहत न हो।

गंदगी में पैदा होने वाले कीड़े

एक और क़िस्सा देखा, मालूम नहीं कि सही है या नहीं? अगर सही है तो बड़ी इब्रत का वाक़िआ है, वह यह है कि एक साहिब एक दिन पाख़ाने की ज़रूरत पूरी कर रहे थे, इसी हालत में उनको सफ़ेद सफ़ेद कीड़े नज़र आए। जो कभी कभी पेट के अन्दर पैदा हो जाते हैं उन साहिब के दिल में ख़्याल आया कि और जितनी मख़्लूक़ है उन सब की पैदाइश की कोई न कोई हिक्मत और मस्लिहत समझ में आती है, लेकिन यह जानदार मख़्लूक़ जो नजासत (गंदगी और पाख़ाने) में पैदा हो जाती है, पाख़ाने के साथ निकलती है, और पाख़ाने के साथ ही बहा दी जाती है। इसका कोई अमल और फ़ायदा ही नज़र नहीं आता। पता नहीं अल्लाह तआला ने यह मख़्लूक़ किस मस्लिहत से पैदा की है?

कुछ मुद्दत के बाद उन साहिब की आंख में कुछ तक्लीफ़ हुई, अब तक्लीफ़ के ख़ातमे के लिए सारे इलाज कर लिए, मगर कोई

फ़ायदा नहीं हुआ, आख़िर में एक पुराना कोई हकीम था, उसके पास जाकर बताया कि यह तक्लीफ है, इसका क्या इलाज है? उस हकीम ने बताया कि इसका कोई और इलाज नहीं है। लेकिन एक इलाज है जो कभी कभी कारामद हो जाता है। वह यह कि इन्सान के जिस्म में जो कीड़े पैदा हो जाते हैं, उन कीड़ों को पीस कर अगर लगाया जाए तो उसके ज़रिए से कभी कभी यह बीमारी दूर हो जाती है। उस वक़्त मैंने कहा कि अल्लाह तआला! अब मेरी समझ में यह बात आ गयी कि आपने उन कीड़ों को किस मस्लिहत से पैदा किया है।

ग़र्ज़ कायनात की कोई चीज़ ऐसी नहीं है जिसकी कोई न कोई हिक्मत और मस्लिहत न हो, अल्लाह तआला के इल्म में हर चीज़ के फ़ायदे और हिक्मतें और मस्लिहतें हैं, बिल्कुल इसी तरह जो खाना आपको पसन्द नहीं है, या उसके खाने को तबीयत नहीं चाहती, लेकिन उसकी पैदाइश में कोई न कोई हिक्मत और मस्लिहत ज़रूर है, और कम से कम यह बात मौजूद है कि वह अल्लाह तआला का रिज़्क़ है और उसका एहतिराम करना ज़रूरी है। इसलिये अगर कोई खाना पसन्द नहीं है तो उसको मत खाओ, लेकिन उसको बुरा भी मत कहो। कुछ लोगों की यह आदत होती है कि जब खाना पसन्द नहीं आया तो उसमें ऐब निकालने शुरू कर देते हैं कि इसमें यह ख़राबी है, यह तो बे मज़ा है, ऐसी बातें कहना दुरुस्त नहीं।

रिज़्क़ की ना क़द्री मत करो

यह भी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की बड़ी आला दर्जे की तालीम है कि अल्लाह के रिज़्क़ का एहतिराम करो, उसका अदब करो, उसकी बे–अदबी न करो, हमारे समाज में यह इस्लामी अदब बुरी तरह पामाल हो रहा है। हर चीज़ में हमने ग़ैरों की नक़्क़ाली शुरू की तो इसमें भी ऐसा ही किया। और अल्लाह तआला के रिज़्क़ का कोई अदब बाक़ी नहीं रहा, खाना बचा तो उठा कर उसको कूड़े में डाल दिया, कभी कभी देख कर दिल कांपता है,

यह सब मुसलमानों के घरों में हो रहा है, ख़ास तौर पर दावतों में और होटलों में गिज़ाओं के बड़े बड़े ढेर इस तरह कूड़े में डाल दिए जाते हैं, हालांकि हमारे दीन की तालीम यह है कि अगर रोटी का छोटा सा टुकड़ा भी कहीं पड़ा हो तो उसकी ताज़ीम करो, उसका भी अदब करो, और उसको उठा कर किसी ऊंची जगह रख दो।

हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि और रिज़्क़ की क़द्र

मैंने अपने हज़रत डा० अब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि से हज़रत थानवी का यह वाक़िआ सुना है कि एक बार हज़रत थानवी बीमार हुए, उस दौरान एक साहिब ने आपको पीने के लिए दूध लाकर दिया, आपने वह दूध पिया और थोड़ा सा बच गया, वह बचा हुआ दूध आपने सिरहाने की तरफ़ रख दिया, इतने में आपकी आंख लग गयी। जब जागे तो एक साहिब जो पास खड़े थे उनसे पूछा कि भाई वह थोड़ा सा दूध बच गया था वह कहां गया? तो उन साहिब ने कहा कि हज़रत वह तो फेंक दिया, एक घूंट ही था, हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि बहुत नाराज़ हुए और फ़रमाया कि तुमने अल्लाह की उस नेमत को फेंक दिया। तुमने बहुत ग़लत काम किया, अगर मैं उस दूध को नहीं पी सका तो तुम पी लेते, किसी और को पिला देते, या बिल्ली को पिला देते, या तोते को पिला देते। अल्लाह की किसी मख़्लूक़ के काम आ जाता, तुमने उसको क्यों फेंका? और फिर एक उसूल बयान फ़रमा दिया कि:

"जिन चीज़ों की ज़्यादा मिक्दार (मात्रा) से इन्सान अपनी आम ज़िन्दगी में फ़ायदा उठाता है, उनकी थोड़ी मिक्दार की क़द्र और ताज़ीम उसके ज़िम्मे वाजिब है"।

जैसे खाने की बड़ी मिक्दार (मात्रा) को इन्सान खाता है, उस से अपनी भूख मिटाता है, अपनी ज़रूरत पूरी करता है, लेकिन अगर उसी खाने का थोड़ा सा हिस्सा बच जाए तो उसका एहतिराम और अदब भी उसके ज़िम्मे वाजिब है, उसको ज़ाया करना जायज़ नहीं,

यह असल भी हक़ीक़त में उसी हदीस से निकाली गयी है कि अल्लाह तआला के रिज़्क़ की ना क़द्री मत करो, उसको किसी न किसी ज़रूरत में ले आओ।

दस्तरख़्वान झाड़ने का सही तरीक़ा

मेरे वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के दारुल उलूम देवबन्द में एक उस्ताज़ थे, मौलाना सैयद असग़र हुसैन साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि, जो "हज़रत मियां साहिब" के नाम से मश्हूर थे, बड़े अजीब व ग़रीब बुज़ुर्ग थे, उनकी बातें सुन कर सहाबा–ए–किराम की याद ताज़ा हो जाती है। हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि एक बार मैं उनकी ख़िदमत में गया, तो उनहों ने फ़रमाया कि खाने का वक़्त है आओ खाना खालो, मैं उनके साथ खाना खाने बैठ गया। जब खाने से फ़ारिग़ हुए तो मैंने दस्तरख़्वान को लपेटना शुरू किया, ताकि मैं लेजा कर दस्तरख़्वान झाड़ दूं। तो हज़रत मियां साहिब ने मेरा हाथ पकड़ लिया और फ़रमायाः क्या कर रहे हो? मैंने कहा हज़रत दस्तरख़्वान झाड़ने जा रहा हूं, हज़रत मियां साहिब ने पूछा कि दस्तरख़्वान झाड़ना आता है? मैंने कहा कि हज़रत, दस्तरख़्वान झाड़ना कौन सा फ़न या इल्म है, जिसके लिए बाक़ायदा तालीम की ज़रूरत हो, बाहर जाकर झाड़ दूंगा, हज़रत मियां साहिब ने फ़रमाया कि इसी लिए तो मैंने तुम से पूछा कि दस्तरख़्वान झाड़ना आता है या नहीं? मालूम हुआ कि तुम्हें दस्तरख़्वान झाड़ना नहीं आता। मैंने कहा आप सिखा दें, फ़रमाया कि हां दस्तरख़्वान झाड़ना भी एक फ़न है।

फिर आपने उस दस्तरख़्वान को दोबारा खोला और उस दस्तरख़्वान पर जो बोटियां या बोटियों के ज़र्रे थे, उनको एक तरफ़ किया और हड्डियों को जिन पर कुछ गोश्त वग़ैरह लगा हुआ था, उनको एक तरफ़ किया, और रोटी के टुकड़ों को एक तरफ़ किया, और रोटी के जो छोटे छोटे ज़र्रे थे, उनको एक तरफ़ जमा किया,

फिर मुझ से फ़रमाया कि देखो! ये चार चीज़ें हैं, और मेरे यहां इन चारों चीज़ों की अलग अलग जगह मुक़र्रर है, ये जो बोटियां हैं इनकी फ़लां जगह है, बिल्ली को मालूम है कि खाने के बाद इस जहग बोटियां रखी जाती हैं, वह आकर उनको खा लेती है, और इन हड्डियों के लिए फ़लां जगह मुक़र्रर है, मौहल्ले के कुत्तों को वह जगह मालूम है, वे आकर उनको खा लेते हैं। और ये जो रोटियों के टुक्ड़े हैं, इनको मैं इस दीवार पर लटका देता हूं, यहां परिन्दे चील कव्वे आते हैं, और वे इनको उठा कर खा लेते हैं। और ये जो रोटी के छोटे ज़र्रे हैं, तो मेरे घर में चूंटियों का बिल है, इनको उस बिल के पास रख देता हूं, वे चूंटियां इनको खा लेती हैं। फिर फ़रमाया कि यह सब अल्लाह तआ़ला का रिज़्क़ है। इसका कोई हिस्सा ज़ाया नहीं जाना चाहिए। हज़रत वालिद साहिब रह० फ़रमाते थे कि उस दिन मालूम हुआ कि दस्तरख़्वान झाड़ना भी एक फ़न है और इसको भी सीखने की ज़रूरत है।

आज हमारा हाल

आज हमारा यह हाल है कि दस्तरख़्वान को जाकर कूड़ेदान के अन्दर झाड़ दिया, अल्लाह के रिज़्क़ के एहतिराम का कोई एहतिमाम नहीं, अरे ये सारी अल्लाह तआ़ला की मख़्लूक़ात हैं। जिनके लिए अल्लाह तआ़ला ने यह रिज़्क़ पैदा किया। अगर तुम नहीं खा सकते तो किसी और मख़्लूक़ के लिए इसको रख दो। पहले ज़माने में बच्चों को यह सिखाया जाता था कि यह अल्लाह तआ़ला का रिज़्क़ है, इसका अदब करो। अगर कहीं रोटी का टुक्ड़ा नज़र आता तो उसको चूम कर अदब के साथ ऊंची जगह पर रख देते। लेकिन जूं जूं पश्चिमी तहज़ीब का ग़ल्बा हमारे समाज पर बढ़ रहा है, रफ़्ता रफ़्ता इस्लामी आदाब रुख़्सत हो रहे हैं। नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह इर्शाद है कि खाना पसन्द आए तो खालो, और अगर पसन्द न आए तो कम से कम उसमें ऐब न निकालो,

उसकी ना कद्री और बे अदबी मत करो, इस सुन्नत को दोबारा ज़िन्दा करने की ज़रूरत है। ये सब बातें कोई क़िस्सा कहानी या कोई अफ़साना नहीं हैं, बल्कि ये सब बातें अ़मल करने के लिए हैं कि हम अल्लाह तआ़ला के रिज़्क़ का अदब और उसकी ताज़ीम करें, और उन आदाब को अपनायें जो नबी–ए– करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हमें सिखाए और जो हमारे दीन का हिस्सा हैं। जो हमारे दीन की ख़ूबी और पहचान हैं। और यह जो पश्चिम ने बलायें हम पर नाज़िल की हैं इनसे छुटकारा हासिल करें। अल्लाह तआ़ला हम सब को अ़मल की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

सिर्का भी एक सालन है

"عن جابر رضى الله عنه ان النبى صلى الله عليه وسلم سئل اهله الادم، فقالوا: ماعندنا الاخل، فدعابه، فجعل ياكل ويقول: نعم الادم الخل، نعم الادم الخل". (مسلم شريف)

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि एक बार हुज़ूरे नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम घर में तशरीफ़ ले गए और घर वालों से फ़रमाया कि कुछ सालन हो तो ले आओ। (रोटी मौजूद थी) घर वालों ने कहा कि हमारे पास तो सिर्का के अ़लावा और कुछ नहीं है, सिर्का रखा हुआ है। आपने फ़रमाया कि वही ले आओ। हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उस सिर्के को रोटी के साथ खाना शुरू किया और साथ में बार बार यह फ़रमाते जाते कि सिर्का बड़ा अच्छा सालन है, सिर्का बड़ा अच्छा सालन है।

आपके घर की हालत

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के घर का यह हाल था कि कोई सालन मौजूद नहीं, हालांकि रिवायात में आता है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम साल के शुरू में अपनी तमाम बीवियों के पास पूरे साल का नान नफ़्क़ा और ख़र्चा भेज दिया

करते थे। लेकिन वे बीवियां भी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की बीवियां थीं। उनके यहां सदकात, ख़ैरात और दूसरे ख़र्चों की इतनी ज़्यादती थी कि हज़रत आयशा सिद्दीका रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि कई बार तीन तीन महीने तक हमारे घर में आग नहीं जलती थी। दो चीज़ों पर हमारा गुज़र होता था कि खजूर खा ली और पानी पी लिया। (बुख़ारी शरीफ़)

नेमत की क़द्र फ़रमाते

इस हदीस से मालूम हुआ कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को जो नेमत मयस्सर आ जाती उसकी क़द्र फ़रमाते, और उस पर अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा फ़रमाते, हालांकि आम मुआ़शरे (समाज) में सिर्का बतौर सालन के इस्तेमाल नहीं किया जाता, बल्कि ज़बान का ज़ायक़ा बदलने के लिए लोग सिर्के को सालन के साथ मिला कर खाते हैं, लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसी सिर्के से रोटी खाई और साथ साथ इसकी इतनी तारीफ़ फ़रमाई कि बार बार आपने फ़रमाया कि यह बड़ा अच्छा सालन है।

खाने की तारीफ़ करनी चाहिए

इसी हदीस के तहत मुहद्दिसीन हज़रात ने फ़रमाया कि अगर कोई शख़्स इस नियत से सिर्का इस्तेमाल करे कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसको इसतेमाल फ़रमाया, और इसकी तारीफ़ फ़रमाई, तो इन्शा अल्लाह इस नियत की वजह से उसको सिर्का खाने पर भी सवाब मिलेगा। इस हदीस से दूसरा मस्अला यह निकलता है कि जो खाना आदमी को पसन्द आए, उसको चाहिए कि वह उस खाने की तारीफ़ भी करे, तारीफ़ करने का एक मक़सद तो उस खाने पर अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करना है, कि अल्लाह तआ़ला ने मुझे यह खाना इनायत फ़रमाया। दूसरे यह कि जिसने वह खाना तैयार किया है, उस तारीफ़ के ज़रिये

उसका दिल खुश हो जाए। यह भी खाने के आदाब में से है। यह न हो कि खाने के ज़रिए पेट की भूख मिटाई और ज़बान का चटख़ारा भी पूरा किया, और खाना खा कर उठ गए, लेकिन ज़बान पर एक कलिमा भी शुक्र और तारीफ़ का न आया। हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखिए कि आपने सिर्के की इतनी तारीफ़ फ़रमाई। इसलिये जब खाना पकाने वाले ने मेहनत की, और अपने आपको आग और चूल्हे के सामने पेश करके तुम्हारे लिए खाना तैयार किया, उसका इतना तो हक़ अदा करो कि दो कलिमे बोल कर उसकी तारीफ़ कर दो, और उसकी हिम्मत बढ़ा दो, जो शख़्स तारीफ़ के दो कलिमे भी अदा न करे, वह बड़ा बख़ील है।

पकाने वाले की तारीफ़ करनी चाहिए

हमारे हज़रत डाक्टर साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि ने एक बार अपना यह वाक़िआ सुनाया कि एक साहिब मेरे पास आया करते थे, वह और उनकी बीवी दोनों ने इस्लाही ताल्लुक़ भी क़ायम किया हुआ था। एक दिन उन्हों ने अपने घर पर मेरी दावत की, मैं चला गया, और जा कर खाना खा लिया, खाना बड़ा लज़ीज़ और अच्छा बना हुआ था। हज़रते वाला रह्मतुल्लाहि अलैहि की हमेशा यह आदत थी कि जब खाने से फ़ारिग़ होते तो उस खाने की और खाना बनाने वाली औरत की तारीफ़ ज़रूर करते, ताकि उस पर अल्लाह का शुक्र भी अदा हो जाए, और उस ख़ातून का दिल भी बढ़ जाए। चुनांचे जब खाने से फ़ारिग़ हुए तो वह औरत पर्दे के पीछे आयीं और आकर हज़रते वाला को सलाम किया, तो हज़रते वाला ने फ़रमाया कि तुमने बड़ा लज़ीज़ और अच्छा खाना पकाया। खाने में बड़ा मज़ा आया। हज़रत फ़रमाते हैं कि जब मैंने यह कहा तो पर्दे के पीछे से उस औरत के रोने और सिस्कियां लेने की आवाज़ आई। मैं हैरान हो गया कि मालूम नहीं मेरी किस बात से इनको तक्लीफ़ हुई, और इनका दिल टूटा। मैंने पूछा कि क्या बात है? आप क्यों रो रही हैं? उस

औरत ने मुश्किल से अपने रोने पर क़ाबू पाते हुए कहा कि हज़रत मुझे इन (शौहर) के साथ रहते हुए चालीस साल हो गये हैं, लेकिन इस पूरे अर्से में इनकी ज़बान से मैंने यह जुम्ला नहीं सुना कि "आज का खाना बड़ा अच्छा पका है" आज जब आपकी ज़बान से यह जुम्ला सुना तो मुझे रोना आ गया। चूंकि वह साहिब हज़रते वाला की तर्बियत में थे, इसलिये हज़रते वाला ने उनसे फ़रमाया कि खुदा के बन्दे, ऐसा भी क्या बुख़्ल करना कि आदमी किसी की तारीफ़ में दो लफ़्ज़ न कहे, जिस से उसके दिल को ख़ुशी हो जाए। इसलिये खाने के बाद उस खाने की तारीफ़ और उसके पकाने वाले की तारीफ़ करनी चाहिए, ताकि उस खाने पर अल्लाह का शुक्र भी अदा हो जाए, और खाना बनाने वाले का दिल भी खुश हो जाए।

हदिये की तारीफ़

आम तौर पर लोगों की यह आदत होती है कि जब उनको हदिया पेश किया जाए तो वे तकल्लुफ़ के तौर पर यह कहते हैं कि भाई, इस हदिये की क्या ज़रूरत थी। आपने बेकार तकल्लुफ़ किया। लेकिन हमारे हज़रत डा० साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि को देखा कि जब हज़रत के बे-तकल्लुफ़ दोस्तों में से कोई मुहब्बत के साथ उनकी खिदमत में हदिया पेश करता, तो हज़रते वाला तकल्लुफ़ नहीं फ़रमाते थे, बल्कि उस हदिये की तरफ़ शौक और रग़्बत का इज़्हार फ़रमाते, और यह कहते भाई, तुम तो ऐसी चीज़ ले आए हो जिसकी हमें ज़रूरत थी।

एक बार मैं हज़रते वाला की ख़िदमत में एक कपड़ा ले गया, और मुझे इस बात का तसव्वुर भी नहीं था कि हजरते वाला इस पर इतनी खुशी का इज़्हार फ़रमायेंगे। चुनांचे जब मैंने वह पेश किया तो हजरते वाला ने फ़रमाया कि हमें ऐसे कपड़े की ज़रूरत थी। हम तो इसकी तलाश में थे, और फरमाया कि जिस रंग का कपड़ा लाए हो यह रंग तो हमें बहुत पसन्द है। और यह कपड़ा भी बहुत अच्छा है।

बार बार उसकी तारीफ़ करते और फ़रमाते थे कि जब एक शख़्स मुहब्बत से हदिया लेकर आया है तो कम से कम इतनी तारीफ़ तो उसकी करो कि उसकी मुहब्बत की क़द्र-दानी हो जाए, और उसका दिल ख़ुश हो जाए कि जो चीज़ मैंने हदिये में पेश की, वह पसन्द आ गयी, और यह जो हदीस शरीफ़ में है कि: "तहादू तहाब्बू" यानी आपस में हदिया दिया करो, और उसके ज़रिये मुहब्बत में इज़ाफ़ा करो। तो मुहब्बत में इज़ाफ़े का ज़रिया उस वक़्त होगा जब तुम हदिया वुसूल करके उसके पसन्द होने और मुहब्बत का इज़्हार करो।

बन्दों का शुक्रिया अदा कर दो

एह हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"من لم يشكر الناس لم يشكر الله" (ترمذی شریف)

यानी जो शख़्स इन्सानों का शुक्र अदा नहीं करता, वह अल्लाह का भी शुक्र अदा नहीं करता।

इस से मालूम हुआ कि जो शख़्स भी तुम्हारे साथ मुहब्बत और इख़्लास का मामला करे, और उसके ज़रिये से तुम्हें कोई फ़ायदा पहुंचे तो कम से कम ज़बान से उसका शुक्रिया अदा कर दो, और उसकी तारीफ़ में दो कलिमे कह दो। यह सुन्नत है, इसलिये कि ये सब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तालीमात हैं। अगर हम इन तरीक़ों को अपना लें तो देखो कितनी मुहब्बतें पैदा होती हैं, और ताल्लुक़ात में कितनी ख़ुशगवारियां पैदा होती हैं। और ये अदावतें और नफ़रतें यह बुग़्ज़ और ये सब दुश्मनियां ख़त्म हो जायेंगी। बशर्ते कि इन्सान हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तालीमात पर ठीक ठीक अमल कर ले। अल्लाह तआला हम सब लोगों को अमल की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

हुज़ूरे अक्दस सल्ल० का सौतेले बेटे को अदब सिखाना

"عن عمرو بن ابی سلمة رضی الله عنهما قال: کنت غلامًا فی حجر رسول الله صلی الله‌علیه وسلم، وکانت یدی تطیش فی الصحفة، قال لی رسول الله صلی الله علیه وسلم: یاغلام، سم الله، وکل بیمینك، وکل مما یلیك" (بخاری‌شریف)

यह हदीस पीछे गुज़र चुकी है, हज़रत अम्र बिन सलमा रज़ि० से रिवायत किया गया है। यह हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सौतेले बेटे थे, हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा पहले हज़रत अबू सलमा रज़ियल्लाहु अन्हु की बीवी थीं, उनके इन्तिक़ाल के बाद आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा से निकाह किया था, और हज़रत अम्र बिन अबी सलमा रज़ि० अबू सलमा के बेटे थे, निकाह के बाद यह भी हज़रत उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा के साथ आ गये थे, इस तरह यह हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सौतेले बेटे बन गये, और आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तर्बियत में रहे। वह फ़रमाते हैं कि जब मैं बच्चा था, और हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तर्बियत में था, एक बार जब मैं हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ खाने के लिए बैठा, तो खाने के दौरान मेरा हाथ खाने के बर्तन में चारों तरफ़ हर्कत करता था। एक निवाला इस तरफ़ से खा लिया, दूसरा निवाला उस तरफ़ से खा लिया, तीसरा निवाला किसी और तरफ़ से खा लिया। और जब हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मेरी यह हर्कत देखी तो आपने फ़रमायाः ऐ लड़के, खाना शुरू करने से पहले अल्लाह का नाम लो, बिस्मिल्लाह पढ़ो, और दाहिने हाथ से खाओ, और अपने सामने से खाओ, यानी बर्तन का जो हिस्सा तुम्हारे सामने है, उस से खाओ।

अपने सामने से खाना अदब है

इस हदीस में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तीन अदब बयान फ़रमाए। पहला अदब यह है कि बिस्मिल्लाह पढ़ कर खाना खाओ। इसके बारे में पीछे तफ़्सील से बयान हो गया। दूसरा अदब यह है कि दाहिने हाथ से खाओ। इसका बयान भी पीछे आ चुका है। तीसरा अदब यह बयान फ़रमाया कि अपने सामने से खाओ, इधर उधर हाथ न ले जाओ, इस अदब पर आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बड़ी ताकीद फ़रमाई है। इसकी एक वजह तो बिल्कुल ज़ाहिर है, वह यह कि अगर इन्सान खाना अपने सामने से खायेगा तो इस सूरत में अगर खाने का कुछ हिस्सा बच जायेगा तो वह बदनुमा और बुरा नहीं मालूम नहीं होगा, वरना अगर चारों तरफ़ से खायेगा तो इस सूरत में जो खाना बच जायेगा, वह बदनुम हो जायेगा, और दूसरा आदमी उसको खाना चाहेगा तो उसको किराहियत होगी, जिसके नतीजे में उस खाने को ज़ाया करना पड़ेगा, इसलिये फ़रमाया कि अपने सामने से खाओ।

खाने के दरमियान में बर्कत नाज़िल होती है

एक हदीस में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि जब खाना सामने रखा जाता है, तो अल्लाह तआला की तरफ़ से उस खाने के बीच और दरमियान में बर्कत नाज़िल होती है। अब अगर उस खाने के दरमियान ही से खा लिया तो इसका मतलब यह है कि उस खाने की बर्कत ख़त्म हो गयी, इसलिये अगर एक तरफ़ से खाना खाया जायेगा तो अल्लाह तआला की बर्कत ज़्यादा देर तक बर क़रार रहेगी। अब सवाल यह होता है कि यह बर्कत क्या चीज़ है? दरमियान में किस तरह नाज़िल होती है? ये सारी बातें ऐसी हैं जिन को हम अपनी सीमित अक़्ल से नहीं समझ सकते, ये अल्लाह तआला की हिक्मतें हैं, वे जानें और उनके

रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जानें। हमें इस बहस में पड़ने की ज़रूरत नहीं। बस हमें तो यह अदब सिखा दिया कि अपने सामने से खाओ, इधर उधर से मत खाओ। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

अगर मुख़्तलिफ़ चीज़ें हों तो आगे हाथ बढ़ा सकते हैं

लेकिन यह अदब उस वक़्त है जब खाना एक ही क़िस्म का हो। अगर बर्तन के अन्दर मुख़्तलिफ़ क़िस्म की चीज़ें रखी हैं तो इस सूरत में अपनी पसन्द और अपने मतलब की चीज़ लेने के लिए हाथ इधर उधर, दायें बायें जाए तो इसमें कोई हरज नहीं। चुनांचे हज़रत अक्राश बिन ज़ईब रज़ियल्लाहु अन्हु एक सहाबी हैं, वह फ़रमाते हैं कि एक बार मैं हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम किसी जगह दावत में तशरीफ़ ले जाने लगे तो आपने मुझे भी साथ ले लिया। जब वहां पहुंचे तो हमारे सामने दस्तरख़्वान पर "सरीद" लाया गया। "सरीद" इसे कहते हैं कि रोटी के टुकड़े तोड़ कर शोरबे में भिगो दिए जाते हैं, फिर उसको खाया जाता है। यह खाना हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बहुत पसन्द था, और आपने इसकी फ़ज़ीलत भी बयान फ़रमाई है कि "सरीद" बड़ा अच्छा खाना है। बहर हाल, हज़रत अक्राश रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि जब मैंने सरीद खाना शुरू किया तो एक काम तो यह किया कि मैंने बिस्मिल्लाह नहीं पढ़ी, वैसे ही खाना शुरू कर दिया तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुझ से फ़रमाया कि खाने से पहले अल्लाह का नाम लो, और बिस्मिल्लाह पढ़ो। उसके बाद दूसरा काम यह किया कि मैं खाने के दौरान एक निवाला यहां से लेता और दूसरा आगे से लेता। कभी इधर से कभी उधर से निवाला लेता, जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मेरी यह हर्कत देखी तो आपने फ़रमायाः

"يا عكراش، كل من موضع واحد، فانه طعام واحد"

ऐ अक्राश, अपने सामने से खाना खाओ, इसलिये कि एक ही क़िस्म का खाना है।

चुनांचे मैंने एक ही जगह से खाना शुरू कर दिया। जब खाने से फ़ारिग़ हो गये तो हमारे सामने एक बड़ा थाल लाया गया, जिस में मुख़्तलिफ़ क़िस्म की खजूरें थीं। कोई किसी रंग की, कोई किसी रंग की, कोई उमदा, कोई दरमियानी, कोई तर, कोई ख़ुश्क। कहावत मशहूर है कि दूध का जला छाछ भी फूंक फूंक कर पीता है। चूंकि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मेरा हाथ पकड़ कर मुझे तल्क़ीन फ़रमाई थी कि अपने सामने से खाना चाहिए, इसलिये मैं सिर्फ़ अपने सामने की खजूरें खाता रहा, और मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को देखा कि आपका हाथ कभी यहां जा रहा है, कभी वहां जा रहा है। जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुझे देखा कि मैं एक ही जगह से खा रहा हूं तो आपने फ़रमायाः

"ياعكراش، كل من حيث شئت، فانه غير لون واحد"

ऐ अक्राश, अब जहां से चाहो खाओ। इसलिये कि ये खजूरें मुख़्तलिफ़ क़िस्म की हैं। अब मुख़्तलिफ़ जगहों से खाने में कोई हरज नहीं। बहर हाल, इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह अदब सिखा दिया कि जब एक क़िस्म का खाना हो तो अपने सामने से खाना चाहिए, और जब मुख़्तलिफ़ क़िस्म के खाने दस्तरख़्वान पर रखे हुए हों तो इधर उधर हाथ बढ़ाने में कोई हरज नहीं। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

बायें हाथ से खाना जायज़ नहीं

"وعن سلمة بن الاكوع رضى الله عنه، ان رجلا اكل عند رسول الله صلى الله عليه وسلم بشماله، فقال، كل بيمينك، قال، لا استطيع، قال: لا استطعت، ما منعه الا الكبر، فما رفعها الى فيه" (مسلم شريف)

हज़रत सलमा बिन अक्वा रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि एक

शख़्स हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास बैठ कर बायें हाथ से खाना खा रहा था। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उस से फ़रमाया कि: दायें हाथ से खाना खाओ, उस शख़्स ने जवाब में कहा कि मैं दायें हाथ से नहीं खा सकता (बज़ाहिर ऐसा मालूम होता है कि वह शख़्स मुनाफ़िक़ था, और उसके दायें हाथ में कोई ख़राबी और उज़्र भी नहीं था, वैसे ही उसने झूठ बोल दिया कि मैं नहीं खा सकता) इसलिये कि बाज़ लोगों की तबीयत ऐसी होती है कि वे ग़लती मानने को तैयार नहीं होते, बल्कि अपनी बात पर अड़े रहते हैं। इसी तरह यह शख़्स भी बायें हाथ से खाना खा रहा था, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने टोका, शायद उसको हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का टोकना पसन्द नहीं आया। इसलिये उसने साफ़ कह दिया कि मैं दायें हाथ से नहीं खा सकता, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने झूठ बोल दिया। और नबी के सामने झूठ बोलना, या ग़लत बात कहना और बिना वजह अपनी ग़लती को छुपाना अल्लाह तआला को इन्तिहाई ना पसन्द है। चुनांचे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसको बद्-दुआ देते हुए फ़रमाया: "ला इस्त-तअ्-त" यानी तुम्हें दायें से खाने की कभी ताक़त न हो। चुनांचे रिवायतों में आता है कि उसके बाद उस शख़्स की यह हालत हो गयी कि अगर कभी अपने दायें हाथ को मुंह तक ले जाना भी चाहता तब भी नहीं उठा सकता था, अल्लाह तआला महफ़ूज़ रखे, आमीन।

ग़लती को मान कर के माफ़ी मांग लेनी चाहिए

उसूल यह है कि अगर इन्सानी तक़ाज़े की वजह से कोई ग़लती हो जाए, फिर वह इन्सान नदामत और शर्मिन्दगी का इज़्हार करे तो अल्लाह तआला माफ़ फ़रमा देते हैं, लेकिन ग़लती हो और फिर उस ग़लती पर हट और ज़िद हो, और सीना ज़ोरी हो और उसको सही साबित करने की कोशिशें भी करे, और फिर नबी के सामने झूठ बोले,

यह बड़ा संगीन गुनाह है।

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का किसी के हक़ में बद्-दुआ करना बहुत कम साबित है। यहां तक कि आपने अपने दुश्मनों के हक़ में भी बद्-दुआ नहीं फ़रमाई, जो लोग आपके मुकाबले में लड़ रहे हैं, आप पर तलवार उठा रहे हैं और आप पर तीरों की बारिश कर रहे हैं, उनके लिए भी आपने बद्-दुआ नहीं फ़रमाई, बल्कि यह दुआ दी किः

"اللهم اهد قومی فانهم لا یعلمون"

ऐ अल्लाह! मेरी क़ौम को हिदायत दे दीजिए, ये मुझे जानते नहीं।

लेकिन यह मौक़ा ऐसा था कि आपको "वही" के ज़रिये मालूम हो गया था कि यह शख़्स तकब्बुर की वजह से बतौर ना फ़रमानी के मुनाफ़क़त की बुनियाद पर दायें हाथ से खाने से इन्कार कर रहा है, हक़ीक़त में इसको कोई उज़्र नहीं है। इसलिये आपने उसके हक़ में बद्-दुआ का कलिमा इर्शाद फ़रमाया, और वह बद्-दुआ फ़ौरन कुबूल हो गई।

अपनी ग़लती पर अड़ना दुरुस्त नहीं

हमारे हज़रत डा० अब्दुल हई साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि अगर आदमी ग़लत कामों और गुनाहों में मुब्तला हो, फिर भी बुज़ुर्गों और अल्लाह वालों के पास इसी हाल में चला जाए, इसमें कोई हरज नहीं, लेकिन वहां जाकर अगर झूठ बोलेगा या अपनी ग़लती पर अड़ा रहेगा तो यह बड़ी ख़तरनाक बात है। अंबिया अलैहिमुस्सलाम की शान तो बहुत बड़ी है, बहुत सी बार ऐसा होता है कि अंबिया के वारिस (यानी उलमा) पर भी अल्लाह तआला यह फ़ज़्ल फ़रमा देते हैं कि उनको तुम्हारी हक़ीक़ते हाल से बा ख़बर फ़रमा देते हैं। चुनांचे हज़रत डा० साहिब ही ने हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि का यह वाक़िआ सुनाया कि एक बार

हज़रते वाला की मज्लिस हो रही थी, हज़रते वाला वाज़ फ़रमा रहे थे। एक साहिब उसी मज्लिस में दीवार या तकिये की टेक लगा कर घमंड के अन्दाज़ में बैठ गये। इस तरह टेक लगा कर पांव फैला कर बैठना मज्लिस के अदब के ख़िलाफ़ है। और जो शख़्स भी मज्लिस में आता था, वह अपनी इस्लाह की ग़र्ज़ से आता था, इसलिए कोई ग़लत काम करता तो हज़रते वाला का फ़र्ज़ था कि उसको टोकें, चुनांचे हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने उस शख़्स को टोक दिया, और फ़रमाया कि इस तरह बैठना मज्लिस के अदब के ख़िलाफ़ है। आप ठीक से अदब के साथ बैठ जाएं, उन साहिब ने बजाए सीधे बैठने के उज़्र बयान करते हुए कहाः हज़रत मेरी कमर में तक्लीफ़ है, उसकी वजह से मैं इस तरह बैठा हूं। बज़ाहिर वह यह कहना चाहता था कि आपका यह टोकना ग़लत है, इसलिये कि आपको क्या मालूम कि मैं किस हालत में हूं, किस तक्लीफ़ में मुब्तला हूं, आपको मुझे टोकना नहीं चाहिए था। हज़रत डाक्टर साहिब ख़ुद बयान फ़रमाते हैं कि मैंने हज़रत थानवी को देखा कि आपने एक लम्हे के लिए गर्दन झुकाई और आंख बन्द की, और फिर गर्दन उठा कर उस से फ़रमाया कि आप झूठ बोल रहे हैं, आपकी कमर में कोई तक्लीफ़ नहीं है। आप मज्लिस से उठ जाइए। यह कह कर डांट कर उठा दिया। अब बज़ाहिर ऐसा मालूम होता है कि हज़रते वाला को क्या पता कि उसकी कमर में तक्लीफ़ है या नहीं? लेकिन कभी कभी अल्लाह तआला अपने किसी नेक बन्दे को किसी वाक़िए की ख़बर अता फ़रमा देते हैं। इसलिए बुज़ुर्गों से झूठ बोलना या उनको धोखा देना बड़ी ख़तरनाक बात है, अगर ग़लती हो जाए, और कोताही हो जाए, उसके बाद आदमी उस पर शर्मिन्दा हो जाए और अल्लाह तआला उस पर तौबा की तौफ़ीक़ दे दे तो इन्शा अल्लाह वह गुनाह और ग़लती माफ़ हो जायेगी।

बहर हाल हज़रते वाला ने उस शख़्स को मज्लिस से उठा दिया, बाद में लोगों ने उस से पूछा तो उसने साफ़ साफ़ बता दिया कि हक़ीक़त में हज़रते वाला ने सही फ़रमाया था, मेरी कमर में कोई तक्लीफ़ नहीं थी, मैंने तो सिर्फ़ अपनी बात रखने के लिए यह बात बनाई थी।

बुज़ुर्गों की शान में गुस्ताख़ी से बचो

देखिए गुनाह, ग़लती, कोताही, दुनिया में किस से नहीं होती? इन्सान से ग़लती और कोताही हो ही जाती है। अगर कोई शख़्स बुज़ुर्गों की बात पर नहीं चल रहा है तो भी अल्लाह तआला किसी वक़्त तौबा की तौफ़ीक़ दे देंगे, उसकी ख़ता को माफ़ फ़रमा देंगे। लेकिन बुज़ुर्गों की शान में गुस्ताख़ी करना, या उनके लिए बुरे कलिमात ज़बान से निकालना और अपने गुनाह को सही साबित करना, यह इतनी बुरी लानत है कि कभी कभी इसकी वजह से ईमान के लाले पड़ जाते हैं। अल्लाह तआला बचाए। इसलिये अगर किसी अल्लाह वाले की कोई बात पसन्द न आए तो कोई बात नहीं, ठीक है पसन्द नहीं आई। लेकिन उसकी वजह से उनके हक़ में कोई ऐसा कलिमा न कहो, जो बे-इज़्ज़ती और गुस्ताख़ी की हो। कहीं ऐसा न हो कि वह कलिमा अल्लाह तआला को ना-गवार हो जाए, तो इन्सान का ईमान और उसकी ज़िन्दगी ख़तरे में पड़ जाए। अल्लाह तआला हिफ़ाज़त फ़रमाए, आमीन।

आज कल लोगों में यह बीमारी पैदा हो गई है कि ग़लती को ग़लती तस्लीम करने से इन्कार कर देते हैं। चोरी और फिर सीना ज़ोरी। गुनाह भी कर रहे हैं और फिर गुनाह को सही साबित करने की फ़िक्र में हैं। जैसे किसी बुज़ुर्ग के बारे में यह कह देना कि वह तो दुकानदार आदमी थे, ऐसे वैसे थे। ऐसे कलिमात ज़बान से निकालना बड़ी ख़तरनाक बात है। इस से ख़ुद परहेज़ करें और दूसरों को बचाने की फ़िक्र करें।

दो खजूरें एक साथ मत खाओ

"عن جبلة بن سحيم رضى الله عنه قال اصابنا عام سنة مع ابن الزبير، فرزقنا تمرا، فكان عبد الله بن عمر رضى الله عنهما يمربنا ونحن ناكل، فيقول: لا تقارنوا، فان النبى صلى الله عليه وسلم نهى عن القران، ثم يقول، الا ان يستاذن الرجل اخاه" (صحيح بخارى)

हज़रत जबला बिन सहीम रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अन्हु की हुकूमत के ज़माने में हमारे ऊपर क़हत (काल) की हालत में अल्लाह तआला ने खाने के लिए कुछ खजूरें अता फ़रमा दीं, जब हम वे खजूर खा रहे थे, उस वक़्त हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु हमारे पास से गुज़रे, उन्हों ने हम से फ़रमाया कि दो दो खजूरें एक साथ मत खाओ, इसलिये कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस तरह दो दो खजूरें एक साथ मिला कर खाने से मना फ़रमाया है।

दो दो खजूरें एक साथ मिला कर खाने को अर्बी में "क़िरान" कहते हैं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसलिये मना फ़रमाया कि जो खजूर खाने के लिए रखी हैं उनमें सब खाने वालों का बराबर मुश्तरक हक़ है, अगर दूसरे लोग तो एक एक खजूर उठा कर खा रहे हैं, और तुमने दो दो खजूरें उठा कर खानी शुरू कर दीं तो अब तुम दूसरों का हक़ मार रहे हो और दूसरों का हक़ मारना जायज़ नहीं। लेकिन अगर दूसरे लोग भी दो दो खजूरें खा रहे हैं तब तुम भी दो दो उठा कर खा लो, सही तरीक़ा यह है कि जिस तरह लोग खा रहे हैं तुम भी उसी तरीक़े से खाओ। इस हदीस से यह बतलाना मक़्सूद है कि दूसरों का हक़ मारना जायज़ नहीं।

मुश्तरक चीज़ के इस्तेमाल का तरीक़ा

इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक उसूल बयान फ़रमा दिया कि जो चीज़ मुश्तरक हो, और सब लोग

उस से फायदा उठाते हों, उस मुश्तरक चीज़ से कोई शख़्स दूसरे लोगों से ज़्यादा फायदा उठाने की कोशिश करे तो यह जायज़ नहीं। इसलिये कि उसकी वजह से दूसरों का हक़ ज़ाया हो जायेगा, इस उसूल का ताल्लुक़ सिर्फ़ ख़जूर से नहीं, बल्कि हक़ीक़त में ज़िन्दगी के उन तमाम शोबों से इसका ताल्लुक़ है, जहां चीज़ों में शिर्कत और साझा पाया जाता है। जैसे आज कल की दावतों में "सेल्फ़ सर्विस" का रिवाज है कि आदमी खुद उठ कर जाए, और अपना खाना लाए, और खाना खाए, अब उसी खाने में तमाम खाने वालों का मुश्तरक हक़ है, अब अगर एक शख़्स जाकर बहुत सारा खाना अपने बर्तन में डाल कर ले आया, और दूसरे लोग उसे देखते रह गये। तो यह भी इस उसूल के तहत ना जायज़ है, और इस "किरान" में दाख़िल है जिस से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मना फ़रमाया।

प्लेट में खाना एहतियात से निकालो

इस उसूल के ज़रिये उम्मत को यह तालीम देनी है कि एक मुसलमान का काम यह है कि वह ईसार (ख़ुद पर दूसरों को तरजीह देना) से काम ले, न यह कि वह दूसरों के हक़ पर डाका डाले। चाहे वह हक़ छोटा सा क्यों न हो, इसलिये जब आदमी कोई अमल करे तो दूसरों का हक़ मद्दे नज़र रखते हुए काम करे, यह न हो कि बस मुझे मिल जाए चाहे दूसरों को मिल या न मिले।

मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि ने दस्तरख़्वान पर बैठ कर यही मस्अला बयान करते हुए फ़रमाया कि जब खाना दस्तरख़्वान पर आए तो यह देखो कि दस्तरख़्वान पर कितने आदमी खाने वाले हैं, और जो चीज़ दस्तरख़्वान पर आई है वह सब के दरमियान बराबर तक़्सीम की जाए तो तुम्हारे हिस्से में कितनी आयेगी? बस इस हिसाब से वह चीज़ तुम खा लो, अगर इस से ज़्यादा खाओगे तो यह "किरान" में दाख़िल है जो ना जायज़ है।

रेल में ज़ायद सीट पर क़ब्ज़ा करना जायज़ नहीं

इसी तरह एक बार वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अलैहि ने यह मस्‌अला बयान फ़रमाया कि तुम रेल गाड़ी में सफ़र करते हो। तुमने रेल गाड़ी के डब्बे में यह लिखा देखा होगा कि इस डब्बे में २२ मुसाफ़िरों के बैठने की गुन्जाइश है। अब आपने पहले जाकर तीन चार सीटों पर क़ब्ज़ा कर लिया, और अपने लिए ख़ास कर लिया, और उस पर बिस्तर लगा कर लेट गए। जिसका नतीजा यह हुआ कि जो लोग सवार हुए उनको बैठने के लिए सीट नहीं मिली। अब वे खड़े हैं और आप लेटे हुए हैं। फ़रमाया कि यह भी "क़िरान" में दाख़िल है, जो ना जायज़ है। इसलिये कि तुम्हारा हक़ तो सिर्फ़ इतना था कि एक आदमी की सीट पर बैठ जाते, लेकिन जब आपने कई सीटों पर क़ब्ज़ा करके दूसरों के हक़ को ज़ाया किया तो इस अमल के ज़रिये तुमने दो गुनाह किए। एक यह कि तुम ने सिर्फ़ एक सीट का टिकट ख़रीदा था। फिर जब तुम ने इस से ज़्यादा सीटों पर क़ब्ज़ा कर लिया तो इसका मतलब यह हुआ कि पैसे दिए बग़ैर तुमने अपने हक़ से ज़्यादा पर क़ब्ज़ा कर लिया। दूसरा गुनाह यह किया कि दूसरे मुसलमान भाईयों की सीट पर क़ब्ज़ा कर लिया, उनका हक़ ज़ाया किया, इस तरह इस अमल के ज़रिये दो गुनाह के मुर्तकिब हुए, पहले गुनाह के ज़रिये अल्लाह तआला का हक़ ज़ाया हुआ, और दूसरे गुनाह के ज़रिए बन्दे का हक़ ज़ाया हुआ।

साथ सफ़र करने वाले के हुक़ूक़

और यह बन्दे का ऐसा हक़ है कि जिसको बन्दों से माफ़ कराना भी मुश्किल है, इसलिये कि बन्दों के हुक़ूक़ उस वक़्त तक माफ़ नहीं होते जब तक हक़ वाला माफ़ न करे, सिर्फ़ तौबा करने से माफ़ नहीं होते। अब अगर किसी वक़्त अल्लाह तआला ने तौबा की तौफ़ीक़ दी और दिल में यह ख़्याल आया कि मुझ से यह ग़लती हो गई थी तो अब उस वक़्त उस शख़्स को कहां तलाश करोगे जिसने तुम्हारे साथ

रेल गाड़ी में सफ़र किया था, और तुमने उसका हक़ ज़ाया कर दिया, इसलिये अब माफ़ी का कोई रास्ता नहीं। इसलिये इन मामलात में बहुत एहतिमाम करने की ज़रूरत है। क़ुरआने करीम ने कई जगहों पर इस बात का हुक्म दिया कि:

"وَالصَّاحِبِ بِالْجَنْبِ" (النساء:٣٦)

यानी "साहिबे बिल्‌जम्ब" का हक़ अदा करो। "साहिबे बिल्‌जम्ब" उसको कहते हैं जो किसी वक़्त आरज़ी तौर पर रेल के सफ़र में या बस में, या जहाज़ में तुम्हारे साथ आकर बैठ गया हो। वह "साहिबे बिल्‌जम्ब" है। उसके भी हुक़ूक़ हैं। उन हुक़ूक़ को ज़ाया न करो। और उसके साथ ईसार से काम लो। ज़रा सी देर का सफ़र है, ख़त्म हो जायेगा, लेकिन अगर सफ़र के दौरान तुमने अपने ज़िम्मे गुनाह लाज़िम कर लिया, तो वह गुनाह सारी उम्र तुम्हारे नामा-ए-आमाल में लिखा रहेगा, उसकी माफ़ी होनी मुश्किल है। यह सब "किरान" में दाख़िल है और ना जायज़ है।

मुश्तरका कारोबार में हिसाब किताब शरअ़न ज़रूरी है

आज कल यह वबा भी आम है कि कई भाईयों का मुश्तरका कारोबार है, लेकिन हिसाब किताब कोई नहीं। कहते हैं कि हम सब भाई हैं, हिसाब किताब की क्या ज़रूरत है? हिसाब किताब तो ग़ैरों में होता है अपनों में हिसाब किताब कहां, अब इसका कोई हिसाब किताब, कोई लिखत पढ़त नहीं कि किस भाई की कितनी मिल्कियत और कितना हिस्सा है? माहाना किसको कितना मुनाफ़ा दिया जायेगा? इसका कोई हिसाब नहीं, बल्कि अलल टप मामला चल रहा है। जिसका नतीजा यह होता है कि कुछ दिनों तक तो मुहब्बत व प्यार से हिसाब चलता रहता है, लेकिन बाद में दिलों में शिक्वे शिकायतें पैदा होनी शुरू हो जाती हैं। कि फ़लां की औलाद तो इतनी है, वह ज़्यादा रक़म लेता है, फ़लां की औलाद कम है, वह कम लेता है, फ़लां की शादी पर इतना ख़र्च किया गया, हमारे बेटे की

शादी पर कम खर्च हुआ, फ़लां ने कारोबार से इतना फ़ायदा उठा लिया, हमने नहीं उठाया, वग़ैरह। इस तरह की शिकायतें शुरू हो जाती हैं।

ये सब कुछ इसलिये हुआ कि हम नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बातए हुए तरीक़े से दूर चले गए, याद रखिए, हर मुसलमान पर वाजिब है कि अगर कोई मुश्तरक चीज़ है तो उस मुश्तरक चीज़ का हिसाब व किताब रखा जाए, अगर हिसाब व किताब नहीं रख जा रहा है तो तुम ख़ुद भी गुनाह में मुब्तला हो रहे हो और दूसरों को भी गुनाह में मुब्तला कर रहे हो। याद रखिए, भाईयों के दरमियान मामलात के अन्दर जो मुहब्बत व प्यार होता है, वह कुछ दिन तक चलता है, बाद में वह लड़ाई झगड़ों में तब्दील हो जाता है, और फिर वह लड़ाई झगड़ा ख़त्म होने को नहीं आता। कितनी मिसालें इस वक़्त नेरे सामने हैं।

मिल्कियतों में फ़र्क़ शरअन ज़रूरी है

मिल्कियतों में इम्तियाज़ और फ़र्क़ होना ज़रूरी है। यहां तक कि बाप बेटे की मिल्कियत में और शौहर और बीवी की मिल्कियत में फ़र्क़ और इम्तियाज़ होना ज़रूरी है, हकीमुल उम्मत हज़रत थानवी रह० की दो बीवियां थीं, दोनों के घर अलग अलग थे, हज़रते वाला रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि मेरी मिल्कियत और मेरी दोनों बीवियों की मिल्कियत बिल्कुल अलग अलग करके बिल्कुल इम्तियाज़ कर रखा है। वह इस तरह कि जो कुछ सामान बड़ी बीवी के घर के सामने है, वह उनकी मिल्कियत है और जो सामान छोटी बीवी के घर में है, वह उनकी मिल्कियत है, और जो सामान ख़ानक़ाह में है वह मेरी मिल्कियत है, आज अगर दुनिया से चला जाऊं तो कुछ कहने सुनने की ज़रूरत नहीं। अल्हम्दु लिल्लाह सब इम्तियाज़ मौजूद है।

हज़रत मुफ़्ती साहिब रह० और मिल्कियत की वज़ाहत

मैंने अपने वालिद माजिद रहमतुल्लाहि अलैहि को भी इसी तरह देखा कि हर चीज़ में मिल्कियत वाज़ेह कर देने का मामूल था। आख़री उम्र में हज़रत वालिद साहिब ने अपने कमरे में एक चारपाई डाल ली थी। दिन रात वहीं रहते थे, हम लोग हर वक़्त ख़िदमत में हाज़िर रहा करते थे, मैंने देखा कि जब ज़रूरत की कोई चीज़ दूसरे कमरे से उनके कमरे में लाता तो ज़रूरत पूरी होने के बाद फ़ौरन फ़रमाते कि इस चीज़ को वापस ले जाओ। अगर कभी वापस लेजाने में देर हो जाती तो नाराज़ होते कि मैंने तुम से कहा था कि वापस पहुंचा दो, अभी तक वापस क्यों नहीं पहुंचाई?

कभी कभी हमारे दिल में यह ख़्याल आता कि ऐसी जल्दी वापस लेजाने की क्या ज़रूरत है? अभी वापस पहुंचा देंगे, एक दिन ख़ुद वालिद माजिद रहमतुल्लाहि अलैहि ने इर्शाद फ़रमाया कि बात असल में यह है कि मैंने अपने वसिय्यत नामे में यह लिख दिया है कि मेरे कमरे में जो चीज़ें हैं, वे सब मेरी मिल्कियत हैं। और बीवी के कमरे में जो चीज़ें हैं, वे उनकी मिल्कियत हैं। इसलिये जब मेरे कमरे में किसी दूसरे की चीज़ आ जाती है तो मुझे ख़्याल होता है कि कहीं ऐसा न हो कि मेरा इन्तिकाल इस हालत में हो जाए कि वह चीज़ मेरे कमरे के अन्दर हो, इसलिये कि वसिय्यत नामे के मुताबिक़ वह चीज़ मेरी मिल्कियत तसव्वुर की जायेगी, हालांकि हक़ीक़त में वह चीज़ मेरी नहीं है। इसलिये मैं इस बात का एहतिमाम करता हूं और तुम्हें कहता हूं कि यह चीज़ जल्दी वापस ले जाओ।

ये सब बातें दीन का हिस्सा हैं आज हमने इनको दीन से ख़ारिज कर दिया है, और यही बातें बड़ों से सीखने की हैं, और ये सब बातें इसी उसूल से निकल रही हैं, जो उसूल हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस हदीस में बयान फ़रमा दिया, वह यह कि "क़िरान" से बचो।

मुश्तरक चीज़ों के इस्तेमाल का तरीक़ा

मेरे वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि घर में कुछ चीज़ें मुश्तरक इस्तेमाल की होती हैं। जिनको घर का हर फ़र्द इस्तेमाल करता है, और उनकी एक जगह मुक़र्रर होती है कि फ़लां चीज़ फ़लां जगह पर रखी जायेगी, जैसे गिलास फ़लां जगह रखा जायेगा, प्याला फ़लां जगह रखा जायेगा, साबुन फ़लां जगह रखा जायेगा। हमें फ़रमाया करते थे कि तुम इन चीज़ों को इस्तेमाल करके बे-जगह रख देते हो, तुम्हें मालूम नहीं कि तुम्हारा यह अमल बड़ा गुनाह है, इसलिये कि वह चीज़ मुश्तरक इस्तेमाल की है, जब दूसरे शख़्स को उसके इस्तेमाल की ज़रूरत होगी तो वह उसको उसकी जगह पर तलाश करेगा, और जब जगह पर उसको वह चीज़ नहीं मिलेगी तो उसको तक्लीफ़ और परेशानी होगी और किसी भी मुसलमान को तक्लीफ़ पहुंचाना बड़ा गुनाह है। हमारा ज़ेहन कभी इस तरफ़ गया भी नहीं था कि यह भी गुनाह की बात है, हम तो समझते थे कि यह तो दुनियादारी का काम है, घर का इन्तिज़ामी मामला है। याद रखो: ज़िन्दगी का कोई गोशा ऐसा नहीं है, जिसके बारे में दीन की कोई हिदायत मौजूद न हो। हम सब अपने अपने गरेबान में मुंह डाल कर देखें कि क्या हम लोग इस बात का एहतिमाम करते हैं कि मुश्तरक इस्तेमाल की चीज़ें इस्तेमाल के बाद उनकी मुताय्यन जगह पर रखें, ताकि दूसरों को तक्लीफ़ न हो, अब यह छोटी सी बात है, जिस में हम सिर्फ़ बे ध्यानी और बे तवज्जही की वजह से गुनाहों में मुब्तला हो जाते हैं। इसलिये कि हमें दीन की फ़िक्र नहीं, इसलिये कि इन मसअलों से जहालत और ना जानकारी भी आज कल बहुत है।

बहर हाल, ये सब बातें "क़िरान" के अन्दर दाख़िल हैं। वैसे तो यह छोटी सी बात है कि दो खजूरों को एक साथ मिला कर न खाना चाहिए। लेकिन इस से यह उसूल मालूम हुआ कि हर वह काम

करना जिस से दूसरे मुसलमान को तक्लीफ़ हो, या दूसरों का हक़ ज़ाया हो, सब "क़िरान" में दाख़िल हैं।

मुश्तरक लैट्रीन का इस्तेमाल

कभी कभी ऐसी बात होती है, जिसको बताते हुए शर्म आती है, लेकिन दीन की बातें समझाने के लिए शर्म करना भी ठीक नहीं। जैसे आप लैट्रीन में गये और फ़ारिग़ होने के बाद गन्दगी को बहाया नहीं, वैसे ही छोड़ कर चले आये। हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि यह अ़मल बड़ा गुनाह है, इसलिये कि जब दूसरा शख़्स लैट्रीन करेगा तो उसको कराहियत होगी, और तक्लीफ़ का सबब तुम बने, तुम ने उसको तक्लीफ़ पहुंचाई, और एक मुसलमान को तक्लीफ़ पहुंचा कर तुमने बड़ा गुनाह का जुर्म किया।

ग़ैर मुस्लिमों ने इस्लामी उसूल अपना लिये

एक बार मैं हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के साथ ढाका के सफ़र पर गया, हवाई जहाज का सफ़र था, रास्ते में मुझे गुस्लख़ाने में जाने की ज़रूरत पेश आई, आपने देखा होगा कि हवाई जहाज़ के गुस्लखाने में वाश-बेसन के ऊपर यह लिखा होता है कि: "जब आप वाश-बेसन को इस्तेमाल कर लें तो उसके बाद कपड़े से उसको साफ़ और ख़ुश्क कर दें, ताकि बाद में आने वाले को कराहियत न हो"। जब मैं गुस्लख़ाने से वापस आया तो हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि गुस्लख़ाने में वाश-बेसन पर जो इबारत लिखी है, यह वही बात है जो मैं तुम लोगों से बार बार कहता हूं कि दूसरों को तक्लीफ़ से बचाना दीन का हिस्सा है। जो इन ग़ैर मुस्लिमों ने इख़्तियार कर लिया है। इसके नतीजे में अल्लाह तआ़ला ने उनको दुनिया में तरक्क़ी अ़ता फ़रमा दी है, और हम लोगों ने इन बातों को दीन से ख़ारिज कर दिया है, और दीन को सिर्फ़ नमाज़ रोज़ों के अन्दर महदूद (सीमित) कर दिया

है। रहन सहन और ज़िन्दगी गुज़ारने के इन आदाब को बिल्कुल छोड़ दिया है, जिसका नतीजा यह है कि हम लोग पस्ती और गिरावट की तरफ़ जा रहे हैं। वजह इसकी यह है कि अल्लाह तआला ने इस दुनिया को आलमे अस्बाब बनाया है, इसमें जैसा अमल इख़्तियार करोगे, अल्लाह तआला वैसे ही नतीजे पैदा फ़रमायेंगे।

एक अंग्रेज़ औरत का वाक़िआ

पिछले साल मुझे लन्दन जाने का इत्तिफ़ाक़ हुआ, फिर वहां लन्दन से ट्रेन के ज़रिये एडम्बरा जा रहा था, रास्ते में ग़ुस्लख़ाने में जाने की ज़रूरत पेश आई, जब ग़ुस्लख़ाने के पास गया तो देखा कि एक अंग्रेज़ औरत दरवाज़े पर खड़ी है, मैं यह समझा कि शायद ग़ुस्लख़ाना इस वक़्त फ़ारिग़ नहीं है, और यह औरत इस इन्तिज़ार में है कि जब फ़ारिग़ हो जाए तो वह अन्दर जाए। चुनांचे मैं अपनी जगह पर आकर बैठ गया। जब काफ़ी देर इस तरह गुज़र गयी कि न तो उसके अन्दर से कोई निकल रहा था और न यह अन्दर जा रही थी। मैं दोबारा ग़ुस्लख़ाने के क़रीब गया तो मैंने देखा कि ग़ुस्लख़ाने के दरवाज़े पर लिखा है कि यह ख़ाली है, अन्दर कोई नहीं। चुनांचे मैंने उस औरत से कहा कि आप अन्दर जाना चाहें तो चली जायें, ग़ुस्लख़ाना तो ख़ाली है, उस औरत ने कहा कि एक और वजह से खड़ी हूं। वह यह कि मैं अन्दर ज़रूरत के लिए गयी थी और ज़रूरत से फ़ारिग़ होने के बाद अभी मैंने उसको फ़लश नहीं किया था कि इतने में गाड़ी स्टेशन पर आकर खड़ी हो गयी, और क़ानून यह है कि जब गाड़ी पलेट फ़ार्म पर खड़ी हो, उस वक़्त ग़ुस्लख़ाना इस्तेमाल न करना चाहिए। और न उसमें पानी बहाना चाहिए। अब मैं इस इन्तिज़ार में खड़ी हूं कि जब गाड़ी चल पड़े तो मैं उसको फ़लश कर दूं और उसमें पानी बहा दूं और फिर मैं अपनी सीट पर वापस जाऊं।

अब आप अन्दाज़ा लगाइये कि वह औरत सिर्फ़ इस इन्तिज़ार में थी कि फ़लश करना रह गया था, और अब तक फ़लश भी इसलिये नहीं किया था कि यह क़ानून की ख़िलाफ़ वर्ज़ी (उल्लंघन) हो जायेगी। उस वक़्त मुझे हज़रत डा० साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि की यह बात याद आ गई, वह फ़रमाया करते थे कि: इस बात का ख़्याल और एहतिमाम कि आदमी फ़लश करके जाए, असल में यह दीन का हुक्म है ताकि बाद में आने वाले को तक्लीफ़ न हो। लेकिन दीन की इस बात पर एक ग़ैर मुस्लिम ने किस एहतिमाम से अमल किया। आप अन्दाज़ा लगायें कि क्या हम में से कोई शख़्स अगर मुश्तरक चीज़ को इस्तेमाल करे तो क्या उसको इस बात का एहतिमाम और ख़्याल होता है? बल्कि हम लोग वैसे ही गन्दा छोड़ देते हैं, और यह सोचते हैं कि जो बाद में आयेगा वह भरेगा, वह ख़ुद निबट लेगा, वह जाने उसका काम जाने।

ग़ैर मुस्लिम क़ौमें क्यों तरक़्क़ी कर रही हैं

ख़ूब समझ लीजिए, यह दुनिया अस्बाब की दुनिया है, अगर ये बातें ग़ैर मुस्लिमों ने हासिल करके इन पर अमल करना शुरू कर दिया तो अल्लाह तआला ने उनको दुनिया में तरक़्क़ी देदी। अगरचे आख़िरत में तो उनका कोई हिस्सा नहीं, लेकिन मुआशरत के वे आदाब जो हमें मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सिखाये थे, उन आदाब को उन्हों ने इख़्तियार कर लिया, तो अल्लाह तआला ने उनको तरक़्क़ी देदी। इसलिये यह ऐतराज़ तो कर दिया कि हम मुसलमान हैं, कलिमा पढ़ते हैं, ईमान का इक़रार करते हैं, इसके बावजूद दुनिया में हम ज़लील हो रहे हैं। दूसरे लोग ग़ैर मुस्लिम होने के बावजूद तरक़्क़ी कर रहे हैं। लेकिन यह नहीं देखा कि उन ग़ैर मुस्लिमों का यह हाल है कि तिजारत में झूठ नहीं बोलेंगे, अमानत और दियानत से काम लेंगे, जिसके नतीजे में अल्लाह तआला ने उनकी तिजारत चमका दी, लेकिन मुसलमानों ने इन

चीज़ों को छोड़ दिया। और दीन को मस्जिद और मदरसे तक महदूद (सीमित) करके बैठ गया। ज़िन्दगी की बाक़ी चीज़ों को दीन से ख़ारिज कर दिया, जिसका नतीजा यह है कि अपने दीन से भी दूर हो गये और दुनिया में भी ज़लील व ख़्वार हो गये। हालांकि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ये सब तालीमात हमें अता फ़रमायीं, ताकि हम इनको अपनी ज़िन्दगी के अन्दर अपनायें और इनको दीन का हिस्सा समझें। बहर हाल, बात यहां से चली थी कि "दो खजूरों को एक साथ मिला कर न खाओ" लेकिन इस से कितने अहम उसूल हमारे लिए निकलते हैं, और यह अपने अन्दर कितना फैलाव रखने वाली बात है, अल्लाह तआला हमारे दिलों में एहसास और समझ पैदा फ़रमा दे, आमीन।

टेक लगा कर खाना सुन्नत के ख़िलाफ़ है

"عن ابی جحیفة رضی اللّٰه عنه قال : قال رسول اللّٰه صلی اللّٰه علیه وسلم: انی لا اکل متکئا" (بخاری شریف)

हज़रत अबू जहीफ़ा रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि मैं टेक लगा कर नहीं खाता।

और एक दूसरी हदीस में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि:

"رأیت رسول اللّٰه صلی اللّٰه علیه وسلم جالسا مقعیا یاکل تمرا"

(مسلم شریف)

मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखा कि आप इस तरह बैठे हुए खजूर खा रहे थे कि आपने अपने घुटने खड़े किए हुए थे।

उकड़ूं बैठ कर खाना सुन्नत नहीं

खाने की नशिस्त (यानी बैठने की हालत) के बारे में लोगों के ज़ेहनों में चन्द ग़लत फ़हमियां पाई जाती हैं, उनको दूर करना

ज़रूरी है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हदीसों की रोशनी में खाने की मुस्तहब और बेहतर नशिस्त यह है कि आदमी इस तरह बैठ कर खाए कि उस नशिस्त के ज़रिये खाने की ताज़ीम भी हो, और तवाज़ो भी हो, घमण्ड भरी नशिस्त न हो, और उस नशिस्त में खाने की बे अदबी और बे इज़्ज़ती न हो। यह जो मशहूर है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उकडूं बैठ कर खाना खाया करते थे यह बात इस तरह दुरुस्त नहीं, मुझे कोई ऐसी हदीस नहीं मिली, जिस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का उकडूं बैठ कर खाना साबित हो। लेकिन ऊपर जो हदीस हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत की गयी है, उसमें जिस नशिस्त (बैठने के तरीके) का ज़िक्र किया गया है, वह यह कि आप ने ज़मीन पर बैठ कर अपने दोनों घुटने सामने की तरफ़ खड़े कर दिये थे। इस हदीस में "उकडूं" बैठना मुराद नहीं, इसलिये यह जो मशहूर है कि "उकडूं" बैठ कर खाना सुन्नत है, यह दुरुस्त नहीं। लेकिन यह बात साबित है कि खाने के वक़्त आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की नशिस्त तवाज़ो वाली नशिस्त होती थी, जिसमें देखने वाले को फ़िरऔनियत, तकब्बुराना या घमण्ड का एहसास न हो, बल्कि बन्दगी का एहसास होता हो।

खाने के लिये बैठने का बेहतरीन तरीक़ा

एक सहाबी फ़रमाते हैं कि एक बार मैं हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में पहुंचा तो मैंने देखा कि आप इस तरह खाना खा रहे थे जिस तरह गुलाम खाना खाता है। बहर हाल, हदीसों के मजमूए से फ़ुक़हा-ए-किराम ने जो बात निकाली है वह यह है कि खाने की बेहतर नशिस्त (बैठने का तरीक़ा) यह है कि आदमी या तो दो ज़ानूं बैठ कर खाए, इसलिये कि इसमें तवाज़ो भी ज़्यादा है, और खाने का एहतिराम भी है, और इस नशिस्त में ज़्यादा खाने का रास्ता बन्द करना भी है, इसलिये कि जब आदमी ख़ूब फैल

कर बैठेगा तो ज़्यादा खाया जायेगा, और हमारे बुज़ुर्गों ने फ़रमाया कि एक टांग उठा कर और एक टांग बिछा कर खाना भी इसी में दाख़िल है, और यह भी तावाज़ो वाली नशिस्त है, और इस तरह बैठ कर खाने में दुनिया का भी फ़ायदा और आख़िरत का भी फ़ायदा है।

चार ज़ानूं बैठ कर खाना भी जायज़ है

खाने के वक़्त चार ज़ानूं हो कर बैठना भी जायज़ है, ना जायज़ नहीं। इसमें कोई गुनाह नहीं, लेकिन यह नशिस्त तवाज़ो के इतने क़रीब नहीं जितनी पहली दो निशस्तें क़रीब हैं, इसलिये आदत तो इस बात की डालनी चाहिए कि आदमी दो ज़ानूं बैठ कर खाए, या एक टांग खड़ी करके खाए, चार ज़ानूं न बैठे, लेकिन अगर किसी से इस तरह नहीं बैठा जाता, या कोई शख़्स अपने आराम के लिए चार ज़ानूं बैठ कर खाना खाता है तो यह कोई गुनाह नहीं। यह जो लोगों में मश्हूर है कि चार ज़ानूं बैठ कर खाना ना जायज़ है यह ख़्याल दुरुस्त नहीं, ग़लत है। लेकिन अफ़ज़ल यह है कि दो ज़ानूं बैठ कर खाए, इसलिये कि इस नशिस्त में खाने की अज़्मत और अदब ज़्यादा है।

मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाना

मेज़ कुर्सी पर खाना भी कोई गुनाह और ना जायज़ नहीं, लेकिन ज़मीन पर बैठ कर खाने में सुन्नत की इत्तिबा का सवाब है, और सुन्नत से ज़्यादा क़रीब है। इसलिये जहां तक हो सके इन्सान को इस बात की कोशिश करनी चाहिए कि वह ज़मीन पर बैठ कर खाए, इसलिये कि जितना सुन्नत से ज़्यादा क़रीब होगा, उतनी ही बर्कत ज़्यादा होगी, और उतना ही सवाब ज़्यादा मिलेगा, उतने ही फ़ायदे ज़्यादा हासिल होंगे। बहर हाल, मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाना भी जायज़ है, गुनाह नहीं है।

ज़मीन पर बैठ कर खाना सुन्नत है

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दो वजह से ज़मीन

पर बैठ कर खाते थे, एक तो यह कि उस ज़माने में ज़िन्दगी सादा थी, मेज़ कुर्सी का रिवाज ही नहीं था, इसलिये नीचे बैठ कर खाते थे। दूसरी वजह यह है कि नीचे बैठ कर खाने में तवाज़ो ज़्यादा है, और खाने का अदब भी ज़्यादा है। आप इसका तजुर्बा करके देख लीजिए कि कुर्सी पर बैठ कर खाने में दिल की कैफ़ियत और होगी, और ज़मीन पर बैठ कर खाने की कैफ़ियत और होगी, दोनों में ज़मीन और आसमान का फ़र्क होगा। इसलिये कि ज़मीन पर बैठ कर खाने की सूरत में तबीयत के अन्दर तवाज़ो ज़्यादा होगी, आजज़ी होगी, बन्दगी होगी, और मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाने की सूरत में ये बातें पैदा नहीं होतीं, इसलिये जहां तक हो सके इस बात की कोशिश करनी चाहिए कि आदमी ज़मीन पर बैठ कर खाए, लेकिन अगर कहीं मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाने का मौका आ जाए तो इस तरह खाने में कोई हरज और गुनाह भी नहीं है, इसलिये इस पर इतनी सख़्ती करना भी ठीक नहीं, जैसा कि बाज़ लोग मेज कुर्सी पर बैठ कर खाने को हराम और ना जायज़ ही समझते हैं, और इस पर बहुत ज़्याद रोक टोक करते हैं। यह अमल भी दुरुस्त नहीं।

शर्त यह है कि इस सुन्नत का मज़ाक़ न उड़ाया जाए

और जो मैंने कहा कि ज़मीन पर बैठ कर खाना सुन्नत से ज़्यादा करीब है और ज़्यादा अफ़ज़ल है, और ज़्यादा सवाब का सबब है, यह भी उस वक़्त है, जब इस सुन्नत को "अल्लाह अपनी पनाह में रखे" मज़ाक न बनाया जाए, इसलिये अगर किसी जगह पर इस बात का अन्देशा हो कि अगर नीचे ज़मीन पर बैठ कर खाना खाया गया तो लोग इस सुन्नत का मज़ाक़ उड़ायेंगे, तो ऐसी जगह पर ज़मीन पर खाने पर ज़िद करना भी दुरुस्त नहीं।

हज़रत वालिद साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि ने एक दिन सबक़ में हमें एक वाकिआ सुनाया कि एक दिन मैं और मेरे कुछ साथी देवबन्द से दिल्ली गये, जब दिल्ली पहुंचे तो वहां खाना खाने की ज़रूरत पेश

आई, चूंकि कोई और जगह खाने की नहीं थी, इसलिये एक होटल में खाने के लिए चले गये, अब ज़ाहिर है कि होटल में मेज़ कुर्सी पर खाने का इन्तिज़ाम होता है। इसलिये हमारे साथियों ने कहा कि हम तो कुर्सी पर बैठ कर नहीं खायेंगे। इसलिये कि ज़मीन पर बैठ कर खाना सुन्नत है, चुनांचे उन्हों ने यह चाहा कि होटल के अन्दर ज़मीन पर अपना रूमाल बिछा कर वहां बैरे से खाना मंगवायें, हज़रत वालिद साहिब फ़रमाते हैं कि मैंने उनको मना किया कि ऐसा न करें बल्कि मेज़ कुर्सी ही पर बैठ कर खाना खा लें। उन्हों ने कहा कि हम मेज़ कुर्सी पर क्यों खायें? जब ज़मीन पर बैठ कर खाना सुन्नत के ज़्यादा क़रीब है। तो फिर ज़मीन पर बैठ कर खाने से क्यों डरें, और क्यों शरमायें। हज़रत वालिद साहिब ने फ़रमाया कि शर्माने और डरने की बात नहीं, बात असल में यह है कि जब तुम लोग यहां इस तरह ज़मीन पर अपना रूमाल बिछा कर बैठोगे तो लोगों के सामने इस सुन्नत का तुम मज़ाक़ बनाओगे, और लोग इस सुन्नत की तौहीन के करने वाले होंगे, और सुन्नत की तौहीन का जुर्म करना सिर्फ़ गुनाह ही नहीं बल्कि कभी कभी इन्सान को कुफ़्र तक पहुंचा देता है। अल्लाह तआला बचाए।

एक सबक़ भरा वाक़िआ

फिर हज़रत वालिद साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि ने उनसे फ़रमाया कि मैं तुमको एक क़िस्सा सुनाता हूं, एक बहुत बड़े मुहद्दिस और बुज़ुर्ग गुज़रे हैं। जो "सुलैमान आमश" के नाम से मश्हूर हैं, और इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अलैहि के भी उस्ताद हैं। तमाम हदीसों की किताबें उनकी रिवायतों से भरी हुई हैं, अर्बी ज़बान में "आमश" चौंधे को कहा जाता है। जिसकी आंखों में चुन्धियाहट हो, जिसमें पल्कें गिर जाती हैं और रोशनी की वजह से उसकी आंखें ख़ैरा चौंधी हो जाती हैं। चूंकि उनकी आंखें चुन्धियाई हुई थीं इस

वजह से "आमश" के लक़ब से मश्हूर थे। उनके पास एक शागिर्द आ गये, वह शागिर्द "आरज" यानी लंगड़े थे, पांव से माज़ूर थे, शागिर्द भी ऐसे थे जो हर वक़्त उस्ताद से चिमटे रहने वाले थे। जैसे बाज़ शागिर्दों की आ़दत होती है कि हर वक़्त उस्ताद से चिम्टे रहते हैं। जहां उस्ताद जा रहे हैं वहां शागिर्द भी साथ साथ जा रहे हैं। यह भी ऐसे थे। चुनांचे इमाम आमश रह्मतुल्लाहि अ़लैहि बाज़ार जाते तो यह इमाम "आरज" शागिर्द भी साथ हो जाते, बाज़ार में लोग उन पर फ़िक़्रे कस्ते कि देखो उस्ताद "चौंधा" है और शागिर्द "लंगड़ा" है। चुनांचे इमाम आमश रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने अपने शागिर्द से फ़रमाया कि जब हम बाज़ार जाया करें तो तुम हमारे साथ मत जाया करो, शागिर्द ने कहा क्यों? मैं आपका साथ क्यों छोडूं? इमाम आमश रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि जब हम बाज़ार जाते हैं तो लोग हमारी मज़ाक़ उड़ाते हैं कि उस्ताद चौंधा है और शागिर्द लंगड़ा है। शागिर्द ने कहा:

"مالنا نوجرو یاثمون"

यानी हज़रत जो लोग मज़ाक़ उड़ाते हैं, उनको मज़ाक़ उड़ाने दें। इसलिये कि उस मज़ाक़ उड़ाने के नतीजे में हमें सवाब मिलता है, और उनको गुनाह होता है। इसमें हमारा तो कोई नुक़्सान नहीं बल्कि हमारा तो फ़ायदा है। हज़रत आमश रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने जवाब में फ़रमाया कि:

"نسلم ویسلمون خیر من ان نوجر ویاثمون"

अरे भाई, वे भी गुनाह से बच जायें और हम भी गुनाह से बच जायें, यह इसके मुक़ाबले में बेहतर है कि हमें सवाब मिले, और उनको गुनाह हो। मेरा साथ जाना कोई फ़र्ज़ व वाजिब तो है नहीं, और न जाने में कोई नुक़्सान तो है नहीं, लेकिन फ़ायदा यह है कि लोग इस से बच जायेंगे। इसलिये हमारे मुसलमान भाईयों को गुनाह हो, इस से बेहतर यह सूरत है कि न उनको गुनाह हो और न हमें

गुनाह हो। इसलिये आइन्दा मेरे साथ बाज़ार मत जाया करो।

उस वक़्त मज़ाक़ की परवाह न करे

लेकिन यह बात याद रखो, अगर कोई गुनाह का काम है, तो फिर चाहे कोई मज़ाक उड़ाये, या हंसी उड़ाये, उसकी परवाह नहीं करनी चाहिए। इसलिये कि लोगों के मज़ाक उड़ाने की वजह से गुनाह का काम करना जायज़ नहीं। लोगों के मज़ाक उड़ाने की वजह से कोई फ़र्ज़ या वाजिब काम छोड़ना जायज़ नहीं, लेकिन अगर एक तरफ़ जायज़ और मुबाह काम है, और दूसरी तरफ़ बेहतर और अफ़्ज़ल काम है, अब अगर लोगों को गुनाह से बचाने के लिए अफ़्ज़ल काम छोड़ दो और उसके मुक़ाबले में जो जायज़ काम है, उसको इख़्तियार कर लो तो उसमें कोई हरज नहीं, ऐसा करना दुरुस्त है।

बिना ज़रूरत मेज़ कुर्सी पर न खाए

चुनांचे एक बार हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि को मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाना खाने की ज़रूरत पेश आ गई, तो हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने उस वक़्त फ़रमाया कि वैसे मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाना ना जायज़ तो नहीं है, लेकिन इसमें थोड़ा सा तशब्बोह का शुबह है, चूंकि अंग्रेज़ों का चलाया हुआ तरीक़ा है इस तरह खाने में उनके साथ मुशाबहत न हो जाए, इसलिये जब आप कुर्सी पर बैठे तो पांव उठा कर बैठ गये, पांव लटकाए नहीं, और फ़रमाया कि अंग्रेज़ों के साथ मुशबहत पैदा होने का जो शुबह था, वह इस तरह बैठने से ख़त्म हो गया। इसलिये कि वे लोग पांव लटका कर खाते हैं, मैंने पांव ऊपर कर लिए हैं।

बहर हाल, मेज़ कुर्सी पर खाना खाना ना जायज़ और गुनाह नहीं, लेकिन इतनी बात ज़रूर है कि आदमी जितना सुन्नत के क़रीब होगा, उतनी ही बर्कत ज़्यादा होगी, उतना ही अज्र ज़्यादा मिलेगा।

इसलिये बिना वजह और बिना ज़रूरत के मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाने को अपनी आ़दत बना लेना अच्छा नहीं, बेहतर यह है कि ज़मीन पर बैठ कर खाने का एहतिमाम करे, लेकिन जहां कहीं ज़रूरत हो वहां मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खा सकता है, लेकिन इस बात का एहतिमाम करे कि पीछे टेक लगा कर न खाए, बल्कि आगे की तरफ़ झुक कर खाए, इसलिये कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने टेक लगा कर खाने को घमंडियों का तरीक़ा क़रार दिया है, यह तरीक़ा दुरुस्त नहीं।

चार पाई पर खाना

इसी तरह चार पाई पर बैठ कर खाना भी जायज़ है। बल्कि कुर्सी पर खाने के मुक़ाबले में चार पाई पर खाना ज़्यादा बेहतर है, इसलिये कि वह तरीक़ा जिसमें खाने वाला और खाने की सतह बराबर हो, उस से बेहतर है जिस में खाना ऊपर हो और खाने वाला नीचे हो। लेकिन सब से बेहतर यह है कि ज़मीन पर बैठ कर खाया जाए, इसमें सवाब भी ज़्यादा है, तवाज़ो भी इस में ज़्यादा है और नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत से भी ज़्यादा क़रीब है, अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से हमें सुन्नतों से ज़्यादा क़रीब करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

खाने के वक़्त बातें करना

एक ग़लत बात लोगों में यह मशहूर है कि खाना खाते वक़्त बातें करना जायज़ नहीं, यह भी बे असल बात है, शरीअ़त में इसकी कोई असल नहीं, खाना खाने के दौरान ज़रूरत की बात की जा सकती है, और हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से साबित भी है। लेकिन हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि इस बात का एहतिमाम करना चाहिए कि खाने के वक़्त जो बातें की जाएं वे हलकी फुलकी हों, ज़्यादा सोच विचार और ज़्यादा तवज्जोह की

बातें खाने के वक़्त नहीं करनी चाहिएं, इसलिये कि खाने का भी हक़ है। वह हक़ यह है कि खाने की तरफ़ मुतवज्जह होकर खाओ। इसलिये ऐसी बातें करना जिनमें इन्सान मशगूल हो जाए, और खाने की तरफ़ तवज्जोह न रहे, ऐसी बातें करना दुरुस्त नहीं। दिल्लगी और हंसी मज़ाक की हलकी फुलकी बातें कर सकते हैं। लेकिन यह जो मशहूर है कि आदमी खाने के वक़्त बिल्कुल चुप रहे, कोई बात न करे, यह दुरुस्त नहीं।

खाने के बाद हाथ पोंछ लेना जायज़ है

"عن ابن عباس رضی اللہ عنہما قال:قال رسو ل اللہ صلی اللہ علیہ وسلم: اذا اکل احدکم طعاما فلا یمسح اصابعہ حتی یلعقہا اویلعقہا"

(بخاری شریف)

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु रिवायत करते हैं कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि जब तुम में से कोई शख़्स खाना खा चुके तो अपनी उंगलियों को साफ़ न करे, जब तक कि खुद उन उंगलियों को चाट न ले, या दूसरे को न चटवा दे।

उलमा-ए-किराम ने फरमाया कि इस हदीस से दो मस्अले निकलते हैं, और दो अदब इस हदीस में बयान किए गए हैं। पहला मस्अला इस से यह निकलता है कि खाना खाने के बाद जिस तरह हाथ धोना जायज़, बल्कि मुस्तहब और सुन्नत है, इसी तरह उन हाथों को किसी चीज से पोंछ लेना भी जायज़ है। लेकिन अफ़ज़ल तो यह है कि हाथों को पानी से धो लिया जाए, हां अगर पानी मौजूद नहीं है या पानी इस्तेमाल करने में कोई तक्लीफ और दुश्वारी है, तो इस सूरत में किसी कागज या कपड़े से पोंछ लेना भी जायज है, जैसा कि आज कल टीशू पेपर इसी मक्सद के लिए ईजाद हो गये हैं, उनसे हाथ पोंछ लेना भी जायज़ है।

खाने के बाद उंगलियां चाट लेना सुन्नत है

दूसरा मस्अला जो इस हदीस के बयान का असल मक़्सूद है। वह यह कि हाथों को धोने और पोंछने से पहले उंगलियों को चाट लेना चाहिए, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह मामूल था, और आपकी यह सुन्नत थी कि खाने के जो ज़र्रात उंगलियों पर लगे रह जाते आप उनको चाट लेते थे, और इसकी हिक्मत हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक दूसरी हदीस में यह बयान फ़रमाई कि तुम्हें नहीं मालूम कि खाने के कौन से हिस्से में बर्कत है। यानी अल्लाह तआला की तरफ़ से खाने के इस मख़्सूस हिस्से में कोई बर्कत का पहलू हो सकता है जो दूसरे हिस्सों में नहीं है। शायद बर्कत उसी हिस्से में हो जो तुम्हारी उंगलियों पर लगा रह गया है, इसलिये इस हिस्से को भी ज़ाया न करो, बल्कि उसको भी खा लो, ताकि उस बर्कत से महरूम न रहो।

बर्कत क्या चीज़ है?

यह बर्कत क्या चीज़ है? आजकी दुनिया में जो माद्दा परस्ती में घिरी हुई है, सुबह से लेकर शाम तक माद्दा ही चक्कर काटता नज़र आता है और माद्दे के पीछे माल व दौलत और सामान व अस्बाब के पीछे झांकने की सलाहियत ही ख़त्म हो गयी है। इसलिये आज कल बर्कत का मतलब समझ में नहीं आता कि यह बर्कत क्या चीज़ है? बर्कत एक ऐसा फैला हुआ मफ़्हूम है, जिसमें दुनिया व आख़िरत की तमाम ख़ैर व कामयाबी सब शामिल हो जाती है। यह अल्लाह तआला की एक अ़ता होती है जिसका आपने अपनी ज़िन्दगी में कितनी ही बार मुशाहदा किया होगा। वह यह कि कभी कभी इन्सान किसी चीज़ के बे–शुमार अस्बाब जमा कर लेता है मगर उनसे फ़ायदा नहीं होता, जैसे अपने घर के अन्दर आराम व राहत के तमाम अस्बाब जमा कर लिए, आला से आला फ़र्नीचर से घर को सजा दिया, बेहतरीन बैड लगा लिए, ख़ादिम और नौकर चाकर सब जमा कर लिए, सजावट

का सारा सामाना जमा कर लिया। लेकिन इसके बावजूद रात को नींद नहीं आती, सारी रात बिस्तर पर करवटें बदलते रहे, मालूम हुआ कि साज़ व सामान में बर्कत नहीं। और उस सामान से जो फ़ायदा हासिल होना चाहिए था वह हासिल नहीं हुआ। अब बताओ कि क्या यह साज़ व सामान अपनी ज़ात में ख़ुद मक़्सूद है कि उसको देखते रहो, और ख़ुश होते रहो? अरे यह सामान तो इसलिये है कि इसके ज़रिये राहत मिले, आराम मिले, सुकून हासिल हो। याद रखो! यह साज़ व सामान सुकून व राहत का ज़रिया तो है, मगर जिस चीज़ का नाम "राहत और सुकून" है वह ख़ालिस अल्लाह तआला की अ़ता है, इसलिये जब अल्लाह तआला अ़ता फ़रमायेंगे तब "राहत व आराम" हासिल होगा। वर्ना दुनिया का कितना भी अस्बाब व सामान जमा कर लो, मगर रहात और आराम नहीं मिलेगा।

अस्बाब में राहत नहीं

आज हर शख़्स अपने अपने गरेबान में मुंह डाल कर देख ले कि आज से तीस चालीस साल पहले हर शख़्स के पास कैसा साज़ व सामान था, और आज कितना है, और कैसा है? जायज़ा लेने से यह नज़र आयेगा कि ज़्यादा तर लोग वे हैं जिनकी आर्थिक हालत में तरक़्क़ी हुई है, उनके घर के साज़ व सामान में इज़ाफ़ा हुआ है। फ़र्नीचर पहले से अच्छा है, घर पहले से अच्छा बन गया है, आराम देह चीज़ें पहले से ज़्यादा हासिल हो गयीं, लेकिन यह देखो कि क्या सुकून भी हासिल हुआ? क्या राहत व आराम मिला? अगर सुकून और आराम नहीं मिला तो इसका मतलब यह है कि उस सामान में अल्लाह तआला की तरफ़ से बर्कत हासिल नहीं हुई। यह जो कहा जाता है कि फ़लां चीज़ में बर्कत है, इसका मतलब यह है कि उस चीज़ के इस्तेमाल से जो फ़ायदा होना चाहिए था, वह हासिल हो रहा है। और बे बर्कती यह है कि उस चीज़ के इस्तेमाल के बावजूद राहत और आराम हासिल नहीं हो रहा है।

राहत अल्लाह तआला की अता है

याद रखो, राहत, आराम, सुकून, ये चीजें बाज़ार से पैसों के ज़रिये नहीं ख़रीदी जा सकतीं, यह ख़ालिस अल्लाह तआला की अता है, वही अता फरमाते हैं, इसी का नाम बर्कत है। जिन लोगों के पैसों में बर्कत होती है, गिन्ती के ऐतबार से तुम्हारे मुकाबले में उनके पास शायद पैसे कम हों, लेकिन पैसों का जो फायदा है, यानी राहत व आराम, वह अल्लाह तआला ने उनको दे रखा है।

जैसे एक दौलत वाला इन्सान है, उसके पास दुनिया का सारा साज़ व सामान जमा है, कारख़ाने खड़े हैं, कारें हैं, फ़र्नीचर है, नौकर हैं। जब खाना लगाया जाता है तो दस्तरख़्वान पर आला से आला खाने मौजूद हैं, लेकिन पेट ख़राब है, भूख नहीं लगती, डा. ने मना किया है कि फलां चीज नहीं खा सकते, फलां चीज़ नहीं खा सकते। अब नेमतों के मौजूद होने के बावजूद उनसे फायदा हासिल नहीं हो रहा है। इसी का नाम बे–बर्कती है।

दूसरी तरफ एक मज़दूर ने आठ घन्टे मेहनत करके सौ रुपये कमाए, और फिर होटल से दाल रोटी या सब्जी ख़रीदी, और भरपूर भूख के बाद ख़ूब पेट भर के खाया, खाने की पूरी लज़्ज़त हासिल की, और जब रात को अपनी टूटी फूटी चार पाई पर सोया तो आठ घन्टे की भरपूर नींद लेकर उठा, जिस से मालूम हुआ कि खाने की लज़्ज़त उस मज़दूर को हासिल हुई, नींद की लज़्ज़त भी उसी को हासिल हुई। लेकिन इतनी बात है कि दौलत वाले जैसी टीप टाप उसके पास नहीं है। यह है बर्कत कि अल्लाह तआला ने थोड़ी सी चीज़ में बर्कत डाल दी, और जिन चीज़ों से जो फायदा हासिल होना था वह उन से हासिल कर लिया।

खाने में बर्कत का मतलब

देखिए: जो खाना आप खा रहे हैं, यह खना अपने आप में मक्सूद नहीं, बल्कि खाने का असल मक्सद यह है कि उसके ज़रिये

कुव्वत हासिल हो, जिस्म को ताक़त मिले, उसके ज़रिये लज़्ज़त और राहत हासिल हो। लेकिन खाने के ज़रिये इन तमाम चीज़ों का हासिल होना, यह महज़ अल्लाह तआला की अता है। इस बात को हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इस हदीस में बयान फ़रमा रहे हैं कि तुम्हें क्या मालूम कि खाने के किस हिस्से में अल्लाह तआला ने बर्कत रखी है, हो सकता है कि जो खाना तुम खा चुके हो, उसमें बर्कत न हो और उंगलियों पर खाने का जो हिस्सा लगा हुआ था उसमें अल्लाह तआला ने बर्कत रखी थी। तुमने उसको छोड़ दिया, जिसके नतीजे में तुम बर्कत से महरूम रह गये। चुनांचे वह खाना तो तुम ने खा लिया, लेकिन वह खाना न तो बदन का हिस्सा बना, बल्कि उस खाने ने बद हज़्मी पैदा कर दी, और सेहत को नुक़्सान पहुंचा दिया। और उस से जो कुव्वत हासिल होनी थी वह हासिल न हुई।

खाने के बातिन पर असरात

यह तो मैं ज़ाहिरी सतह की बातें कर रहा हूं, वरना अल्लाह तआला जिन लोगों को "दीदा–ए–बीना" यानी दिल की आंख अता फ़रमाते हैं, वे इस से भी आगे पहुंचते हैं, वह यह कि खाने खाने में फ़र्क़ है। यह खाना इन्सान की फ़िक्र पर, उसकी सोच पर, उसके जज़्बात और ख़्यालात पर असर डालता है, कुछ खाने वे होते हैं जो इन्सान के बातिनी हालात में अंधेरा और तारीकी पैदा करते हैं। जिन की वजह से बुरे ख़्यालात और बुरे जज़्बात दिल में पैदा होते हैं। गुनाहों का शौक़ और ख़राब तक़ाज़े और जज़्बे दिल में पैदा होते हैं। और कुछ खाने ऐसी बर्कत वाले होते हैं कि जिनकी वजह से बातिन को सुरूर हासिल होता है, रूह को ग़िज़ा मिलती है। अच्छे इरादे और अच्छे ख़्यालात दिल में आते हैं। जिनकी वजह से इन्सानों को नेकियों की तरग़ीब होती है, नेकियों का तक़ाज़ा दिल में उभरता है। लेकिन चूंकि हमारी आंखें इस माद्दा परस्ती के दौर में अन्धी हो चुकी

हैं, हम लोग दिल के देखने की ताक़त खो चुके हैं, जिसकी वजह से खाने की अन्धेरे और नूरानियत का फ़र्क़ नहीं पता चलता। जिन लोगों को अल्लाह तआला दिल की आंख अता फ़रमाते हैं उन से पूछिए।

खाने के असरात का वाक़िआ

हज़रत मौलाना मुहम्मद याक़ूब साहिब नानौतवी रहमतुल्लाहि अलैहि जो दारुल उलूम देवबन्द के सदर मुदर्रिस (प्रिंसिपल) और हज़रत थानवी रह० के उस्ताद थे। ग़ालिबन उन्हीं का वाक़िआ है कि एक शख़्स ने एक बार हज़रते वाला की दावत की। आप वहां तश्रीफ़ ले गये, खाना शुरू किया, एक निवाला खाने के बाद मालूम हुआ कि जिस शख़्स ने दावत की है उसकी आमदनी हलाल नहीं है, उसकी वजह से यह खाना हलाल नहीं है, चुनांचे खाना छोड़कर खड़े हो गये, और वापस चले आए, लेकिन एक निवाला जो हलक़ में चला गया था। उसके बारे में फ़रमाते थे कि यह एक लुक़्मा जो मैंने हलक़ से नीचे उतार लिया था, उसकी ज़ुल्मत और तारीकी दो माह तक महसूस होती रही। वह इस तरह कि दो माह तक मेरे दिल में गुनाह करने के तक़ाज़े बार बार पैदा होते रहे। दिल में यह तक़ाज़ा होता कि फ़लां गुनाह कर लूं। फ़लां गुनाह कर लूं। अब बज़ाहिर तो इसमें कोई जोड़ नज़र नहीं आता कि एक लुक़्मा खा लेने में और गुनाह का तक़ाज़ा पैदा होने में क्या जोड़ है? लेकिन बात असल में यह है कि हमें इसलिये महसूस नहीं होता कि हमारा सीना अंधेरों के दाग़ों से भरा हुआ है। जैसे एक सफ़ेद कपड़े के ऊपर बे–शुमार काले दाग़ लगे हुए हों? उसके बाद एक दाग़ और लग जाये तो पता भी नहीं चलेगा कि कौनसा दाग़ नया है, लेकिन अगर कपड़ा सफ़ेद, साफ़ सुथरा हो, उस पर अगर एक छोटा सा भी दाग़ लग जाए तो दूर से नज़र आएगा कि दाग़ लगा हुआ है। बिल्कुल इसी तरह इन अल्लाह

वालों के दिल आईने की तरह साफ़ और सुथरे होते हैं। उन पर अगर एक दाग़ भी लग जाए तो वह दाग़ महसूस होता है, और उसकी अंधेरी और बेनूरी नज़र आती है। चुनांचे इन अल्लाह के बन्दे ने यह महसूस किया कि एक लुक़्मा खाने के बाद दिल में गुनाहों के तक़ाज़े पैदा होने लगे। इसलिये बाद में फ़रमाया कि हक़ीक़त में यह उस एक ख़राब लुक़्मे की अंधेरी थी। इसका नाम "बातिनी बर्कत" है, जब अल्लाह तआ़ला यह बातिनी बर्कत अ़ता फ़रमा देते हैं तो फिर उसके ज़रिये इन्सान के बातिन में तरक़्क़ी होती है, अख़्लाक़ और ख़्यालात दुरुस्त हो जाते हैं।

हम माद्दा परस्ती में फंसे हुए हैं

आज हम माद्दा परस्ती में और पैसों के चक्कर में फंस गये, साज़ व सामान और टीप टाप में फंस गये, जिसके नतीजे में हर काम की बातिनी रूह हमारी नज़रों से ओझल हो गयी, और ये बातें अजनबी और अचंभी मालूम होती हैं। इसलिये बर्कत का मतलब भी समझ में नहीं आता। कोई अगर हज़ार बार कहे कि फ़लां काम में बर्कत है, तो उसकी कोई अहमियत दिल में पैदा नहीं होती लेकिन अगर कोई शख़्स यह कहे कि यह खाना खाओगे तो एक हज़ार रुपये ज़्यादा मिलेंगे, तो अब तबीयत में उस खाने की तरफ़ रग़बत पैदा होगी कि हां, यह फ़ायदे का काम है, और अगर कोई कहे कि फ़लां तरीक़े से खाना खाओ तो उस से खाने में बर्कत होगी, तो उस तरीक़े की तरफ़ रग़बत नहीं होगी, इसलिये कि यह पता ही नहीं कि बर्कत क्या होती है, इस बर्कत का ज़ेहन में तसव्वुर ही नहीं है। हालांकि हुज़ूरे नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जगह जगह हदीसों में फ़रमा दिया कि इस अमल से बर्कत होगी और इस अमल से बर्कत ख़त्म हो जायेगी, बर्कत हासिल करने की कोशिश करो, बे-बर्कती से बचो। इसलिये यह बात याद रखो कि यह बर्कत उस वक़्त तक हासिल नहीं होगी जब तक हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम की सुन्नतों की पैरवी नहीं होगी, चुनांचे इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फरमा रहे हैं कि खाने के बाद उंगलियां चाट लो, इसलिये कि हो सकता है कि खाने के जो ज़र्रात उंगलियों में लगे हुए हैं, उनमें बर्कत हो।

क्या उंगलियां चाट लेना तहज़ीब और सलीक़े के ख़िलाफ़ है?

आज फ़ैशन परस्ती का ज़माना है। लोगों ने अपने लिए नए नए एटीकेट बना रखे हैं, चुनांचे अगर दस्तरख़्वान पर सब के साथ खाना खा रहे हैं, उस वक़्त अगर उंगलियों पर लगे हुए सालन को चाट लें, तो यह तहज़ीब व सलीक़े के ख़िलाफ़ है, यह तो बे-तहज़ीबी है, इसलिये इस काम को करते हुए शर्म आती है, अगर लोगों के सामने करेंगे तो लोग हंसेंगे, मज़ाक़ उड़ायेंगे और कहेंगे कि यह शख़्स ग़ैर मुहज़्ज़ब और बे-ढंगा है।

तहज़ीब और सलीक़ा सुन्नतों ही में है

लेकिन याद रखो! सारी तहज़ीब और सारा सलीक़ा व ढंग हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नतों ही में है, जिस चीज़ को आपने तहज़ीब और सलीक़ा क़रार दे दिया, वह है तहज़ीब। यह नहीं कि जिस चीज़ को फ़ैशन ने तहज़ीब क़रार दे दिया, वह तहज़ीब हो, इसलिये कि यह फ़ैशन तो रोज़ बदलते हैं। कल तक जो चीज़ बद् तहज़ीबी थी आज वह चीज़ तहज़ीब बन गयी।

खड़े होकर खाना बद् तहज़ीबी है

जैसे खड़े होकर खाना आज कल फ़ैशन बन गया है, एक हाथ में प्लेट पकड़ी है, दूसरे हाथ से खाना खा रहे हैं, उसी प्लेट में सालन भी है, उसी में रोटी भी है, उसी में सलाद भी है, और जिस वक़्त दावत में खाना शुरू होता है उस वक़्त छीना झपटी होती है, इसमें किसी को भी बद् तहज़ीबी नज़र नहीं आती? इसलिये कि फ़ैशन ने आंखें अन्धी कर दी हैं, इसके नतीजे में उसके अन्दर बद्

तहज़ीबी नज़र नहीं आती। चुनांचे जब तक खड़े होकर खाने का फ़ैशन और रिवाज नहीं चला था, उस वक़्त अगर कोई शख़्स खड़े होकर खाना खाता तो सारी दुनिया उसको यही कहती कि यह ग़ैर मुहज़्ज़ब और बड़ा ना पसन्दीदा तरीक़ा है, सही तरीक़ा तो यह है कि आदमी आराम से बैठ कर खाए।

फ़ैशन को बुनियाद मत बनाओ

इसलिये फ़ैशन की बुनियाद पर तो तहज़ीब और सलीक़ा व तमीज़ रोज़ बदलती है, और बदलने वाली चीज़ का कोई भरोसा और ऐतबार नहीं, ऐतबार उस चीज़ का है जिसको मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सुन्नत क़रार दे दिया, और जिसके बारे में आपने बता दिया कि बर्कत इसमें है। अब अगर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इत्तिबा की नियत से यह काम कर लोगे तो आख़िरत में भी अज्र व सवाब और दुनिया में भी बर्कत हासिल होगी, और अगर –अल्लाह की पनाह– बद् तहज़ीब समझ कर उसको छोड़ दोगे तो फिर तुम उसकी बर्कतों से भी महरूम हो जाओगे, और फिर ये बेचैनियां तुम्हारा मुक़द्दर होगी, और दिन रात तुम्हारे दिल में अंधेरे और तारीकियां पैदा होती रहेंगी। बहर हाल, बात लम्बी हो गई, इस हदीस में आपने इस बात की ताकीद फ़रमाई कि खाने के बाद अपनी उंगलियां चाट लिया करो, ताकि खाने की बर्कत हासिल हो जाए।

तीन उंगलियों से खाना सुन्नत है

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की आदत यह थी कि आप आम तौर पर तीन उंगलियों से खाना खाते थे, यानी अंगूठा, शहादत की उंगली और बीच की उंगली, इन तीनों को मिला कर निवाला लेते थे। उलमा–ए–किराम ने तीन उंगलियों से खाने की एक हिक्मत तो यह लिखी है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम का ज़माना सादा गिज़ाओं का ज़माना था, आज कल की तरह बहुत लम्बे चौड़े खाने नहीं होते थे, और दूसरी हिक्मत यह लिखी है कि जब तीन उंगलियों से खायेंगे तो निवाला छोटा बनेगा, और छोटे निवाले में एक फ़ायदा तिब्बी तौर यह है कि निवाला जितना छोटा होगा, उतना ही उसके हज़म होने में आसानी होगी, इसलिये कि बड़ा निवाला पूरी तरह चबेगा नहीं, और फिर मेदे में जाकर नुक़सान पहुंचायेगा। दूसरा फ़ायदा यह है कि अगर बड़ा निवाला लिया जायेगा तो उस से इन्सान की हिर्स का इज़्हार होता है, और छोटे निवाले में क़नाअ़त का इज़्हार होता है, इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तीन उंगलियों से तनावुल फ़रमाते थे, अगरचे कभी कभार चार उंगलियों से भी खाया करते थे, बल्कि एक रिवायत में एक वाक़िआ आया है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पांच उंगलियों से खाना तनावुल फ़रमाया। जिसके ज़रिये आपने यह बता दिया कि तीन के बजाए चार और पांच उंगलियों से खाना भी जायज़ है। लेकिन आ़म तौर पर आपका मामूल और आपकी सुन्नत तीन उंगलियों से खाने की थी। (मुस्लिम शरीफ़)

उंगलियां चाटने में तरतीब

सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम का इश्क़ देखिए कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की एक एक अदा को हमारे लिए इस तरह महफ़ूज़ करके छोड़ गये हैं कि हमारे लिए उसकी नक़ल उतारना और उसकी इत्तिबा आसान हो जाए। चुनांचे सहाबा-ए-किराम ने हमें यह बता दिया कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम किस तरतीब से ये तीन उंगलियां चाटा करते थे। फ़रमाते हैं कि इन उंगलियों के चाटने की तरतीब यह होती थी कि पहले बीच की उंगली, फिर शहादत की उंगली और फिर अंगूठा। जब सहाबा-ए-किराम आपस में मिल कर बैठते तो आपकी सुन्नतों का

तज़्किरा करते, और एक दूसरे को तरग़ीब देते कि हमें भी इसी तरह करना चाहिए। अब अगर कोई उंगलियां न चाटे तो कोई गुनाह नहीं होगा मगर सुन्नत की बर्कत से महरूम हो जयेगा।

कब तक हंसे जाने से डरोगे?

जहां तक इस बात का ताल्लुक़ है कि अगर हम लोगों के सामने उंगलियां चाटेंगे तो लोग उस पर हंसी मज़ाक़ उड़ायेंगे, और हमें ग़ैर मुहज़्ज़ब और बे सलीक़ा कहेंगे। तो याद रखिए जब तक एक बार बहदुरी के साथ, कमर मज़्बूत करके इस बात का तहिय्या नहीं कर लोगे कि दुनिया के लोग जो कहें कहा करें, हमें तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत महबूब है, हमें तो इस पर अमल करना है, जब तक यह फ़ैसला नहीं करोगे, याद रखो यह दुनिया तुम्हारी हंसी मज़ाक़ उड़ाती रहेगी, पश्चिमी क़ौमों की नक़्क़ाली करते करते हमारा यह हाल हो गया है कि सर से लेकर पांव तक अपना सरापा उनके सांचे में ढाल लिया, लिबास पहनावा उन जैसा, रहन सहन उन जैसा, सूरत शक्ल उन जैसी, तरीक़े उन जैसे, तहज़ीब उनकी इख़्तियार कर ली, हर चीज़ में उनकी नक़्क़ाली करके देख ली। अब यह बताओ कि क्या उनकी नज़र में तुम्हारी इज़्ज़त हो गई? आज भी वह क़ौम तुम्हें ज़िल्लत की निगाह से देखती है, तुम्हें ज़लील समझती है, रोज़ाना तुम्हारी पिटाई होती है, तुम्हारे ऊपर तमांचे लगते हैं, तुम्हें हक़ीर समझा जाता है। यह सब इसलिये हो रहा है कि तुमने उनको ख़ुश करने के लिए नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के तरीक़े छोड़ कर उनके तरीक़े इख़्तियार कर लिए हैं, चुनांचे वे जानते हैं कि ये लोग हमारे मुक़ल्लिद और हमारे नक़्क़ाल हैं। अब तुम उनके सामने कितने ही बन संवर कर चले जाओ, लेकिन तुम दक़ियानूस और फन्डा मेन्टलिस्ट ही रहोगे, और तुम्हारे ऊपर यह ताना लगेगा कि ये बुनियाद परस्त और ग़ैर मुहज़्ज़ब हैं, रज्अत पसन्द हैं।

यह ताने अंबिया की विरासत है

जब तक तुम एक बार कमर मज़्बूत करके यह अ़हद नहीं कर लोगे कि ये लोग ताने देते हैं तो दिया करें, क्योंकि ये ताने तो हक़ के रास्ते के राही का ज़ेवर हैं, जब इन्सान हक़ के रास्ते पर चलता है तो उसको यही ताने मिला करते हैं। अरे हम क्या हैं, हमारे पैग़म्बरों को यही ताने मिले, चुनांचे कुरआने करीम में है कि:

"مَا نَرٰكَ اتَّبَعَكَ اِلَّا الَّذِيْنَ هُمْ اَرَاذِلُنَا بَادِيَ الرَّاْيِ" (سورۃ ھود:۲۷)

ये कुफ़्फ़ार पैग़म्बरों से कहा करते थे कि हम तो देखते हैं कि जो तुम्हारी इत्तिबा कर रहे हैं, ये बड़े ज़लील किस्म के लोग हैं, हक़ीर और बे सलीक़ा और ग़ैर मुहज़्ज़ब हैं। बहर हाल, अगर तुम मुसलमान हो, पैग़म्बरों के उम्मती और उनके पैरोकार हो तो फिर जहां और चीज़ें उनकी विरासत में तुम्हें हासिल हुई हैं, ये ताने भी उनकी विरासत हैं। आगे बढ़ कर इन तानों को गले लगाओ, और अपने लिए इसको फ़ख़्र का सबब समझो कि अल्लाह का शुक्र है, वही ताने जो अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम को दिए गए थे, हमें भी दिए जा रहे हैं। याद रखो, जब तक यह जज़्बा पैदा नहीं होगा, उस वक़्त तक ये सारी कुव्वतें तुम्हारा मज़ाक़ उड़ाती रहेंगी। असद मुल्तानी मरहूम एक शायर गुज़रे हैं, उन्हों ने बड़ा अच्छा शेर कहा है कि:

हंसे जाने से जब तक डरोगे
ज़माना तुम पर हंसता ही रहेगा

देख लो, ज़माना हंस रहा है, खुदा के लिए यह परवाह दिल से निकाल दो कि दुनिया क्या कहेगी, बल्कि यह देखो कि मुहम्मद रसूलुल्लाह की सुन्नत क्या है? उस पर अमल करके देखो, इन्शा अल्लाह, दुनिया से इज़्ज़त कराओगे, आख़िर कार इज़्ज़त तुम्हारी होगी, क्योंकि इज़्ज़त सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत की पैरवी में है, किसी और की पैरवी में नहीं।

सुन्नत की पैरवी पर अज़ीम ख़ुश ख़बरी

सुन्नत की पैरवी पर अल्लाह तआ़ला ने कुरआने करीम में इतनी अज़ीम ख़ुश ख़बरी दी है कि उसके बराबर कोई ख़ुश ख़बरी हो ही नहीं सकती, कि:

"قُلْ اِنْ كُنْتُمْ تُحِبُّوْنَ اللّٰهَ فَاتَّبِعُوْنِىْ يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ"

यानी ऐ नबी सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम आप लोगों से कह दीजिए कि अगर तुम्हें अल्लाह से मुहब्बत है, तो मेरी इत्तिबा करो, मेरे पीछे चलो, और जब मेरे पीछे चलोगे और मेरी इत्तिबा करोगे तो अल्लाह तआ़ला तुम्हें महबूब बना लेगा, इसका मतलब यह है कि अरे तुम क्या अल्लाह तआ़ला से मुहब्बत करोगे, तुम्हारी क्या हक़ीक़त तुम्हारी क्या मजाल कि तुम अल्लाह तआ़ला से मुहब्बत कर सको। अल्लाह तआ़ला तुम से मुहब्बत करने लगेंगे, शर्त यह है कि तुम मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नतों की इत्तिबा करने लगो। हमारे हज़रत फ़रमाया करते थे कि यह इस बात की ख़ुश ख़बरी है कि जिस अ़मल को सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इत्तिबा की ग़र्ज़ से इख़्तियार किया जाए, तो फिर जिस वक़्त इन्सान वह अ़मल कर रहा है, उस वक़्त वह अल्लाह तआ़ला को महबूब है, देखो सुन्नत यह है कि जब आदमी बैतुल ख़ला (लैट्रीन) में जाए, तो जाने से पहले यह दुआ़ पढ़े:

"اَللّٰهُمَّ اِنِّىْ اَعُوْذُبِكَ مِنَ الْخُبُثِ وَالْخَبَائِثِ"

अल्लाह तआ़ला अपना महबूब बनालेंगे

इसी तरह जिस वक़्त तुम इस नियत से उंगली चाट रहे हो कि यह सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत है, उस वक़्त तुम अल्लाह के महबूब हो, अल्लाह तआ़ला तुम से मुहब्बत कर रहे हैं, अरे तुम मख़्लूक़ की तरफ़ क्यों देखते हो कि वह मुहब्बत कर रहे हैं या नहीं? वह अच्छा समझ रहे हैं या नहीं? इस मख़्लूक़ का ख़ालिक़ और मालिक जब तुम से मुहब्बत कर रहा है, और वह

यह कह रहा है कि यह काम बहुत अच्छा है। फिर तुम्हें क्या परवाह कि दूसरे पसन्द करें या न करें। इसलिये सुन्नतों के इन तरीक़ों को अपनी ज़िन्दगी में दाख़िल करें। इनको अपनायें, और इन तानों की परवाह न करें। अगर इस सुन्नत पर पहले से अ़मल नहीं है तो अब अ़मल शुरू कर दें। लोग कहते हैं कि आज कल ऐसा ज़माना आ गया है कि इस में दीन पर अ़मल करना बड़ा मुश्किल है। अरे भाई! हमने अपने ज़ेहन से मुश्किल बना रखा है, वर्ना बताइये कि इस उंगलियां चाटने की सुन्नत पर अ़मल करने में क्या दुशवारी है? कौन तुम्हारा हाथ रोक रहा है? तुम्हारे माल व दौलत में या राहत व आराम में इस सुन्नत पर अ़मल करने से कौनसा ख़लल आ रहा है? जब इस एक सुन्नत को इख़्तियार कर लिया तो अल्लाह तआ़ला की महबूबियत तुम्हें हासिल हो गई, और इस सुन्नत की बर्कतें हासिल हो गयीं, क्या मालूम कि अल्लाह तआ़ला एक सुन्नत के सिले में तुम्हें नवाज़ दें। अल्लाह तआ़ला हमें तमाम सुन्नतों पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

उंगलियां दूसरे को भी चटवाना जायज़ है

इस हदीस में एक इख़्तियार और दे दिया, फ़रमाया कि "औ युलअ़िक़ुहा" यानी अगर उंगलियां ख़ुद न चाटे तो किसी और को चटा दे, उ़लमा-ए-किराम ने लिखा है कि इसका मन्शा यह है कि कभी कभी ऐसी सूरत हो जाती है कि आदमी उंगलियां चाटने पर क़ादिर नहीं होता। ऐसी सूरत में किसी और को चटा दे। जैसे बच्चे को चटा दे, या बिल्ली को चटा दे, किसी परिन्दे को चटा दे। मक़सद यह है कि अल्लाह तआ़ला का रिज़्क़ ज़ाया न हो। अब अगर उसको जाकर धो डालोगे तो वह रिज़्क़ ज़ाया हो जायेगा, और मख़्लूक़ को चटा दो ताकि उसको भी बर्कत हासिल हो जाए।

खाने के बाद बर्तन चाटना

"عن جابر رضی اللہ عنہ ان رسو ل اللہ صلی اللہ علیہ وسلم امر بلعق الاصابع والصحفۃ، وقال: انکم لا تدرون فی ای طعامکم البرکۃ" (مسلم شریف)

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उंगलियां चाटने और प्याला चाटने का हुक्म दिया, और फ़रमाया कि तुम नहीं जानते कि तुम्हारे खाने के किस हिस्से में बर्कत है? इस हदीस में एक अदब और बयान फ़रमाया है। वह यह कि खाने के बाद उंगलियां भी चाटे और जिस बर्तन में खा रहा है उस बर्तन को भी चाट कर साफ़ कर ले, ताकि अल्लाह तआला के रिज़्क़ की ना क़द्री न हो। वैसे तो बर्तन में इतना ही सालन निकालना चाहिए जितना खा सकने की उम्मीद हो, ज़्यादा न निकाले, ताकि बाद में बचे नहीं, लेकिन अगर मान लें कि प्लेट में खाना ज़्यादा निकल आया और खाना बच गया, और अब खाने की गुन्जाइश बाक़ी न रही, ऐसे मौक़े पर बाज़ लोग यह समझते हैं कि प्लेट में जितना सालन निकाल लिया है, उस सब को खाकर ख़त्म करना ज़रूरी है। यहां तक कि बाज़ इसको फ़र्ज़ व वाजिब समझने लगे हैं चाहे बाद में हैज़ा ही क्यों न हो जाए। याद रखिए, शरीअत में यह हुक्म नहीं कि ज़रूर पूरा खाना खाओ, बल्कि शरीअत का असल तरीक़ा यह है कि अव्वल तो ज़्यादा खाना निकालो ही नहीं। लेकिन अगर खाना निकल आए तो उसको छोड़ देने की गुन्जाइश है। लेकिन उसको इस तरह छोड़ो कि वह छोड़ा हुआ खाना प्याले के एक तरफ़ हो, पूरे प्याले में फैला हुआ न हो, पूरा प्याला गन्दा और सना हुआ न हो, इसलिये इसका तरीक़ा यह है कि अपने सामने से खाकर उस हिस्से को साफ़ कर लो। ताकि आपका बचा हुआ खाना किसी और को दिया जाए तो उसको घिन न आए, उसको परेशानी न हो, इस्लाम की सही तालीम यह है।

वर्ना चमचे को चाट ले

कभी कभी आदमी हाथ से खाना नहीं खाता, बल्कि चमचों से खाना खाता है। उस वक़्त उंगलियों के चाटने की सुन्नत पर किस तरह अमल करे? इसलिये कि उंगलियों पर खाना लगा ही नहीं। तो बाज़ उलमा ने फ़रमाया कि अगर कोई चमचे से खा रहा है तो चमचे पर जो खाना लगा हुआ है उसको इस नियत से चाट ले कि नबी-ए- करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह फ़रमाया कि मालूम नहीं कि खाने के किस हिस्से में बर्कत है? अब खाना मेरी उंगलियों पर तो लगा नहीं है, मगर चमचों पर लगा हुआ है। उसको साफ़ कर ले तो उम्मीद है कि इन्शा अल्लाह इस सुन्नत की फ़ज़ीलत उसमें भी हासिल हो जायेगी।

गिरा हुआ लुक़्मा उठा कर खा लेना चाहिए

"وعن جابر رضى الله عنه ان رسول الله صلى الله عليه وسلم قال: اذا وقعت لقمة احدكم فليا خذها فليمط ماكان بها من اذى وليا كلها، ولا يدعها للشيطان، ولايمسح يده بالمنديل حتى يلعق اصابعه، فانه لا يدرى فى اى طعامه البركة" (مسلم شريف)

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि अगर खाने के दौरान किसी शख़्स का लुक़्मा गिर जाए तो उसको चाहिए कि वह उस लुक़्मे को उठा ले, अगर उस लुक़्मे पर कोई मिट्टी वग़ैरह लग गई हो तो उसको साफ़ कर ले और फिर उसको खा ले, और शैतान के लिए उसको न छोड़े। इस हदीस में यह अदब बता दिया कि कभी कभी खाना खाते वक़्त कोई लुक़्मा या कोई चीज़ गिर जाए तो उसको साफ़ करके खा लेनी चाहिए। कभी कभी इन्सान उसको उठा कर खाते हुए शर्माता है और झिझकता है, इसलिये आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ऐसा न करो, इसलिये कि यह अल्लाह तआला का रिज़्क़ है उसकी अता है, उसकी ना क़द्री

न करो, उसको उठा कर साफ़ कर लो, लेकिन अगर वह लुक्मा इस तरह गिर गया है कि बिल्कुल मुलव्वस या नापाक हो गया और गन्दा हो गया, और अब उसको साफ़ करके खाना मुम्किन नहीं है तो बात दूसरी है, मजबूरी है। लेकिन अगर उसको उठा कर साफ़ करके खाया जा सकता हो, उस वक़्त न छोड़े, इसलिये कि यह अल्लाह तआला का रिज़्क़ है, उसकी क़द्र और ताज़ीम वाजिब है, जब तक अल्लाह तआला के रिज़्क़ के छोटे हिस्सों की क़द्र और ताज़ीम नहीं करोगे उस वक़्त तक तुम्हें रिज़्क़ के छोटे हिस्सों की क़द्र और ताज़ीम नहीं करोगे, उस वक़्त तक तुम्हें रिज़्क़ की बर्कत हासिल नहीं होगी।

इसमें भी वही बात है कि गिरे हुए लुक्मे को उठा कर खाना आज कल की तहज़ीब और एटीकेट के ख़िलाफ़ है, इसलिये आदमी इस से शर्माता है और यह सोचता है कि अगर मैं इसको उठाऊंगा तो लोग कहेंगे कि यह बड़ा नदीदा है लेकिन इस पर एक वक़िआ सुन लीजिए।

हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ि० का वाक़िआ

हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ियल्लाहु अन्हु जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बड़े जाँनिसार सहाबी हैं, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के राज़दार, उनका लक़ब "साहिबे सिर्रे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम" मशहूर था। जिस वक़्त मुसलमानों ने ईरान में किस्रा की हुकूमत पर हमला किया, जो किस्रा उस वक़्त की बड़ी अज़ीम ताक़त और सुपर पावर था, और ईरान की तहज़ीब सारी दुनिया के अन्दर मशहूर थी, और उसकी धूम थी। इस लिये कि उस वक़्त दो ही तहज़ीबें थीं, एक रूमी और एक ईरानी। लेकिन ईरानी तहज़ीब अपनी नज़ाकत, अपनी सफ़ाई सुथराई में ज़्यादा मशहूर थी। बहर हाल, जब हमला किया तो किस्रा ने मुसलमानों को बात चीत की दावत दी कि आप लोग हमारे

साथ बात चीत करें। चुनांचे हज़रत हुज़ैफ़ा और हज़रत रबई बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु को बात चीत के लिये भेजा गया।

अपना लिबास नहीं छोड़ेंगे

हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान और हज़रत रबई बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हुमा जब बात चीत के लिए जाने लगे और किसरा के महल में दाख़िल होने लगे, तो उस वक़्त वे अपना वही सीधा सादा लिबास पहने हुए थे, चूंकि लम्बा सफ़र करके आए थे इसलिये हो सकता है कि वे कपड़े कुछ मैले भी हों, दरबार के दरवाज़े पर जो दरबान था उसने आपको अन्दर जाने से रोक दिया, उसने कहा कि तुम इतने बड़े बादशाह किसरा के दरबार में ऐसे लिबास में जा रहे हो? यह कह कर उसने एक जुब्बा दिया कि आप यह पहन कर जायें। हज़रत रबई बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु ने उस दरबान से कहा कि अगर किसरा के दरबार में जाने के लिए उसका दिया हुआ जुब्बा पहनना ज़रूरी है, तो फिर हमें उसके दरबार में जाने की ज़रूरत नहीं, अगर हम जायेंगे तो इसी लिबास में जायेंगे, और अगर उसको इस लिबास में मिलना मन्ज़ूर नहीं तो फिर हमें भी उस से मिलने का कोई शौक़ नहीं। इसलिये हम वापस जा रहे हैं।

तलवार देख ली, बाज़ू भी देख

उस दरबान ने अन्दर पैग़ाम भेजा कि ये अजीब क़िस्म के लोग आयें हैं, जो जुब्बा लेने को भी तैयार नहीं, उसी दौरान हज़रत रबई बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु अपनी तलवार के ऊपर लिपटी हुई कतरनों को दुरुस्त करने लगे, जो तलवार के टूटे हुए हिस्से पर लिपटी हुई थीं। उस दरबान ने तलवार देख कर कहा: ज़रा मुझे अपनी तलवार तो दिखाओ, आपने वह तलवार उसको दे दी, उसने तलवार देख कर कहा कि: क्या तुम इस तलवार से ईरान फ़तह करोगे? हज़रत रबई बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि अभी तक तो तलवार देखी है, तलवार चलाने वाला हाथ नहीं देखा।

उसने कहा कि अच्छा हाथ भी दिखा दो, हज़रत रबई बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि हाथ देखना चाहते हो तो ऐसा करो कि तुम्हारे पास तलवार का वार रोकने वाली जो सब से ज़्यादा मज़बूत ढाल हो वह मंगवा लो, और फिर मेरा हाथ देखो। चुनांचे वहां जो जब से ज़्यादा मज़बूत लोहे की ढाल थी, जिसके बारे में यह ख़्याल किया जाता था कि कोई तलवार उसको नहीं काट सकती, वह मंगवाई गयी। हज़रत रबई बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि कोई शख़्स इसको मेरे सामने लेकर खड़ा हो जाए, चुनांचे एक आदमी उस ढाल को लेकर खड़ा हो गया, तो हज़रत रबई बिन आमिर रजियल्लाहु अन्हु ने वह तलवार जिस पर कतरनें लिपटी हुई थीं, उसका एक वार जो किया तो उस ढाल के दो टुक्ड़े हो गये। सब लोग यह नज़ारा देख कर हैरान रह गये कि ख़ुदा जाने यह कैसी मख़्लूक़ आ गई है। चुनांचे दरबान ने अन्दर इत्तिला भेज दी कि यह ऐसी मख़्लूक़ है कि अपनी टूटी हुई तलवार से ढाल के दो टुक्ड़े कर दिए, फिर उनको अन्दर बुला लिया गया।

इन अह्मकों की वजह से सुन्नत छोड़ दूं

जब अन्दर पहुंचे तो तवाज़ो के तौर पर पहले उनके सामने खाना लाकर रखा गया, चुनांचे आपने खाना शुरू किया, खाने के दौरान आप के हाथ से एक निवाला नीचे गिर गया। हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तालीम यह है कि अगर निवाला नीचे गिर जाए तो उसको ज़ाया न करो, वह अल्लाह का रिज़्क है, और यह मालूम नहीं कि अल्लाह तआला ने रिज़्क के कौन से हिस्से में बर्कत रखी है, इसलिये उस निवाले की ना कद्री मत करो, बल्कि उसको उठा लो, अगर उसके ऊपर कुछ मिट्टी लग गयी हो तो उसको साफ कर लो, और फिर खा लो। चुनांचे जब निवाला नीचे गिरा तो हजरत हुजैफा रजियल्लाहु अन्हु को यह हदीस याद आ गई, और आपने उस निवाले को उठाने के लिए नीचे हाथ बढ़ाया, आपके

बराबर में एक साहिब बैठे थे, उन्हों ने आपको कोहनी मार कर इशारा किया कि यह क्या कर रहे हो? यह तो दुनिया की सुपर ताक़त किस्रा का दरबार है, अगर इस दरबार में ज़मीन पर गिरा हुआ निवाला उठा कर खाओगे तो इन लोगों के ज़ेहनों में तुम्हारी वक्अ़त नहीं रहेगी, और ये समझेंगे कि ये बड़े नदीदे किस्म के लोग हैं, इसलिये यह निवाला उठा कर खाने का मौका नहीं है, आज इसको छोड़ दो। जवाब में हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ियल्लाहु अन्हु ने क्या अजीब जुम्ला इर्शाद फ़रमाया कि:

"اترك سنة رسول الله صلى الله عليه وسلم لهولاء الحمقاء؟"

"क्या मैं इन अहमकों की वजह से सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत छोड़ दूं? चाहे ये अच्छा समझें या बुरा समझें, इज़्ज़त करें या ज़िल्लत करें, या मज़ाक़ उड़ायें, लेकिन मैं सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत नहीं छोड़ सकता। चुनांचे वह लुक़्मा उठा कर साफ़ करके खा लिया।

ये हैं ईरान को फ़तह करने वाले

किस्रा के दरबार का दस्तूर यह था कि वह ख़ुद तो कुर्सी पर बैठा रहता था और सारे दरबारी सामने खड़े रहते थे। हज़रत रबई बिन आ़मिर रज़ियल्लाहु अन्हु ने किस्रा से कहा कि हम मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तालीमात के पैरोकार हैं, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हमें इस बात से मना किया है कि एक आदमी बैठा रहे और बाक़ी आदमी उसके सामने खड़े रहें। इसलिये हम इस तरह बात चीत करने के लिए तैयार नहीं, या तो हमारे लिए भी कुर्सियां मंगवाई जाएं, या किस्रा भी हमारे सामने खड़ा हो, किस्रा ने जब यह देखा कि ये लोग तो हमारी तौहीन करने के लिए आ गये, चुनांचे उसने हुक्म दिया कि एक मिट्टी का टोकरा भर कर इनके सर पर रख कर इनको वापस

रवाना कर दो, मैं इन से बात नहीं करता, चुनांचे एक मिट्टी का टोकरा उनको दे दिया गया। हज़रत रबई बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु ने वह टोकरा सर पर रख लिया, जब दरबार से निकलने लगे तो जाते हुए यह कहा किः ऐ किस्रा! यह बात याद रखना कि तुमने ईरान की मिट्टी हमें दे दी। यह कह कर रवाना हो गये। ईरानी लोग बड़े वहमी क़िस्म के लोग थे, उन्हों ने सोचा कि यह जो कहा कि "ईरान की मिट्टी हमें दे दी" यह तो बड़ी बद् शगूनी हो गई, अब किस्रा ने फ़ौरन एक आदमी पीछे दौड़ाया कि जाओ जल्दी वह मिट्टी का टोकरा वापस ले आओ। अब हज़रत रबई बिन आमिर रज़ियल्लाहु अन्हु कहां हाथ आने वाले थे, चुनांचे वह ले जाने में कामयाब हो गये, इसलिये कि अल्लाह तआला ने लिख दिया था कि ईरान की मिट्टी इन्हीं टूटी हुई तलवार वालों के हाथ में है।

किस्रा के गुरूर को मिट्टी में मिला दिया

अब बताइये कि उन्हों ने अपनी इज़्ज़त कराई या आज हम सुन्नतें छोड़ कर करवा रहे है? इज़्ज़त उन्हों ने ही कराई, और ऐसी इज़्ज़त कराई कि एक तरफ़ तो सुन्नत पर अमल करते हुए निवाला उठा कर खाया, और दूसरी तरफ़ ईरान के घमण्डी जो गुरूर के पुतले बने हुए थे उनका गुरूर ऐसा मिट्टी में मिलाया कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमा दिया किः

"اذا هلك كسرى فلا كسرى بعده"

कि जिस दिन किस्रा हलाक हुआ उसके बाद कोई किस्रा नहीं है, दुनिया से उसका नाम व निशान मिट गया। बहर हाल यह जो सुन्नत है कि अगर निवाला नीचे गिर जाए तो उसको उठा कर खा लो, उसको शर्मा कर मत छोड़ना चाहिए, बल्कि इस सुन्नत पर अमल करना चाहिए।

मज़ाक़ उड़ाने के डर से सुन्नत छोड़ना कब जायज़ है?

जैसा कि मैंने पहले अर्ज़ किया था कि अगर कोई सुन्नत ऐसी है जिसका छोड़ना भी जायज़ है, और इस बात का भी अन्देशा है कि अगर इस सुन्नत पर अमल किया गया तो कुछ मुसलमान जो बेफ़िक्र और आज़ाद ख़्याल हैं, वे इस सुन्नत का मज़ाक़ उड़ा कर कुफ़्र व दीन से फिर जाने में मुब्तला होंगे, तो ऐसे मौक़े पर उस सुन्नत पर अमल छोड़ दो तो जायज़ है, जैसे ज़मीन पर बैठ कर खाना सुन्नत से ज़्यादा क़रीब है, लेकिन अगर आप किसी वक़्त होटल में खाने के लिए चले गए, वहां कुर्सियां बिछी हुई हैं, अब आपने वहां जाकर यह सोचा कि ज़मीन पर बैठ कर खाना सुन्नत से ज़्यादा क़रीब है, चुनांचे वहीं पर आप ज़मीन पर रूमाल बिछा कर बैठ गये। तो इस सूरत में अगर इस सुन्नत की तौहीन और मज़ाक़ उड़ाने का अन्देशा हो, और इस से लोगों के कुफ़्र और बद् दीनी में मुब्तला होने का अन्देशा हो तो ऐसी सूरत में बेहतर यह है कि उस वक़्त आदमी उस सुन्नत को छोड़ दे, और कुर्सी पर बैठ कर खा ले।

लेकिन यह उस वक़्त है जब उस सन्नत को छोड़ना जायज़ हो, लेकिन जहां उस सुन्नत को छोड़ना जायज़ और दुरुस्त न हो, वहां किसी के मज़ाक़ उड़ाने की वजह से उस सुन्नत को छोड़ना जायज़ नहीं। दूसरे यह कि मुसलमान की बात और है काफ़िर की बात और है। इसलिये कि मुसलमान के अन्दर तो इस बात का अन्देशा है कि सुन्नत का मज़ाक़ उड़ाने के नतीजे में काफ़िर हो जायेगा, लेकिन अगर काफ़िरों का मज्मा है, तो वे पहले से ही काफ़िर हैं, उनके मज़ाक़ उड़ाने से कुछ फ़र्क़ नहीं पड़ेगा। इसलिये वहां पर सुन्नत पर अमल को छोड़ना जायज़ नहीं होगा।

खाने के वक़्त अगर कोई मेहमान आ जाए तो?

"وعن جابر رضی الله عنه قال: سمعت رسول الله صلی الله علیه

وسلم يقول: طعام الواحد يكفى الاثنين وطعام الاثنين يكفى الاربعة وطعام الاربعة يكفى الثمانية" (مسلم شريف)

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह फ़रमाते हुए सुना कि एक आदमी का खाना दो आदमियों के लिए काफ़ी हो जाता है और दो आदमियों का खाना चार आदमियों के लिए काफ़ी हो जाता है, और चार आदमियों का खाना आठ के लिए काफ़ी हो जाता है।

इस हदीस में आपने यह उसूल बयान फ़रमाया कि अगर तुम खाना खाने बैठे और उस वक़्त कोई मेहमान या ज़रूरत मन्द आ गया, तो उस मेहमान को या उस ज़रूरत मन्द को सिर्फ़ इस वजह से वापस मत लौटाओ कि खाना तो हमने एक ही आदमी का बनाया था, अगर उस मेहमान को या ज़रूरत मन्द को खाने में शरीक कर लिया तो खाने में कमी पड़ जायेगी, बल्कि एक आदमी का खाना दो के लिए भी काफ़ी हो जाता है। इसलिये उस ज़रूरत मन्द को वापस मत लौटाओ, बल्कि उसको भी खाने में शरीक कर लो, इसके नतीजे में अल्लाह तआला खाने में बर्कत अता फ़रमायेंगे। और जब एक का खाना दो के लिए काफ़ी हो जाता है तो दो का खाना चार के लिए, और चार का खाना आठ के लिए काफ़ी हो जाता है।

साइल को डांट कर मत भगाओ

हमारे यहां यह अजीब रिवाज पड़ गया है कि मेहमान उसी को समझा जाता है जो हमारे हम पल्ला हो, या जिस से जान पहचान हो, दोस्ती हो, या अज़ीज़ या क़रीबी रिश्तेदार हो, और वह भी अपने हम पल्ला और अपने स्टेटस का हो, वह तो हक़ीक़त में मेहमान है, और जो बेचारा गरीब और मिस्कीन आ जाए तो कोई शख़्स उसको मेहमान नहीं मानता, बल्कि उसको भिकारी समझा जाता है, कहते हैं कि यह मांगने वाला आ गया, हालांकि हक़ीक़त में वह भी अल्लाह तआला का भेजा हुआ मेहमान है। उसका इक्राम करना भी हर

मुसलमान का हक है। इसलिये अगर खाने के वक़्त ऐसा मेहमान आ जाए तो उसको भी खाने में शरीक कर लो, उसको वापस मत करो। इसमें इस बात का ख़ास ख्याल रखना चाहिए कि अगर खाने के वक़्त साइल आ जाए तो उसको वापस लौटाना अच्छी बात नहीं, उसको कुछ देकर रुख़्सत करना चाहिए। और इस से तो हर हाल में परहेज़ करना चाहिए कि उसको डांट कर भगा दिया जाए, कुरआने करीम का इर्शाद है:

"وَأَمَّا السَّائِلَ فَلَا تَنْهَرْ" (سورة الضحى)

साइल को झिड़को नहीं, इसलिये जहां तक हो सके इस बात की कोशिश करो कि झिड़कने की नौबत न आए, इसलिये कि कभी कभी आदमी इसके अन्दर हद से आगे बढ़ जाता है, जिसके नतीजे में बड़े ख़राब हालात पैदा हो जाते हैं।

एक नसीहत भरा वाक़िआ

हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने अपने मवाइज़ में एक किस्सा लिखा है कि एक साहिब बड़े दौलत वाले थे, एक बार वह अपने बीवी के साथ खाना खा रहे थे, खाना भी अच्छा बना हुआ था। इसलिये बहुत शौक़ व ज़ौक़ से खाना खाने बैठे, इतने में एक साइल दरवाज़े पर आ गया, अब खाने के दौरान साइल का आना उनको बुरा लगा, चुनांचे उन्हों ने उस साइल को डांट डपट कर ज़लील करके बाहर निकाल दिया। अल्लाह तआला महफ़ूज़ रखे। कभी कभी इन्सान का एक अमल अल्लाह के ग़ज़ब को दावत दे देता है। चुनांचे कुछ समय के बाद मियां बीवी में अन बन शुरू हो गई, लड़ाई झगड़े रहने लगे, यहां तक कि तलाक़ की नौबत आ गयी, और उसने तलाक़ दे दी। बीवी ने अपने मैके आकर इद्दत गुज़ारी, और इद्दत के बाद किसी और शख़्स से उसका निकाह हो गया, वह भी एक दौलत वाला आदमी था। फिर एक दिन वह अपने उस दूसरे शौहर के साथ बैठ कर खाना खा रही थी कि इतने में दरवाज़े पर एक साइल आ

गया, चुनाचें बीवी ने अपने शौहर से कहा कि मेरे साथ एक वाक़िआ पेश आ चुका है। मुझे इस बात का ख़तरा है कि कहीं अल्लाह तआला का ग़ज़ब नाज़िल न हो जाए, इसलिये मैं पहले इस साइल को कुछ दे दूं। शौहर ने कहा कि दे आओ। जब वह देने गई तो उसने देखा कि वह साइल जो दरवाज़े पर खड़ा था, वह उसका पहला शौहर था। चुनांचे वह हैरान रह गई, और वापस आकर अपने शौहर को बताया कि आज मैंने अजीब मन्ज़र देखा कि यह साइल वह मेरा पहला शौहर है, जो बहुत दौलत वाला था। मैं एक दिन उसके साथ इसी तरह बैठी खाना खा रही थी कि इतने में दरवाज़े पर एक साइल आ गया, और उसने उसको झिड़क कर भगा दिया था। जिसके नतीजे में अब उसका यह हाल हो गया, उस शौहर ने कहा कि मैं तुम्हें इस से भी ज़्यादा अजीब बात बताऊं कि वह साइल जो तुम्हारे शौहर के पास आया था, वह हक़ीक़त में मैं ही था। अल्लाह तआला ने उसकी दौलत इस दूसरे शौहर को अता फ़रमा दी और उसका फ़क़ा उसको दे दिया, अल्लाह तआला बुरे वक़्त से महफ़ूज़ रखे, आमीन। नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस बात से पनाह मांगी है। फ़रमायाः

"اللهم انی اعوذبك من الحور بعد الكور"

बहर हाल, किसी भी साइल को डांट डपटने से जहां तक हो सके परहेज़ करो, लेकिन कभी कभी ऐसा मौक़ा आ जाता है कि डांटने की ज़रूरत पेश आती है। तो फ़ुक़हा ने उसकी इजाज़त दी है। लेकिन जहां तक हो सके इस बात की कोशिश करो कि डांटने की ज़रूरत पेश न आए, बल्कि कुछ देकर रुख़सत कर दो।

इस हदीस का दूसरा मफ़्हूम यह है कि अपने खाने की मिक़्दार (मात्रा) को ऐसी पत्थर की लकीर मत बनाओ कि जितना खाने का मामूल है, रोज़ाना उतना ही खाना ज़रूरी है, बल्कि अगर कभी किसी वक़्त कुछ कमी का मौक़ा आ जाए तो उसकी भी गुन्जाइश रखो,

इसलिये आपने फ़रमाया कि एक आदमी का खाना दो के लिए और दो का खाना चार के लिए, और चार का खाना आठ के लिए काफ़ी हो जाता है। अल्लाह तआला अपनी रहमत से इसकी हक़ीक़त समझने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

हज़रत मुजद्दिद अल्फ़े सानी रहमतुल्लाहि अलैहि का इर्शाद

बहर हाल, खाने की तक़रीबन अक्सर सुन्नतों का बयान हो चुका, अगर इन सुन्नतों पर अमल नहीं है, तो आज ही से अल्लाह के नाम पर इन पर अमल करने का इरादा कर लें। यक़ीन रखिए कि अल्लाह तआला ने जो नूरानियत, रूहानियत और दूसरे अजीब व गरीब फ़ायदे इत्तबा–ए–सुन्नत में रखे हैं, वे इन्शा अल्लाह इन छोटी छोटी सुन्नतों पर अमल करने से भी हासिल हो जायेंगे, हज़रत मुजद्दिद अल्फ़े सानी रहमतुल्लाहि अलैहि का इर्शाद बार बार सुनने का है, फ़रमाते हैं कि:

"अल्लाह तआला ने मुझे ज़ाहिरी उलूम से सरफ़राज़ फ़रमाया, हदीस पढ़ी, तफ़्सीर पढ़ी, फ़िक़ा पढ़ी, गोया तमाम ज़ाहिरी उलूम अल्लाह तआला ने अता फ़रमाए, इनमें अल्लाह तआला ने मुझे कमाल बख़्शा, इसके बाद मुझे ख़्याल हुआ कि यह देखना चाहिए कि सूफ़िया– ए–किराम क्या कहते हैं? उनके पास क्या उलूम हैं? चुनांचे उनकी तरफ़ मुतवज्जह होकर उनके उलूम हासिल किए, सूफ़िया–ए–किराम के जो चार सिलसिले हैं। सेहरवर्दिया, क़ादरिया, चिश्तिया, नक़्शबन्दिया, इन सब के बारे में दिल में यह तलाश पैदा हुई कि कौन सा सिलसिला क्या तरीक़ा तालीम करता है। सब की सैर की, और चारों सिलसिलों में जितने आमाल, जितने अश्गाल, जितने अज़्कार, जितने मुराक़बात, जितने चिल्ले हैं, वे सब अन्जाम दिए, सब कुछ करने के बाद अल्लाह तआला ने मुझे ऐसा मक़ाम बख़्शा कि ख़ुद सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने मुबारक हाथ से मुझे ख़िलअत (वह लिबास जो इज़्ज़त बढ़ाने

के तौर पर शाहों और बड़े लोगों की तरफ़ से किसी को पहनाया जाता है) पहनाया, फिर अल्लाह तआला ने इतना ऊंचा मक़ाम बख़्शा कि असल को पहुंचा, फिर असल से ज़िल्ल को पहुंचा। यहां तक कि मैं ऐसे मक़ाम पर पहुंचा कि अगर उसको ज़बान से ज़ाहिर करूं तो उलमा–ए–ज़ाहिर मुझ पर कुफ़्र का फ़त्वा लगा दें, और उलमा–ए–बातिन मुझ पर गुमराह और बेदीन होने का फ़त्वा लगा दें। लेकिन मैं क्या करूं कि अल्लाह तआला ने मुझे हक़ीक़त में अपने फ़ज़्ल से ये सब मक़ामात अ़ता फ़रमाए, अब ये सारे मक़ामात हासिल करने के बाद मैं एक दुआ करता हूं, और जो शख़्स इस दुआ पर आमीन कह देगा, इन्शा अल्लाह उसकी भी मग़फ़िरत हो जायेगी, वह दुआ यह है:

"ऐ अल्लाह मुझे नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत की इत्तिबा की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमा, आमीन। ऐ अल्लाह मुझे नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत पर ज़िन्दा रख, आमीन। ऐ अल्लाह मुझे नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत ही पर मौत अ़ता फ़रमा, आमीन।"

सुन्नतों पर अ़मल करें

बहर हाल, तमाम मक़ामात की सैर करने के बाद आख़िर में नतीजा यही है कि जो कुछ मिलेगा वह नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत की इत्तिबा में मिलेगा। तो हज़रत मुजद्दिद अल्फ़े सानी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि मैं तो सारे मक़ामात की सैर करने के बाद इस नतीजे पर पहुंचा, तुम पहले दिन पहुंच जाओ, पहले ही दिन इस बात का इरादा कर लो कि नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की जितनी सुन्नतें हैं, उन पर अ़मल करूंगा, फिर उसकी बर्कत और नूरानियत देखोगे, फिर ज़िन्दगी का लुत्फ़ देखो। याद रखो, ज़िन्दगी का लुत्फ़ गुनाहों और बदकारी में नहीं है, गुनाहों में नहीं है, इस ज़िन्दगी का लुत्फ़

उन लोगों से पूछो जिन्हों ने अपनी ज़िन्दगी को नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नतों में ढाल लिया है। हज़रत सुफ़ियान सौरी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि अल्लाह तआला ने ज़िन्दगी का जो लुत्फ़ और इसका जो कैफ़ और लज़्ज़त हमें अता फ़रमाई है, अगर इन दुनिया के बादशाहों को पता लग जाए तो तलवारें सूंत कर हमारे मुक़ाबले के लिए आ जाएं, ताकि उनको यह लज़्ज़त हासिल हो जाए। ऐसी लज़्ज़त अल्लाह तआला ने हमें अता फ़रमाई है। लेकिन कोई इस पर अमल करके देखे, इस राह पर चल कर देखे। अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल व करम और अपनी रहमत से हम सब को इत्तिबा–ए–सुन्नत की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

واخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

पीने के आदाब

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰٓى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا۔ اَمَّا بَعْدُ:

"عن انس رضی اللّٰہ عنہ ان رسول اللّٰہ صلی اللّٰہ علیہ وسلم: کان یتنفس فی الشراب ثلاثا، یعنی یتنفس خارج الاناء (مسلم شریف)

وعن ابن عباس رضی اللّٰہ عنھما قال: قال رسول اللّٰہ صلی اللّٰہ علیہ وسلم: لا تشربوا واحدا کشرب البعیر، ولکن اشربوا مثنی وثلاث، وسموا اذا انتم شربتم، واحمدوا اذا انتم رفعتم" (ترمذی شریف)

पानी पीने का पहला अदब

अब तक जिन हदीसों का बयान हुआ, उनमें खाने के आदाब बयान किए गए थे। आज जो हदीसें आ रही हैं, उनमें ज़्यादा तर पीने के आदाब का बयान है। इसमें पहली हदीस हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु की है, वह फ़रमाते हैं कि आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पीने की चीज़ को, चाहे वह पानी हो या शर्बत हो, उसको तीन सांस में पिया करते थे, फिर सांस लेने की वज़ाहत आगे कर दी कि पीने के दौरान बर्तन मुंह से हटा कर सांस लिया करते थे।

दूसरी हदीस हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत की गयी है। वह फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया, पीने की किसी भी चीज़ को ऊंट की तरह एक ही बार में न पिया करो। यानी एक ही सांस में एक ही बार में गट गट करके पूरा गिलास हलक़ में उंडेल दे, यह सही

नहीं। और इस अमल को आपने ऊंट के पीने से तश्बीह दी, इसलिये कि ऊंट की आदत यह है कि वह एक ही बार में सारा पानी पी जाता है। तुम इस तरह मत पियो, बल्कि तुम जब पानी पियो तो या तो दो सांस में पियो या तीन सांस में पियो, और जब पानी पीना शुरू करो तो अल्लाह का नाम लेकर और बिस्मिल्लाह पढ़ कर शुरू करो, यह नहीं कि महज़ गट गट करके पानी हलक़ से उतार लिया।

मेरे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह० का एक छोटा सा रिसाला है, जिसका नाम है "बिस्मिल्लाह के फ़ज़ाइल व मसाइल" उस छोटे से रिसाले में हक़ायक़ व मआरिफ़ का दरिया बन्द है। अगर उसको पढ़े तो इन्सान की आंखें खुल जाएं, उसमें हज़रत वालिद साहिब ने यही बयान फ़रमाया है कि यह पानी जिसको तुमने एक लम्हे के अन्दर हलक़ से नीचे उतार लिया, इसके बारे ज़रा यह सोचो कि यह पानी कहां था? और तुम तक कैसे पहुंचा?

पानी का खुदाई निज़ाम का करिश्मा

अल्लाह तआला ने पानी का सारा ज़ख़ीरा समुन्द्र में जमा कर रखा है, और उस समुन्द्र के पानी को खारा बनाया, इसलिये कि अगर उस पानी को मीठा बनाते तो कुछ मुद्दत के बाद यह पानी सड़ कर ख़राब हो जाता, इस लिये अल्लाह तआला ने उस पानी के अन्दर ऐसे नमकियात रखे कि रोज़ाना लाखों जानवर उसमें मर जाते हैं, इसके बावजूद उसमें कोई ख़राबी, कोई बदलाव पैदा नहीं होता। उसका ज़ायका नहीं बदलता, न उसके अन्दर कोई सड़न पैदा होती है। फिर अगर तुम से यह कहा जाता कि जब पानी की ज़रूरत हो तो समुन्द्र से हासिल कर लो, और उसको पी लो। तो इन्सान के लिए कितना दुश्वार हो जाता, इसलिये कि अव्वल तो हर शख़्स का समुन्द्र तक पहुंचना मुश्किल है, और दूसरी तरफ़ वह पानी इतना

खारा है कि एक घूंट भी हलक़ से उतारना मुश्किल है। इसलिये अल्लाह तआला ने यह निज़ाम फ़रमा दिया कि उस समुन्द्र से मान सून के बादल उठाए, और फिर अजीब कुदरत का करिश्मा है कि उस बादल के अन्दर ऐसी आटो मेटिक मशीन लगी हुई है कि जब वह बादल समुन्द्र से उठता है तो उस पानी की सारी नमकियात नीचे रह जाती हैं और सिर्फ़ मीठा पानी ऊपर उठ कर चला जाता है, और फिर अल्लाह तआला ने ऐसा नहीं किया कि साल में एक बार बादलों के ज़रिये सारा पानी बरसा देते, और यह फ़रमा देते कि तुम यह पानी अपने पास जमा कर लो, और ज़खीरा कर लो, हम सिर्फ़ एक बार बारिश बरसा देंगे, तो इस सूरत में वे बर्तन और टंकियां कहां से लाते जिनके अन्दर तुम इतना पानी जमा कर लेते जो तुम्हारे साल भर के लिए काफी हो जाता। बल्कि अल्लाह तआला कुरआने करीम में इर्शाद फ़रमाते हैं कि:

"فَاَسْكَنّٰهُ فِى الْاَرْضِ" (سورة المؤمنون: ١٨)

यानी हमने पहले से पानी आसमान से पानी बरसाया, और उसको ज़मीन के अन्दर बिठा दिया और जमा कर दिया। उसको इस तरह बिठा दिया कि पहले पहाड़ों पर बरसाया, और फिर उसको बर्फ़ की शक्ल में वहां जमा दिया, और तुम्हारे लिए वहां एक कुदरती फ़्रेजर बना दिया, अब पहाड़ की चोटियों पर तुम्हारे लिए पानी महफूज है। और ज़रूरत के वक़्त वह पानी पिघल पिघल कर दरियाओं के ज़रिये ज़मीन के मुख़्तलिफ़ इलाक़ों में पहुंच रहा है, और फिर दरियाओं से नहरें और नदियां निकालीं, और दूसरी तरफ़ जमीन की रगों के ज़रिये कुंओं तक पानी पहुंचा दिया। इसलिये अब पहाड़ों की चोटियों पर जखीरा मौजूद है, और सप्लाई लाइन भी मौजूद है और उस सप्लाई लाइन के जरिये एक एक आदमी तक पानी पहुंच रहा है। अब अगर सारी दुनिया के वैज्ञानिक और

इन्जीनियर मिल कर भी इस तरह पानी सप्लाई का इन्तिज़ाम करना चाहते तो नहीं कर सकते थे। इसलिये जब पानी पियो तो ज़रा ग़ौर कर लिया करो कि अल्लाह तआला ने किस तरह अपनी कामिल क़ुदरत और हिक्मत के ज़रिये यह पानी का गिलास तुम तक पहुंचाया। और इसी बात को याद दिलाने के लिए कहा जा रहा है कि जब पानी पियो तो बिस्मिल्लाह करके पानी पियो।

पूरी हुकूमत की क़ीमत एक गिलास पानी

बादशाह हारून रशीद एक बार शिकार की तलाश में जंगल में घूम रहे थे। घूमते घूमते रास्ता भटक गये, और रास्ते में खाने पीने का सामान ख़त्म हो गया और प्यास से बेताब हो गये, चलते चलते एक झोंपड़ी नज़र आई वहां पहुंचे, वहां जाकर झोंपड़ी वाले से कहा कि ज़रा पानी पिला दो, वह कहीं से पानी लाया और हारून रशीद ने पीना चाहा तो उस शख़्स ने कहाः अमीरुल मोमिनीन ज़रा एक लम्हे के लिए ठहर जाइए। पहले यह बतायें कि यह पानी जो मैं आपको दे रहा हूं, मान लीजिए कि यह नहीं मिलता और प्यास इतनी ही शदीद होती जितनी इस वक़्त है। तो बताइये इस एक गिलास पानी की क्या क़ीमत लगाते, और इसके हासिल करने पर कितनी रक़म ख़र्च कर देते? हारून रशीद ने कहा कि यह प्यास तो ऐसी चीज़ है कि अगर इन्सान को पानी न मिले तो इसकी वजह से बेताब हो जाता है, और मरने के क़रीब हो जाता है, इसलिये मैं एक गिलास पानी हासिल करने के लिये अपनी आधी हुकूमत दे देता। उसके बाद उसने कहा कि अब आप इस पानी को पी लें, हारून रशीद ने पी लिया। उसके बाद उस शख़्स ने हारून रशीद से कहाः अमीरुल मोमिनीन! एक सवाल का और जवाब दे दें, उन्हों ने पूछा क्या सवाल है? उस शख़्स ने कहा कि अभी आपने जो एक गिलास पानी पिया है, अगर यह पानी आपके जिस्म के अन्दर रह जाए और ख़ारिज न

हो, और पेशाब बन्द हो जाए, तो फिर इसको ख़ारिज करने के लिए क्या कुछ ख़र्च कर देंगे? हारून रशीद ने जवाब दिया कि यह तो पहली मुसीबत से भी ज़्यादा बड़ी मुसीबत है कि पानी अन्दर जाकर ख़ारिज न हो, और पेशाब बन्द हो जाए, इसको ख़ारिज करने के लिए भी मैं आधी हुकूमत दे देता। उसके बाद उस शख़्स ने कहा कि आपकी पूरी बादशाहत की क़ीमत सिर्फ़ एक गिलास पानी का अन्दर ले जाना और उसको बाहर लाना है। और यह पानी पीने और उसको बाहर निकालने की नेमत सुबह से शाम तक कई बार आपको हासिल होती है। कभी आपने इस पर गौर किया कि अल्लाह तआला ने कितनी बड़ी नेमत दे रखी है।

इसलिये यह जो कहा जा रहा है कि बिस्मिल्लाह पढ़ कर पानी पियो, इस से इस तरफ़ मुतवज्जह किया जा रहा है कि यह पानी का गिलास जो तुम पी रहे हो, यह अल्लाह तआला की कितनी बड़ी नेमत है। और इस तवज्जोह के नतीजे में अल्लाह तआला इस पानी पीने को तुम्हारे लिए इबादत बना देंगे।

ठन्डा पानी, एक बड़ी नेमत

हज़रत हाजी इम्दादुल्लाह साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि ने एक बार हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि से फ़रमाया कि: मियां अशरफ़ अली! जब भी पानी पियो तो ठन्डा पियो, ताकि रूएं रूएं से अल्लाह तआला का शुक्र निकले। इसलिये कि जब मोमिन आदमी ठन्डा पानी पियेगा तो उसके रूएं रूएं से अल्लाह तआला का शुक्र निकलेगा। शायद यही वजह हो कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के एक इर्शाद में आपकी चन्द पसन्दीदा चीजों का ज़िक्र है उन में से एक चीज ठन्डा पानी है।

चुनांचे रिवायतों में कहीं यह नहीं मिलता कि आपके लिए किसी ख़ास खाने का एहतिमाम किया जा रहा हो, लेकिन ठन्डे पानी का

इतना एहतिमाम था कि मदीना से दो मील के फ़ासले पर एक कुआं था, जिसका नाम था "बीरे गर्स" उसका पानी बहुत ठन्डा होता था। उस कुएं का पानी ख़ास तौर पर आपके लिए लाया जाता था और आप ने वसिय्यत भी फ़रमाई थी कि मेरे इन्तिकाल के बाद मुझे गुस्ल भी उसी कुएं के पानी से दिया जाए, चुनांचे आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को उसी "बीरे गर्स" के पानी से गुस्ल दिया गया। उस कुएं के आसार अब भी बाक़ी हैं, मगर पानी सूख चुका है, अल्लाह का शुक्र है, मैंने उस कुएं की ज़ियारत की है। आप ठन्डे पानी का एहतिमाम इसलिये फ़रमाते थे कि जब आदमी ठन्डा पानी पियेगा तो रूएं रूएं से अल्लाह का शुक्र निकलेगा।

तीन सांस में पानी पीना

इन हदीसों में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पानी पीने के आदाब बता दिये, जिनमें से एक अदब यह भी है कि तीन सांस में पानी पिया जाए। इस मायने में जितनी हदीसें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत की गयी हैं उनकी रोशनी में उलमा--ए- किराम ने फ़रमाया कि तीन सांस में पानी वग़ैरह पीना अफ़्ज़ल है, और सुन्नत के ज़्यादा क़रीब है। लेकिन दो सांस में पानी पीना भी जायज़ है, चार सांस में पीना भी जायज़ है। लेकिन एक सांस में सारा पानी पी जाना अच्छा नहीं है। और बाज़ उलमा ने लिखा है कि एक सांस में पीना तिब्बी तौर पर भी नुक्सान देह है, अल्लाह ही ख़ूब जानते हैं। बहर हाल, तिब्बी तौर पर नुक्सान देह हो या न हो, मगर हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस से मना फ़रमाया है, और तमाम उलमा का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि आपने एक सांस में पानी पीने की जो मुमानअत (यानी मनाही) फ़रमाई है वह हुर्मत वाली नहीं है, यानी एक सांस में पानी पीना हराम नहीं है, इसलिये अगर कोई शख़्स एक सांस में पानी पी लेगा

तो गुनाहगार नहीं होगा।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुख़्तलिफ़ शानें

बात असल में यह है कि आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हैसियत उम्मत के लिए मुख़्तलिफ़ शानें रखती है, एक हैसियत आप की रसूल की है, आप अल्लाह तआ़ला के अहकाम लोगों तक पहुंचाने वाले हैं, अब अगर इस हैसियत से आप किसी काम से मना फ़रमा देंगे तो वह काम हराम हो जायेगा, और उस काम को करना गुनाह होगा। और एक हैसियत आपकी एक मेहरबान रहनुमा की है, इसलिये अगर शफ़क़त की वजह से उम्मत को किसी काम से मना फ़रमाते हैं कि यह काम मत करो, तो इस मना करने का मतलब यह होता है कि ऐसा करने में तुम्हारे लिए नुक्सान है, यह अच्छा और पसन्दीदा काम नहीं है, लेकिन वह काम हराम नहीं हो जाता। इसलिये अगर कोई उसकी खिलाफ़ वर्ज़ी (उल्लंघन) करे तो यह नहीं कहा जायेगा कि उसने गुनाह का काम किया, या हराम काम किया, लेकिन यह कहा जायेगा कि सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मन्शा के ख़िलाफ़ काम किया, और आपके पसन्दीदा तरीक़े के ख़िलाफ़ किया, और वह शख़्स जिसके दिल में सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत हो, वह सिर्फ़ हराम कामों ही को नहीं छोड़ता, बल्कि जो काम महबूबे हक़ीक़ी को ना पसन्द हो उसको भी छोड़ देता है।

पानी पियो, सवाब कमाओ

इसलिये मस्अले के ऐतबार से तो मैंने बता दिया कि एक सांस में पानी पीना हराम और गुनाह नहीं है, लेकिन एक सच्ची मुहब्बत करने वाला, जिसके दिल में सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत हो, वह तो ऐसे कामों के क़रीब भी नहीं जायेगा जो आप को पसन्द नहीं हैं। इसलिये जिस काम के बारे में आपने

यह कह दिया कि यह काम पसन्दीदा नहीं है, एक मुसलमान को अपनी ताक़त भर उसके क़रीब नहीं जाना चाहिए, और उसको इख़्तियार नहीं करना चाहिए, अगरचे कर लेना कोई गुनाह नहीं, लेकिन अच्छी बात नहीं। इसलिये उलमा ने फ़रमाया कि एक सांस में पीना अच्छा नहीं है। और बाज़ उलमा ने फ़रमाया कि मक्रूहे तन्ज़ीही है, इसलिये क्यों ख़्वाह मख़्वाह एक सांस में पी कर अच्छाई के ख़िलाफ़ काम को किया जाए, पानी तो पीना ही है, उस पानी को अगर तीन सांस में इस नज़रिये से पी लो कि यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुबारक सुन्नत है तो यह पानी पीना तुम्हारे लिए इबादत बन गया, और सुन्नत के अन्वार व बर्कतें तुम्हें हासिल हो गए, और चूंकि हर सुन्नत पर अमल करने से इन्सान अल्लाह का महबूब बन जाता है, इसलिये उस वक़्त आपको अल्लाह की मुहब्बत हासिल हो गयी। अल्लाह के महबूब बन गये, ज़रा सी तवज्जोह से इस पर इतना बड़ा अज्र व सवाब हासिल हो गया। अब क्यों ला परवाही में इसको छोड़ दिया जाए? इस लिये इसको छोड़ना नहीं चाहिए।

मुसलमान होने की निशानी

देखिए, हर मिल्लत व मज़हब के कुछ तरीक़े और आदाब होते हैं, जिनके ज़रिये वह मिल्लत पहचानी जाती है। यह तीन सांस में पानी पीना भी मुसलमान के शिआर और निशानियों में से है, चुनांचे बचपन से बच्चे को सिखाया जाता है कि बेटा! तीन सांस में पानी पियो, आज कल तो इसका रिवाज ही ख़त्म हो गया कि अगर बच्चा कोई अमल इस्लामी आदाब के ख़िलाफ़ कर रहा है तो उसको टोका जाए कि बेटा! इस तरह करो, इस तरह न करो। बाज़ सुन्नत से मुहब्बत करने वालों का तो यह हाल होता है कि अगर पानी एक ही घूंट होता है तो सुन्नत की इत्तिबा के लिए उस एक घूंट को भी तीन सांस में पीते हैं, ताकि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की

हो, और पेशाब बन्द हो जाए, तो फिर इसको ख़ारिज करने के लिए क्या कुछ ख़र्च कर देंगे? हारून रशीद ने जवाब दिया कि यह तो पहली मुसीबत से भी ज़्यादा बड़ी मुसीबत है कि पानी अन्दर जाकर ख़ारिज न हो, और पेशाब बन्द हो जाए, इसको ख़ारिज करने के लिए भी मैं आधी हुकूमत दे देता। उसके बाद उस शख़्स ने कहा कि आपकी पूरी बादशाहत की कीमत सिर्फ़ एक गिलास पानी का अन्दर ले जाना और उसको बाहर लाना है। और यह पानी पीने और उसको बाहर निकालने की नेमत सुबह से शाम तक कई बार आपको हासिल होती है। कभी आपने इस पर ग़ौर किया कि अल्लाह तआला ने कितनी बड़ी नेमत दे रखी है।

इसलिये यह जो कहा जा रहा है कि बिस्मिल्लाह पढ़ कर पानी पियो, इस से इस तरफ़ मुतवज्जह किया जा रहा है कि यह पानी का गिलास जो तुम पी रहे हो, यह अल्लाह तआला की कितनी बड़ी नेमत है। और इस तवज्जोह के नतीजे में अल्लाह तआला इस पानी पीने को तुम्हारे लिए इबादत बना देंगे।

ठन्डा पानी, एक बड़ी नेमत

हज़रत हाजी इम्दादुल्लाह साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि ने एक बार हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि से फ़रमाया किः मियां अशरफ़ अली! जब भी पानी पियो तो ठन्डा पियो, ताकि रूएं रूएं से अल्लाह तआला का शुक्र निकले। इसलिये कि जब मोमिन आदमी ठन्डा पानी पियेगा तो उसके रूएं रूएं से अल्लाह तआला का शुक्र निकलेगा। शायद यही वजह हो कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के एक इर्शाद में आपकी चन्द पसन्दीदा चीजों का ज़िक्र है उन में से एक चीज ठन्डा पानी है।

चुनांचे रिवायतों में कहीं यह नहीं मिलता कि आपके लिए किसी ख़ास खाने का एहतिमाम किया जा रहा हो, लेकिन ठन्डे पानी का

इतना एहतिमाम था कि मदीना से दो मील के फ़ासले पर एक कुआं था, जिसका नाम था "बीरे गर्स" उसका पानी बहुत ठन्डा होता था। उस कुएं का पानी ख़ास तौर पर आपके लिए लाया जाता था और आप ने वसिय्यत भी फ़रमाई थी कि मेरे इन्तिक़ाल के बाद मुझे गुस्ल भी उसी कुएं के पानी से दिया जाए, चुनांचे आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को उसी "बीरे गर्स" के पानी से गुस्ल दिया गया। उस कुएं के आसार अब भी बाक़ी हैं, मगर पानी सूख चुका है, अल्लाह का शुक्र है, मैंने उस कुएं की ज़ियारत की है। आप ठन्डे पानी का एहतिमाम इसलिये फ़रमाते थे कि जब आदमी ठन्डा पानी पियेगा तो रूएं रूएं से अल्लाह का शुक्र निकलेगा।

तीन सांस में पानी पीना

इन हदीसों में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पानी पीने के आदाब बता दिये, जिनमें से एक अदब यह भी है कि तीन सांस में पानी पिया जाए। इस मायने में जितनी हदीसें हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत की गयी हैं उनकी रोशनी में उलमा–ए– किराम ने फ़रमाया कि तीन सांस में पानी वग़ैरह पीना अफ़्ज़ल है, और सुन्नत के ज़्यादा क़रीब है। लेकिन दो सांस में पानी पीना भी जायज़ है, चार सांस में पीना भी जायज़ है। लेकिन एक सांस में सारा पानी पी जाना अच्छा नहीं है। और बाज़ उलमा ने लिखा है कि एक सांस में पीना तिब्बी तौर पर भी नुक़्सान देह है, अल्लाह ही ख़ूब जानते हैं। बहर हाल, तिब्बी तौर पर नुक़्सान देह हो या न हो, मगर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस से मना फ़रमाया है, और तमाम उलमा का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि आपने एक सांस में पानी पीने की जो मुमानअत (यानी मनाही) फ़रमाई है वह हुर्मत वाली नहीं है, यानी एक सांस में पानी पीना हराम नहीं है, इसलिये अगर कोई शख़्स एक सांस में पानी पी लेगा

तो गुनाहगार नहीं होगा।

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुख़्तलिफ़ शानें

बात असल में यह है कि आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हैसियत उम्मत के लिए मुख़्तलिफ़ शानें रखती है, एक हैसियत आप की रसूल की है, आप अल्लाह तआ़ला के अहकाम लोगों तक पहुंचाने वाले हैं, अब अगर इस हैसियत से आप किसी काम से मना फ़रमा देंगे तो वह काम हराम हो जायेगा, और उस काम को करना गुनाह होगा। और एक हैसियत आपकी एक मेहरबान रहनुमा की है, इसलिये अगर शफ़क़त की वजह से उम्मत को किसी काम से मना फ़रमाते हैं कि यह काम मत करो, तो इस मना करने का मतलब यह होता है कि ऐसा करने में तुम्हारे लिए नुक़्सान है, यह अच्छा और पसन्दीदा काम नहीं है, लेकिन वह काम हराम नहीं हो जाता। इसलिये अगर कोई उसकी खिलाफ़ वर्ज़ी (उल्लंघन) करे तो यह नहीं कहा जायेगा कि उसने गुनाह का काम किया, या हराम काम किया, लेकिन यह कहा जायेगा कि सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मन्शा के ख़िलाफ़ काम किया, और आपके पसन्दीदा तरीक़े के ख़िलाफ़ किया, और वह शख़्स जिसके दिल में सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत हो, वह सिर्फ़ हराम कामों ही को नहीं छोड़ता, बल्कि जो काम महबूबे हक़ीक़ी को ना पसन्द हो उसको भी छोड़ देता है।

पानी पियो, सवाब कमाओ

इसलिये मस्अले के ऐतबार से तो मैंने बता दिया कि एक सांस में पानी पीना हराम और गुनाह नहीं है, लेकिन एक सच्ची मुहब्बत करने वाला, जिसके दिल में सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुहब्बत हो, वह तो ऐसे कामों के क़रीब भी नहीं जायेगा जो आप को पसन्द नहीं हैं। इसलिये जिस काम के बारे में आपने

यह कह दिया कि यह काम पसन्दीदा नहीं है, एक मुसलमान को अपनी ताक़त भर उसके क़रीब नहीं जाना चाहिए, और उसको इख़्तियार नहीं करना चाहिए, अगरचे कर लेना कोई गुनाह नहीं, लेकिन अच्छी बात नहीं। इसलिये उलमा ने फ़रमाया कि एक सांस में पीना अच्छा नहीं है। और बाज़ उलमा ने फ़रमाया कि मक्रूहे तन्ज़ीही है, इसलिये क्यों ख़्वाह मख़्वाह एक सांस में पी कर अच्छाई के ख़िलाफ़ काम को किया जाए, पानी तो पीना ही है, उस पानी को अगर तीन सांस में इस नज़रिये से पी लो कि यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुबारक सुन्नत है तो यह पानी पीना तुम्हारे लिए इबादत बन गया, और सुन्नत के अन्वार व बर्कतें तुम्हें हासिल हो गए, और चूंकि हर सुन्नत पर अमल करने से इन्सान अल्लाह का महबूब बन जाता है, इसलिये उस वक़्त आपको अल्लाह की मुहब्बत हासिल हो गयी। अल्लाह के महबूब बन गये, ज़रा सी तवज्जोह से इस पर इतना बड़ा अज्र व सवाब हासिल हो गया। अब क्यों ला परवाही में इसको छोड़ दिया जाए? इस लिये इसको छोड़ना नहीं चाहिए।

मुसलमान होने की निशानी

देखिए, हर मिल्लत व मज़हब के कुछ तरीक़े और आदाब होते हैं, जिनके ज़रिये वह मिल्लत पहचानी जाती है। यह तीन सांस में पानी पीना भी मुसलमान के शिआर और निशानियों में से है, चुनांचे बचपन से बच्चे को सिखाया जाता है कि बेटा! तीन सांस में पानी पियो, आज कल तो इसका रिवाज ही ख़त्म हो गया कि अगर बच्चा कोई अमल इस्लामी आदाब के ख़िलाफ कर रहा है तो उसको टोका जाए कि बेटा! इस तरह करो, इस तरह न करो। बाज सुन्नत से मुहब्बत करने वालों का तो यह हाल होता है कि अगर पानी एक ही घूंट होता है तो सुन्नत की इत्तिबा के लिए उस एक घूंट को भी तीन सांस में पीते हैं, ताकि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की

सुन्नत का अज्र व सवाब हासिल हो जाए।

मुंह से बर्तन हटा कर सांस लो

" عن ابی قتادة رضی اللّٰہ عنه ان النبی صلی اللّٰہ علیه وسلم نهی ان یتنفس فی الاناء" (ترمذی شریف)

हज़रत अबू क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बर्तन के अन्दर सांस लेने से मना फ़रमाया। यानी एक आदमी पानी पीते हुए बर्तन के अन्दर ही सांस ले और सांस लेते वक़्त बर्तन न हटाए, इस से आपने मना फ़रमाया, एक और हदीस में इसकी तफ़्सील आई है कि एक साहिब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए और अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह मुझे पानी पीते वक़्त बार बार सांस लेने की ज़रूरत पेश आती है, मैं किस तरह सांस लिया करूं? आपने फ़रमाया कि जिस वक़्त सांस लेने की ज़रूरत हो उस वक़्त जिस गिलास या प्याले के ज़रिये तुम पानी पी रहे हो उसको अपने मुंह से अलग करके सांस ले लो, लेकिन पानी पीने के दौरान बर्तन और गिलास के अन्दर सांस लेना और फुंकारे मारना अदब के ख़िलाफ़ है, और सुन्नत के ख़िलाफ़ है।

एक अमल में कई सुन्नतों का सवाब

हमारे हज़रत डा० साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि सुन्नतों पर अमल करने की नियत करना लूट का माल है, मतलब यह है कि एक अमल के अन्दर जितनी सुन्नतों की नियत कर लोगे उतनी सुन्नतों का सवाब हासिल हो जायेगा। जैसे पानी पीते वक़्त यह नियत कर लो कि मैं तीन सांस में पानी इसलिये पी रहा हूं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की आदते शरीफ़ा तीन सांस में पीने की थी, इस सुन्नत का सवाब हासिल हो गया। इसी तरह यह नियत कर ली कि मैं सांस लेते वक़्त बर्तन को

इसलिये मुंह से हटा रहा हूं कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बर्तन में सांस लेने से मना फ़रमाया है। अब दूसरी सुन्नत पर अमल का भी सवाब हासिल हो गया। इसलिये सुन्नतों का इल्म हासिल करना ज़रूरी है, ताकि आदमी जब कोई अमल करे तो एक ही अमल के अन्दर जितनी सुन्नतें हैं उन सब का ध्यान और ख़्याल रखे, और उनकी नियत करे तो फिर हर रह नियत के साथ इन्शा अल्लाह मुस्तकिल सुन्नत का सवाब हासिल हो जायेगा।

दायीं तरफ़ से बांटना शुरू करो

"عن انس رضی اللّٰہ عنہ ان رسو ل اللّٰہ صلی اللّٰہ علیہ وسلم اتی بلبن قد شیب بماء، وعن یمینہ اعرابی وعن یسارہ ابوبکر رضی اللّٰہ عنہ، فشرب ثم اعطی الاعرابی وقال الایمن فالایمن" (ترمذی شریف)

इस हदीस शरीफ़ में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक और अज़ीम अदब बयान फ़रमाया है, और यह अदब भी उम्मते मुस्लिमा की निशानियों में से है। और इस अदब से भी हमारे समाज में बड़ी ग़फ़लत पाई जा रही है। वह अदब इस हदीस में एक वाक़िए के अंदर बयान फरमा दिया, वह यह कि एक शख़्स हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में दूध लेकर आए, और उस दूध में पानी मिला हुआ था, यह पानी मिलाना कोई मिलावट की ग़र्ज़ से और दूध बढ़ाने की ग़र्ज़ से नहीं था, बल्कि अरब के लोगों में यह बात मश्हूर थी कि ख़ालिस दूध इतना मुफ़ीद नहीं होता जितना पानी मिला हुआ दूध मुफ़ीद होता है, इसलिये वह साहिब दूध में पानी मिला कर हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में लाए थे। आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उस दूध में से कुछ पिया, जो दूध बाक़ी बचा आपने चाहा कि मौजूद लोगों को पिला दें, उस वक़्त आपके दाहिनी तरफ़ एक आराबी यानी देहात का रहने वाला बैठा था। जिसको बद्दू भी कहते

हैं, और आपकी बायीं जानिब हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु तशरीफ़ फ़रमा थे, आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपना बचा हुआ दूध दायीं तरफ़ बैठे हुए देहाती को पहले अता फ़रमा दिया, हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु को नहीं दिया, और आपने साथ में फ़रमाया "अल्ऐमन फल्ऐमन" यानी जो आदमी दाहिनी तरफ़ बैठा हो पहले उसका हक़ है।

हज़रत अबू बक्र रज़ियल्लाहु अन्हु का मक़ाम

आप अन्दाज़ा लगायें कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस तरतीब का इतना ख़्याल फ़रमाया कि हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु जिनको अल्लाह तआला ने यह मक़ाम अता फ़रमाया कि अंबिया के बाद इस रूए ज़मीन पर उनसे ज़्यादा अफ़्ज़ल इन्सान पैदा नहीं हुआ, जिनके बारे में हज़रत मुजद्दिद अल्फ़े सानी रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि "सिद्दीक़" वह इन्सान होता है कि अगर नबी किसी आईने के सामने खड़े हों तो यह जो खड़े हुए इन्सान हैं, यह तो नबी हैं, और आईने में उनका जो अक्स नज़र आ रहा है वे "सिद्दीक़" हैं, गोया कि "सिद्दीक़" वह है जो नुबुव्वत का पूरा अक्स और पूरी छाप लिए हुए हो, और जो सही मायने में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का ख़लीफ़ा हो। और हज़रत सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु वह इन्सान हैं कि हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि अगर सिद्दीके अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु मेरी पूरी ज़िन्दगी के तमाम नेक आमाल मुझ से ले लें, और उसके बदले में वह एक रात जो उन्हों ने हिजरत के मौक़े पर ग़ार के अन्दर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ गुज़ारी थी, वह मुझे दे दें, तो भी सौदा सस्ता रहेगा। अल्लाह तआला ने उनको इतना ऊंचा मक़ाम अता फ़रमाया था, लेकिन इस बुलन्द मक़ाम के बावजूद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम

ने तक़्सीम के वक़्त दूध का प्याला देहाती को दे दिया, उनको नहीं दिया और फ़रमायाः "अल्ऐमन फल्ऐमन" यानी तक़्सीम के वक़्त दाहिनी जानिब वाला पहले है, बायीं जानिब वाला बाद में है।

दाहिनी जानिब बर्कत का सबब है

इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह उसूल सिखा दिया कि अगर मज्लिस में लोग बैठे हुए हों, और कोई चीज़ तक़्सीम करनी मक़्सूद हो। जैसे पानी पिलाना मक़्सूद हो, या खाने की कोई चीज़ तक़्सीम करनी हो, या छुवारे तक़्सीम करने हों, तो इसमें अदब यह है कि दायीं तरफ़ वालों को दे, और फिर बायीं तरफ़ तक़्सीम करे। अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दायीं तरफ़ को बहुत अहमियत दी है, दायीं तरफ़ को अर्बी ज़बान में "यमीन" कहते हैं और "यमीन" के मायने अर्बी ज़बान में मुबारक के भी होते हैं, इसलिये दायीं जानिब से काम करने में बर्कत है, इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि दायें हाथ से खाओ, दायें हाथ से पानी पियो, दायां जूता पहले पहनो, चलने में रास्ते की दायीं जानिब चलो, यहां तक कि जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपने बालों में कंघी करते तो पहले दायीं जानिब के बालों में कंघी करते, फिर बायीं जानिब करते, दायें का इतना एहतिमाम फ़रमाते। इसलिये दायीं जानिब से हर काम शुरू करने में बर्कत भी है और सुन्नत भी है।

दाहिनी तरफ़ का एहतिमाम

एक और हदीस में यह मज़्मून आया है कि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में पीने की कोई चीज़ लाई गई, आपने उसमें से कुछ पी ली, कुछ बच गई, उस वक़्त मज्लिस में दायीं जानिब एक नौजवान लड़का बैठा था, और बायीं जानिब बड़े बड़े लोग बैठे थे, जो उमर में भी बड़े थे और इल्म और तजुर्बे में भी ज़्यादा थे, अब हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने

सोचा कि अदब और उसूल का तकाज़ा तो यह है कि यह पीने की चीज़ इस छोटे लड़के को दी जाए, लेकिन बायीं जानिब बड़े बड़े हज़रात बैठे हैं, उनके दर्जे और रुतबे का तकाज़ा यह है कि उनको तरजीह दी जाए। चुनांचे आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उस नौजवान लड़के से ख़िताब करते हुए फ़रमाया कि यह तुम्हारी बायीं जानिब बड़े बड़े लोग बैठे हैं, अब हक़ तो तुम्हारा बनता है कि तुम्हें दिया जाए, इसलिये कि तुम दायीं जानिब हो, लेकिन बायीं जानिब तुम्हारे बड़े बैठे हैं। अगर तुम इजाज़त दो तो मैं उनको दे दूं? वह लड़का भी बड़ा समझदार था, उसने कहा कि या रसूलल्लाह! अगर कोई और चीज़ होती तो मैं ज़रूर इन बड़ों को अपने आप पर तरजीह दे देता, लेकिन यह आपका बचा हुआ है, और आपके बचे हुए पर मैं किसी और को तरजीह नहीं दे सकता। इसलिये अगर मेरा हक़ बनता है तो आप मुझे ही अता फ़रमायें। उसके बाद आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने वह चीज़ उसके हाथ में थमाते हुए फ़रमाया कि लो, तुम ही पी लो। यह नौजवान हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु थे। (मुस्लिम शरीफ़)

देखिए, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दायीं जानिब का इतना एहतिमाम फ़रमाया, हालांकि बायीं जानिब बड़े बड़े लोग बैठे हैं, और ख़ुद आपकी भी यह ख़्वाहिश कि यह चीज़ इन बड़ों को मिल जाए, लेकिन आपने इस क़ायदे और इस उसूल के ख़िलाफ़ नहीं किया कि दायीं जानिब से शुरू किया जाए। अब दिन रात हमारे साथ इस क़िस्म के वाक़िआत पेश आते रहते हैं। जैसे घर में लोग बैठे हैं उनके दरमियान कोई चीज़ तक़्सीम करनी है, या जैसे दस्तरख़्वान पर बर्तन लगाने हैं या खाना तक़्सीम करना है। उसमें अगर हम इस बात का एहतिमाम करें कि दायीं तरफ़ से शुरू करें और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत पर अमल करने की नियत कर लें। फिर देखें कि उसमें कितनी बर्कत और

कितना नूर मालूम होगा।

बहुत बड़े बर्तन से मुंह लगा कर पानी पीना

"عن ابی سعید الخدری رضی اللّٰہ عنہ، قال:نھی رسو ل اللّٰہ صلی اللّٰہ علیہ وسلم عن اختنات الا سقیة، یعنی ان تکسر افواھھا و یشرب منھا"
(مسلم شریف)

इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक और अदब बयान फ़रमा दिया। चुनांचे हज़रत उबू सईद ख़ुदरी रज़ि० फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस से मना फ़रमाया कि मश्कीज़ों का मुंह काट कर फिर उस से मुंह लगा कर पानी पिया जाए। उस ज़माने में बड़े बड़े मश्कीज़ों में पानी भर कर रखा जाता था, जैसे आज कल बड़े बड़े गैलन और कैन होते हैं, उन से मुंह लगा कर पानी पीने से आपने मना फ़रमाया।

मना करने की दो वजह

उलमा ने फ़रमाया कि इस मना करने की दो वजह हैं, एक वजह यह है कि उस मश्कीजे या गैलन के अन्दर बड़ी मिक़्दार (मात्रा) में पानी भरा हुआ है। हो सकता है कि पानी के अन्दर कोई नुक़्सान देह चीज़ पड़ी हुई हो, जिसकी वजह से वह पानी ख़राब हो गया हो, या नुक़्सान देह हो गया हो। जैसे कभी कभी कोई जानवर या कीड़ा वग़ैरह अन्दर गिर कर पानी में मर जाता है, अब नज़र तो नहीं आ रहा है कि अन्दर क्या है तो इस बात का अन्देशा है कि मुंह लगा कर पानी पीने के नतीजे में कोई ख़तरनाक चीज़ हलक़ में न चली जाए, या पानी नापाक और गंदा हो गया हो, इसलिये आपने इस तरह मुंह लगा कर पीने से मना फ़रमाया।

और दूसरी वजह उलमा ने यह बयान फ़रमाई कि जब आदमी इतने बड़े बर्तन से मुंह लगा कर पानी पियेगा तो इस बात का अन्देशा है कि एक दम से बहुत सारा पानी मुंह में आ जाए, और उसके नतीजे में अच्छू लग जाए, फन्दा लग जाए, या कोई और

तक्लीफ़ हो जाए। इसलिये आपने इस से मना फ़रमाया।

हुज़ूरे पाक की अपनी उम्मत पर शफ़्क़त

लेकिन जैसा कि मैंने अभी अर्ज़ किया कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जिन बातों से मना फ़रमाते हैं, उनमें से बाज़ बातें तो वे होती हैं कि जो हराम और गुनाह होती हैं, और बाज़ बातें वे होती हैं जो हराम और गुनाह तो नहीं होतीं लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हम पर शफ़्क़त करते हुए और अदब सिखाते हुए उस से मना फ़रमाते हैं। और जिस काम को आप शफ़्क़त की वजह से मना फ़रमाते हैं, जब्कि वह काम हराम और गुनाह नहीं होता, उसकी निशानी यह होती है कि कभी कभार ज़िन्दगी में आप उस काम को कर के भी दिखा देते हैं, ताकि लोगों को मालूम हो जाए कि यह काम हराम और ना जायज़ नहीं है, लेकिन अदब के ख़िलाफ़ है। चुनांचे हदीसों में आता है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक दो बार मश्कीज़े से मुंह लगा कर भी पानी पिया। उलमा ने फ़रमाया कि उन तमाम बर्तनों का भी यही हुक्म है जो बड़े हों, और उनमें ज़्यादा मिक़्दार (मात्रा) में पानी आता हो। जैसे बड़ा कनस्तर है। या मटका है। इन से भी मुंह लगा कर पानी नहीं पीना चाहिए, लेकिन ज़रूरत पड़ जाए तो अलग बात है, चुनांचे अगली हदीस में इसकी वज़ाहत आ रही है।

मश्कीज़े से मुंह लगा कर पानी पीना

"وعن ام ثابت كبشة بنت ثابت، اخت حسان بن ثابت رضى الله عنه وعنهما قالت: دخل على رسو ل الله صلى الله عليه وسلم، فشرب من فى قربة معلقة قائما، فقمت الى فيها، فقطعته" (ترمذى شريف)

हज़रत कब्शा बिन्ते साबित रज़ियल्लाहु अन्हा जो हज़रत हस्सान बिन साबित रज़ियल्लाहु अन्हु की बहन हैं। वह फ़रमाती हैं कि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हमारे घर में तशरीफ़ लाए, हमारे घर में एक मश्कीज़ा लटका हुआ था, आपने खड़े होकर

उस मश्कीज़े से मुंह लगा कर पानी पिया। इस अमल के ज़रिए आपने बता दिया कि इस तरह मश्कीज़े से मुंह लगा कर पीना कोई हराम नहीं है। सिर्फ़ तुम पर शफ़कत करते हुए एक मश्विरे के तौर पर यह हुक्म दिया गया है। हज़रत कब्शा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं कि जब आप चले गए तो मैं खड़ी हुई और मश्कीज़े के जिस हिस्से से मुंह लगा कर आपने पानी पिया था, उस हिस्से को काट कर वह चमड़ा अपने पास रख लिया।

हुज़ूर के होंट जिसको छू लें

सहाबा-ए-किराम में एक एक सहाबी हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जाँनिसार, आशिके ज़ार, फ़िदाकार था। ऐसे फ़िदाकार और जाँनिसार किसी और हस्ती के नहीं मिल सकते, जैसे कि आपने ऊपर देखा कि हज़रत कब्शा रज़ियल्लाहु अन्हा ने उस मश्कीज़े का मुंह काट कर अपने पास रख लिया, और फ़रमाया कि यह वह चमड़ा है जिस को नबी-ए-करीम सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुबारक होंट छूए हैं, और आइन्दा किसी और के होंट इसको नहीं छूने चाहिएं, और अब यह चमड़ा इसलिये नहीं है कि इसको मश्कीज़े के तौर पर इस्तेमाल किया जाए, यह तो तबर्रुक के तौर पर रखने के काबिल है। इसलिये उसको काट कर तबर्रुक के तौर पर अपने घर में रख लिया।

ये बाल बर्कत वाले हो गए

हज़रत अबू महज़ूरा रज़ियल्लाहु अन्हु एक सहाबी हैं, जिनको हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मक्का मुकर्रमा का मुअज़्ज़िन मुकर्रर फ़रमाया था। जिस वक़्त यह मुसलमान हुए थे, उस वक़्त यह छोटे बच्चे थे, और हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने शफ़कत से उनके सर पर हाथ रखा, जिस तरह छोटे बच्चों के सर पर हाथ रखते हैं। चुनांचे हज़रत अबू महज़ूरा रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि जिस मकाम पर सरकारे दो आलम ने मेरे सर पर

हाथ रखा था, सारी उमर उस जगह से बाल नहीं कटवाए, और फ़रमाते थे कि ये वे बाल हैं जिनको सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुबारक हाथ ने छुआ है।

तबर्रुकात की हैसियत

इस से यह बात भी मालूम हुई कि आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की कोई चीज़ तबर्रुक के तौर पर रखना, या आपके सहाबा-ए-किराम, ताबिईन, बुज़ुर्गाने दीन, और औलिया-ए-किराम की कोई चीज़ तबर्रुक के तौर पर रख लेने में कोई हरज नहीं। आज कल इस बारे में लोगों के दरमियान कमी बेशी पाई जाती है, बाज़ लोग इन तबर्रुकात से बहुत चिढ़ते हैं, अगर ज़रा सी तबर्रुक के तौर पर कोई चीज़ रख ली, तो उनके नज़्दीक वह शिर्क हो गया। और बाज़ लोग वे हैं जो तबर्रुकात ही को सब कुछ समझते हैं हालांकि हक़ इन दोनों के दरमियान में है। न तो इन्सान यह करे कि तबर्रुक को शिर्क का ज़रिया बना ले, और न ही तबर्रुक का ऐसा इन्कार करे कि बे अदबी तक पहुंच जाए, जिस चीज़ को अल्लाह वालों के साथ निस्बत हो जाए, अल्लाह तआला उसमें बर्कतें नाज़िल फ़रमाते हैं। एक वाक़िआ तो आपने अभी सुन लिया कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मश्कीज़े की जिस जगह से मुंह लगा कर पानी पिया था, उन सहाबिया ने उसको काट कर अपने पास रख लिया।

बर्कत वाले दिर्हम

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु को एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने चांदी के दिर्हम अता फ़रमाए। हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु ने उन दराहिम को सारी उमर न ख़र्च किया, और फ़रमाते कि ये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अता किये हुए हैं, वे उठा कर रख दिए यहां तक कि औलाद को वसिय्यत कर गये कि ये दराहिम हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम के अता किये हुए हैं इनको खर्च मत करना, बल्कि तबर्रुक के तौर पर इनको घर में रखना। चुनांचे एक लम्बी मुद्दत तक वे दराहिम उनके ख़ानदान में चलते रहे, एक दूसरे की तरफ़ मुन्तकिल होते रहे। यहां तक कि किसी हंगामे के मौके पर वे ज़ाया हो गए।

हुज़ूरे पाक का मुबारक पसीना

हज़रत उम्मे सलीम रज़ियल्लाहु अन्हा एक सहाबिया हैं, वह फ़रमाती हैं कि मैंने देखा कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम एक जगह सो रहे हैं, गर्मी का मौसम था, और अरब में गर्मी बहुत सख़्त पड़ती थी। इसलिये हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के जिस्म मुबारक से पसीना बह कर ज़मीन पर गिर रहा था। चुनांचे मैंने एक शीशी लाकर आपका मुबारक पसीना उसमें महफ़ूज़ कर लिया। फ़रमाती हैं कि वह पसीना इतना ख़ुश्बूदार था कि मुश्क व ज़ाफ़रान उसके आगे बे-हकीकत थे, और फिर मैंने उसको अपने घर में रख लिया, और जब घर में ख़ुश्बू इस्तेमाल करती तो उसमें से थोड़ा पसीना शामिल कर लेती और एक लम्बी मुद्दत तक मैंने उसको अपने पास महफ़ूज़ रखा।

हुज़ूरे पाक के मुबारक बाल

एक सहाबिया रज़ियल्लाहु अन्हा को कहीं से हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बाल मिल गए, वह फ़रमाती हैं कि मैंने उन बालों को एक शीशी के अन्दर डाल कर उसमें पानी भर दिया, और जब कबीले में कोई बीमार होता, तो उस पानी का एक कतरा दूसरे पानी में मिला कर उस बीमार को पिला देते, तो उसकी बर्कत से अल्लाह तआला शिफ़ा अता फ़रमा देते।

बहर हाल, सहाबा-ए-किराम ने इस तरीके से हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के तबर्रुकात का एहतिराम किया।

सहाबा-ए-किराम और तबर्रुकात

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि

मक्का मुकर्रमा से मदीना मुनव्वरा जाते हुए रास्ते में जिस जिस जगह पर ऐसी मन्ज़िल आती जहां हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने गुज़रते हुए कभी कियाम फरमाया था, तो वहां मैं उतरता और दो रक्अत नफ़िल अदा कर लेता, और फिर आगे रवाना होता।

बहर हाल, इस तरह सहाबा-ए-किराम ने हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के तबर्रुकात की हकीकत से भी वाकिफ़ थे, उन तबर्रुकात में हद से बढ़ना या मुबालग़ा करना या कमी ज़्यादती का उन से कोई इम्कान नहीं था। ऐसा नहीं था कि उन्हीं तबर्रुकात को वे सब कुछ समझ बैठते, उन्हीं को मुश्किल हल करने वाला या ज़रूरत पूरी करने वाला समझ बैठते, या उन तबर्रुकात को शिर्क का ज़रिया बना लेते या उन तबर्रुकात की पूजा शुरू कर देते।

बुत परस्ती की शुरूआत

अरब में बुत परस्ती का रिवाज भी हकीकत में इन तबर्रुकात में हद से बढ़ने के नतीजे में शुरू हुआ था, हज़रत इस्माईल अलै० की वालिदा हजरत हाजरा अलैहस्सलाम ने मक्का मुकर्रमा में बैतुल्लाह के पास कियाम किया। हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम वहीं पर पले बढ़े, जवान हुए और फिर बनी जुर्हम के लोग वहां आकर आबाद हो गए। जिसके नतीजे में मक्का मुकर्रमा की बस्ती आबाद हो गई, बाद में बनी जुर्हम की एक दूसरे कबीले वालों से लड़ाई हो गई। लड़ाई के नतीजे में दूसरे कबीले वालों ने बनी जुर्हम को मक्का मुकर्रमा से बाहर निकाल दिया। चुनांचे बनी जुर्हम के लोग वहां से हिजरत करने पर मजबूर हो गए। जब हिजरत करके जाने लगे तो यादगार के तौर पर किसी ने मक्का मुकर्रमा की मिट्टी उठा ली, किसी ने पत्थर उठा लिए, किसी ने बैतुल्लाह के आस पास की कोई और चीज उठा ली, ताकि ये चीजें हम अपने पास तबर्रुक और यादगार के तौर पर रखेंगे और इनको देख कर हम बैतुल्लाह शरीफ और मक्का मुकर्रमा को याद करेंगे, जब दूसरे इलाके में जाकर कियाम किया तो वहां पर

बड़े एहतिमाम से उन तबर्रुकात की हिफ़ाज़त करते थे। लेकिन रफ़्ता रफ़्ता जब पुराने लोग रुख़्सत हो गए और कोई रास्ता बताने वाला बाक़ी नहीं रहा तो बाद के लोगों ने रफ़्ता रफ़्ता उस मिट्टी और पत्थरों से कुछ सूरतें बना लीं, वे सूरतें बुतों की शक्ल में तैयार हो गयीं, और उन्ही की पूजा शुरू कर दी, अरब वालों के अन्दर यहीं से बुत परस्ती की शुरूआत हुई।

तबर्रुकात में ऐतदाल ज़रूरी है

बहर हाल, अल्लाह तआला बचाए, आमीन। अगर इन तबर्रुकात का एहतिराम हद के अन्दर न हो तो फिर शिर्क और बुत परस्ती तक नौबत पहुंच जाती है। न तो उनकी बे अदबी हो और न ही ऐसी ताज़ीम हो, जिसके नतीजे में इन्सान शिर्क में मुब्तला हो जाए या शिर्क की सर्हदों को छूने लगे, तबर्रुकात की हक़ीक़त यह है कि बर्कत के लिए उनको अपने पास रख ले, इसलिये कि जब एक चीज़ को किसी बुज़ुर्ग के साथ निस्बत होगी तो उस निस्बत की भी क़द्र करनी चाहिए। उस निस्बत की भी ताज़ीम और अदब करना चाहिए। मौलाना जामी रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि: मैं मदीना मुनव्वरा के साथ निस्बत रखने वाले कुत्ते का भी एहतिराम करता हूं, इसलिये कि उस कुत्ते को हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के शहर के साथ निस्बत हासिल है, ये सब इश्क़ की बातें होती हैं कि महबूब के साथ किसी चीज़ को ज़रा सी भी निस्बत हो गई तो उसका अदब और एहतिराम किया। और जब निस्बत की वजह से कोई शख़्स ताज़ीम करता है तो अल्लाह तआला उस पर भी अज्र व सवाब अता फ़रमाते हैं कि इसने मेरे महबूब की निस्बत की भी क़द्र की, बशर्ते कि हदों में रहे, हद से आगे न बढ़े, यह बात भी हमेशा समझने और याद रखने की है। इसलिये कि लोग कस्रत से इन चीज़ों में कमी बेशी की बातें करते हैं, और उसकी वजह से परेशानी का शिकार होते हैं। अल्लाह तआला हमें ऐतदाल (दरमियानी और सही रास्ते) में

रहने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

बैठ कर पानी पीना सुन्नत है

"عن انس رضی اللہ عنہ عن النبی صلی اللہ علیہ وسلم انہ نہی ان یشرب الرجل قائما" (مسلم شریف)

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने खड़े होकर पानी पीने से मना फ़र्माया।

इस हदीस की बुनियाद पर उलमा ने फ़रमाया कि जहां तक हो सके खड़े होकर पानी नहीं पीना चाहिए, और हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नते शरीफ़ा यानी आम आदत यह थी कि आप बैठ कर पानी पीते थे। इसलिये खड़े होकर पानी पीना मक्रूहे तन्ज़ीही है, मक्रूहे तन्ज़ीही का मतलब यह है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने खड़े होकर पानी पीने को ना पसन्द फ़रमाया। अगरचे कोई शख़्स खड़े होकर पानी पी ले तो कोई गुनाह नहीं, हराम नहीं, लेकिन ख़िलाफ़े अदब और ख़िलाफ़े औला है। और हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का ना पसन्दीदा है।

खड़े होकर पीना भी जायज़ है

यह बात भी समझ लें कि जब हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने किसी चीज़ से मना फ़रमाया, जब्कि वह चीज़ हराम और गुनाह भी नहीं है, तो ऐसे मौक़े पर आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने लोगों को बताने के लिए कभी कभार ख़ुद भी वह अमल करके दिखा दिया ताकि लोगों को मालूम हो जाए कि यह अमल गुनाह और हराम नहीं, चुनांचे हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से कई बार खड़े होकर पानी पीना भी साबित है। अभी मैंने हज़रत कब्शा रजियल्लाहु अन्हा के मश्कीज़े से पानी पीने का वाकिआ सुनाया। वह मश्कीज़ा दीवार के साथ लटका हुआ था और

आपने खड़े होकर मुंह लगा कर उस से पानी पिया, इसी वजह से उलमा ने फ़रमाया कि अगर कोई जगह ऐसी है जहां बैठने की गुन्जाइश नहीं है, ऐसे मौक़े पर अगर कोई शख़्स खड़े होकर पानी पी ले तो कोई हरज नहीं, बिला किराहत जायज़ है। और कभी कभी आपने सिर्फ़ यह बताने के लिए खड़े होकर पानी पिया कि खड़े होकर पानी पीना भी जायज़ है, चुनांचे हज़रत नज़ाल बिन सबरा रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि एक बार हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु "बाबुर्रुहबा" में तशरीफ़ लाए, "बाबुर्रुहबा" कूफ़े के अन्दर एक जगह का नाम है, वहां पर खड़े हो कर आपने पानी पिया और फ़रमाया कि:

"انی رأیت رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم فعل کما رأیتمونی فعلت"

(بخاری شریف)

यानी मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इसी तरह करते हुए देखा जिस तरह तुम ने मुझे देखा कि मैं खड़े होकर पानी पी रहा हूं।

बहर हाल, कभी कभी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने खड़े होकर पानी पीकर यह बता दिया कि यह अमल गुनाह नहीं।

बैठ कर पीने की फ़ज़ीलत

लेकिन अपनी उम्मत को जिसकी ताकीद फ़रमाई, और जिस पर सारी उम्र अमल फ़रमाया, वह यह था कि जहां तक हो सके बैठ कर ही पानी पीते थे, इसलिये यह बैठ कर पानी पीना हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की अहम सुन्नतों में से है। और जो शख़्स इसका जितना एहतिमामा करेगा इन्शा अल्लाह उस पर उसको अज्र व सवाब और उसकी फ़ज़ीलत और बर्कतें हासिल होंगी, इसलिये खुद भी इसका एहतिमाम करना चाहिए और दूसरों से भी इसका एहतिराम कराना चाहिए, अपने घर वालों को बताना चाहिए, अपने बच्चों को इसकी तालीम देनी चाहिए और बच्चों के दिल में यह

बात बिठानी चाहिए कि जब भी पानी पियो तो बैठ कर पियो। अगर इन्सान इसकी आदत डाल ले तो मुफ़्त का सवाब हासिल हो जायेगा। इसलिये कि इस अमल में कोई ख़ास मेहनत और मशक़्क़त नहीं है। अगर आप पानी खड़े होकर पीने के बजाए बैठ कर पी लें तो इसमें क्या हरज और मशक़्क़त लाज़िम आ जायेगी? लेकिन जब सुन्नत की इत्तिबा की नियत करके पानी बैठ कर पी लिया तो इत्तिबा–ए–सुन्नत का बहुत बड़ा अज्र व सवाब हासिल हो जायेगा।

सुन्नत की आदत डाल लो

हमारे हज़रत डा० अब्दुल हई साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि एक बार मैं एक मस्जिद में नमाज़ पढ़ने के लिए गया, वहां पानी पीने की ज़रूरत पेश आई, मस्जिद में मटके रखे थे, मैंने मटके से पानी निकाला और अपनी आदत के मुताबिक़ एक जगह बैठ कर पानी पीने लगा, एक साहिब यह सब कुछ देख रहे थे, वह क़रीब आए और कहा, यह आपने बैठने का इतना एहतिमाम किया, इसकी क्या ज़रूरत थी? खड़े होकर ही पी लेते, मैंने सोचा कि अब मैं इन से क्या बहस करूं, मैंने कहा कि असल में हमेशा से बैठ कर पानी पीने की आदत पड़ी हुई है, उस शख़्स ने कहा कि यह आपने अजीब बात फ़रमाई कि आदत पड़ गई, अरे सुन्नते रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की आदत पड़ जाना कोई मामूली बात है? बहर हाल, आदतें तो इन्सान बहुत सी डाल लेता है, लेकिन जब आदत डाले तो सुन्नत की आदत डाले, ताकि उस पर अज्र व सवाब भी हासिल हो जाए।

नेकी का ख़्याल अल्लाह तआला का मेहमान है

हमारे हज़रत मौलाना मसीहुल्लाह ख़ां साहिब जलालाबादी रह० फ़रमाया करते थे कि जब दिल में किसी नेक काम करने या किसी सुन्नत पर अमल करने का ख़्याल आए, तो उस "ख़्याल" को सूफ़िया– ए–किराम "वारिद" कहते हैं। यह "वारिद" अल्लाह तआला

की तरफ़ से भेजा हुआ मेहमान है, उस मेहमान का इक्राम करो और उसकी कद्र पहचानो, जैसे जब आपने खड़े होकर पानी पीना शुरू किया तो उस वक़्त दिल में ख़्याल आया कि खड़े होकर पानी पीना अच्छी बात नहीं है, सुन्नत के ख़िलाफ़ है, बैठ कर पानी पीना चाहिए, अगर आपने इस ख़्याल और "वारिद" का इक्राम करते हुए बैठ कर पानी पी लिया तो यह मेहमान बार बार आयेगा, आज उसने तुम्हें बिठा कर पानी पिला दिया तो कल को किसी और सुन्नत पर अमल करायेगा, परसों किसी और नेकी पर अमल करायेगा। इस तरह यह तुम्हारी नेकियों में इज़ाफ़ा कराता चला जायेगा। लेकिन अगर तुम ने अल्लाह तआला के इस मेहमान की ना क़द्री की। जैसे पानी पीते वक़्त बैठ कर पानी पीने का ख़्याल आया तो तुम ने फ़ौरन इस ख़्याल को यह कह कर झटक दिया कि बैठ कर पीना कौन सा फ़र्ज़ व वाजिब है, खड़े होकर पीना गुनाह तो है नहीं, चलो खड़े खड़े पानी पी लो। अब तुम ने उस मेहमान की ना कद्री की और उसको वापस भेज दिया, और अगर चन्द बार तुम ने उसकी इस तरह ना क़द्री की तो फिर यह आना बन्द कर देगा। और जब यह मेहमान आना बन्द कर देगा तो इसका मतलब यह है कि दिल सियाह हो गया है और दिल पर मुहर लग गई है, जिसके नतीजे में अब नेकी का ख़्याल भी नहीं आता, बल्कि बुराई और गुनाह के ख़्याल आते हैं। इसलिये जब कभी इत्तिबा-ए-सुन्नत का ख़्याल आए तो फ़ौरन उस पर अमल कर लो। शुरू शुरू में थोड़ी तक्लीफ़ होगी लेकिन आहिस्ता आहिस्ता जब आदत पड़ जायेगी तो फिर आसान हो जायेगा।

ज़मज़म का पानी किस तरह पिया जाए?

"عن ابن عباس رضی الله عنهما قال: سقیت النبی صلی الله علیه وسلم من زمزم، فشرب وهو قائم" (بخاری شریف)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि मैंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को ज़म्ज़म का पानी पिलाया तो आपने खाड़े होकर वह ज़म्ज़म पिया।

इस हदीस की वजह से बाज़ उलमा का ख़्याल यह है कि ज़म्ज़म का पानी बैठ कर पीने के बजाए खड़े होकर पीना अफ़्ज़ल और बेहतर है, चुनांचे यह बात मशहूर है कि दो पानी ऐसे हैं कि जो खड़े होकर पीने चाहिएं। एक ज़म्ज़म का पानी, और एक वुज़ू का बचा हुआ पानी, इसलिये कि वुज़ू से बचा हुआ पानी पीना भी मुस्तहब है। लेकिन दूसरे उलमा यह फ़रमाते हैं कि अफ़्ज़ल यह है कि ये दोनों पानी भी बैठ कर पीने चाहिएं। जहां तक हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ि० की इस हदीस का ताल्लुक़ है कि इसमें हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ज़म्ज़म का पानी खड़े होकर पिया, इसकी वजह यह थी कि एक तरफ़ तो ज़म्ज़म का कुआं और दूसरी तरफ़ लोगों की भीड़, और कुएं के चारों तरफ़ कीचड़, क़रीब में कहीं बैठने की जगह भी नहीं थी इसलिये आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने खड़े होकर पानी पी लिया, इसलिये इस हदीस से यह लाज़िम नहीं आता कि ज़म्ज़म का पानी खड़े होकर पीना अफ़्ज़ल है।

ज़म्ज़म और वुज़ू का बचा हुआ पानी बैठ कर पीना अफ़्ज़ल है

मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि की तहक़ीक़ यही थी कि ज़म्ज़म का पानी बैठ कर पीना अफ़्ज़ल है। इसी तरह वुज़ू का बचा हुआ पानी भी बैठ कर पीना अफ़्ज़ल है, लेकिन उज़्र के मौक़े पर जिस तरह आम पानी खड़े होकर पीना जायज़ है इसी तरह ज़म्ज़म और वुज़ू से बचा हुआ पानी भी खड़े होकर पीना जायज़ है। आम तौर पर लोग यह करते

है कि अच्छे ख़ासे बैठे हुए थे लेकिन जब ज़मज़म का पानी दिया गया तो एक दम से खड़े हो गये, और खड़े होकर उसको पिया, इतना एहतिमाम करके खड़े होकर पीने की ज़रूरत नहीं, बल्कि बैठकर पीना चाहिए, वही अफ़ज़ल है।

खड़े होकर खाना

"عن انس رضی اللہ عنہ عن النبی صلی اللہ علیہ وسلم انہ نہی ان یشرب الرجل قائما: قال قتادۃ: فقلنا لا نس: فالا کل؟ قال: ذلك اشراواخبث"

(مسلم شریف)

हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने खड़े होकर पानी पीने से मना फ़रमाया, हज़रत क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हमने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से पूछा कि खड़े होकर खाने का क्या हुक्म है? हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि खड़े होकर खाना तो इस से भी ज़्यादा बुरा और इस से भी ज़्यादा ख़बीस है।

यानी खड़े होकर पानी पीने के मुक़ाबले में खड़े होकर खाना इस से ज़्यादा बुरा है। चुनांचे इसी हदीस की बुनियाद पर बाज़ उलमा ने फ़रमाया कि खड़े होकर पीना तो मक्रूहे तन्ज़ीही है और खड़े होकर खाना मक्रूहे तहरीमी और ना जायज़ है। इसलिये कि खड़े होकर खाने को हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु ने ज़्यादा ख़बीस और बुरा तरीक़ा फ़रमाया।

खड़े होकर खाने से बचिए

बाज़ लोग खड़े होकर खाने के जायज़ होने पर हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु की उस हदीस से दलील पकड़ते हैं जिस में उन्हों ने फ़रमाया कि हम हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने में चलते हुए भी खा लेते थे, और खड़े होकर पानी पी लेते थे। यह हदीस लोगों को बहुत याद रहती है, और इसकी बुनियाद पर यह कहते हैं कि जब

सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम खड़े होकर खा लेते थे तो हमें खड़े होकर खाने से क्यों मना किया जा रहा है?

ख़ूब समझ लें अभी आपने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु की हदीस सुन ली कि खड़े होकर खाना ज़्यादा ख़बीस और ज़्यादा बुरा तरीक़ा है। यानी ऐसा करना ना जायज़ है, इस हदीस से मुराद वह खाना है जो बा क़ायदा खाया जाता है। जहां तक हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा की हदीस का ताल्लुक़ है, तो इसका मतलब यह है कि वह चीज़ जिसको बा क़ायदा बैठ कर दस्तरख़्वान बिछा कर नहीं खाया जाता, बल्कि कोई छोटी सी मामूली सी चीज़ है, जैसे चाकलेट है, या छुवारा है, या बादाम है वग़ैरह, या कोई फल चखने के तौर पर खा लिया, इसमें चलते फिरते खाने में कोई हरज नहीं, लेकिन जहां तक दोपहर के खाने और रात के खाने ,लंच और डिनर का ताल्लुक़ है कि उनको खड़े होकर खाना और खड़े होकर खाने का बाक़ायदा एहतिमाम करना किसी तरह जायज़ नहीं। आज कल की दावतों में खड़े होकर खाने का तरीक़ा आम होता जा रहा है इस से बचना चाहिए। इसलिये कि यह इन्सानों का तरीक़ा नहीं है, बल्कि जानवरों का तरीक़ा है। हज़रत वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि यह तो चरने का तरीक़ा है, खाने का यह तरीक़ा नहीं है। कभी इधर से चर लिया, कभी उधर से चर लिया। और फिर इस तरीक़े में बे-तहज़ीबी है, बे सलीक़ा पन भी है और मोमिनों की बे-इज़्ज़ती भी है, खुदा के लिए इस तरीक़े को छोड़ने की फ़िक्र करें। ज़रा से एहतिमाम की ज़रूरत है।

कुछ लोग यह कहते हैं कि इस तरीक़े में किफ़ायत शिआ़री है। इसलिये कि कुर्सियों का किराया बच जाता है, और कम जगह पर ज़्यादा काम हो जाता है। इसका मतलब यह है कि बाक़ी सब जगहों पर किफ़ायत रखी जाती है। हालांकि बिला वजह रोशनी का एहतिमाम हो रहा है, फ़ुज़ूल लाईटिंग हो रही है। वहां किफ़ायत का

ख़्याल नहीं आता। इसके अलावा फ़ुज़ूल रस्मों में बे-पनाह रक़म ख़र्च कर दी जाती है, वहां किफ़ायत शिआरी का ख़्याल नहीं आता, सारी किफ़ायत शिआरी का ख़्याल खड़े होकर खाने में आ जाता है। हक़ीक़त यह है कि सिवाए फ़ैशन परस्ती के और कोई मक़्सद इस में नहीं होता। इसलिये एहतिमाम करके इस से बचें, और आज ही इस बात का पक्का इरादा कर लें कि चाहे बिठा कर खिलाने में कितना ही पैसा ज़्यादा ख़र्च हो जाए मगर खड़े होकर नहीं खिलायेंगे। अपने यहां से इस तरीक़े के रिवाज को ख़त्म करें, ताकि यह ख़बीस तरीक़ा हमारे यहां से निकल जाए। अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल व करम से हम सब को इस से बचने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

واخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

दावत के आदाब

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا. اَمَّا بَعْدُ:

"عن ابی هريرة رضی الله عنه قال: قال رسول الله صلی الله عليه وسلم: اذا دعی احد كم فليجب، فان كان صائما فليصل، وان كان مفطرا فليطعم" (ترمذی شريف)

दावत क़ुबूल करना मुसलमान का हक़ है

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि जब तुम में से किसी की दावत की जाए तो उसे चाहिए कि वह उस दावत को क़ुबूल कर ले, अब अगर वह शख़्स रोज़े से है तो उसके हक़ में दुआ कर दे, यानी उसके घर जाकर उसके हक़ में दुआ कर दे, और अगर रोज़े से नहीं है तो उसके साथ खाना खा ले।

इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुसलमान की दावत क़ुबूल करने की ताकीद फ़रमाई, और दावत के क़ुबूल करने को मुसलमानों के हुक़ूक़ में शुमार फ़रमाया। एक दूसरी हदीस में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि:

"حق المسلم علی المسلم خمس، رد السلام، تشميت العاطس، اجابت الدعوة، اتباع الجنائز وعيادة المريض" (بخاری شريف)

यानी एक मुसलमान के दूसरे मुसलमान पर पांच हक़ हैं। नम्बर एक उसके सलाम का जवाब देना, दूसरे अगर किसी को छींक आए, तो उसके जवाब में "यर्हमुकल्लाह" कहना, तीसरे अगर कोई

मुसलमान दावत करे तो उसकी दावत को कुबूल करना, चौथे अगर किसी मुसलमान का इन्तिकाल हो जाए तो उसके जनाज़े के पीछे जाना, पांचवे अगर कोई मुसलमान बीमार हो जाए तो उसकी मिज़ाज पुर्सी करना।

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक मुसलमान के दूसरे मुसलमान पर ये पांच हुकूक बयान फरमाए, इन में से एक हक दावत कुबूल करने का भी है। इसलिये हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि अगर तुम में से किसी शख़्स को दावत दी जाए तो उसको कुबूल करना चाहिए।

दावत कुबूल करने का मक्सद

और इस नियत से दावत कुबूल करना चाहिए कि यह मेरा भाई है, और यह मुझे मुहब्बत से बुला रहा है। उसकी मुहब्बत की कद्र दानी हो जाए और उसका दिल खुश हो जाए। दावत कुबूल करना सुन्नत है, और अज्र व सवाब का सबब है। यह न हो कि खाना अच्छा हो तो कुबूल कर ले, और खाना अच्छा न हो तो कुबूल न करे, बल्कि दावत कुबूल करने का मक्सद और मन्शा यह है कि मेरे भाई का दिल खुश हो जाए, चुनांचे एक हदीस में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि:

"ولو دعيت الى كراع لقبلت" (بخاری شریف)

यानी अगर कोई शख़्स बकरी के पाए की भी दावत करेगा तो मैं उसको कुबूल करूंगा।

आज कल अगरचे पाए की दावत को उम्दा समझा जाता है, लेकिन उस ज़माने में पाए को बहुत मामूली चीज़ समझा जाता था। इसलिये दावत देने वाला मुसलमान ग़रीब ही क्यों न हो, तुम उसकी दावत इस नियत से कुबूल कर लो कि यह मेरा भाई है, इसका दिल खुश हो जाए, ग़रीब और अमीर का फ़र्क न होना चाहिए कि अगर अमीर आदमी दावत दे रहा है तो कुबूल कर ली जाए, और अगर

कोई मामूली हैसियत का ग़रीब आदमी दावत दे रहा है तो उसको टाल दिया। बल्कि ग़रीब आदमी इस बात का ज़्यादा हक़दार है कि उसकी दावत कुबूल की जाए।

दाल और खुश्के में नूरानियत

मैंने अपने वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि से कई बार यह वाक़िआ सुना कि देवबन्द में एक साहिब घसियारे थे, यानी घास काट कर बाज़ार में फ़रोख़्त करते और उसके ज़रिये अपना गुज़र बसर करते थे, और एक हफ़्ते में उनकी आमदनी छः पैसे होती थी। अकेले आदमी थे, और उस आमदनी को वह इस तरह तक़्सीम करते कि उसमें से दो पैसे अपने खाने वग़ैरह पर ख़र्च करते थे, और दो पैसे अल्लाह की राह में सदक़ा किया करते थे, और दो पैसे जमा करते थे, और एक दो महीने के बाद जब कुछ पैसे जमा हो जाते तो उस वक़्त दारुल उलूम देवबन्द के जो बड़े बड़े बुज़ुर्ग उस्ताज़ थे उनकी दावत किया करते थे, और दावत में ख़ुश्क चावल उबाल लेते और उसके साथ दाल पका लेते, और उस्ताज़ हज़रात को खिला देते थे। मेरे वालिद साहिब फ़रमाया करते थे कि उस वक़्त दारुल उलूम देवबन्द के सदर मुदर्रिस (प्रिंसिपल) हज़रत मौलाना मुहम्मद याक़ूब साहिब नानौतवी रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते थे कि हमें पूरे महीने इन साहिब की दावत का इन्तिज़ार रहता है, इस लिये कि इन साहिब के ख़ुश्के और दाल की दावत में जो नूरानियत महसूस होती है वह नूरानियत पुलाव और ब्रियानी की बड़ी बड़ी दावतों में महसूस नहीं होती।

दावत की हक़ीक़त "मुहब्बत का इज़्हार"

इसलिये दावत की हक़ीक़त "मुहब्बत का इज़्हार" है और उसके कुबूल करने की भी हक़ीक़त "मुहब्बत का इज़्हार" है, अगर मुहब्बत से किसी ने तुम्हारी दावत की है, मुहब्बत से तुम भी कुबूल कर लो,

चुनांचे हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह मामूल था कि कभी किसी की दावत को रद्द नहीं फ़रमाते थे, दावत देने वाला चाहे मामूली आदमी ही क्यों न होता, यहां तक कि कभी कभी मामूली शख़्स की दावत पर आपने मीलों का सफ़र किया। तो दावत की हक़ीक़त यह है कि मुहब्बत से की जाए, और मुहब्बत से क़ुबूल की जाए, इख़्लास से दावत की जाए, इख़्लास से क़ुबूल की जाए, तब यह दावत नूरानियत रखती है, सुन्नत है और अज्र व सवाब का सबब है।

दावत या अदावत

लेकिन आज कल हमारी दावतें रस्मों के ताबे होकर रह गयी हैं। रस्म के मौके पर दावत होगी, उसके अलावा नहीं होगी, अब अगर दावत क़ुबूल करे तो मुसीबत, क़ुबूल न करे तो मुसीबत। इसी लिए हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि दावत हो अदावत (यानी दुश्मनी) न हो, यानी ऐसा तरीक़ा इख़्तियार न करो कि वह दावत उसके लिए अज़ाब और मुसीबत बन जाए। जैसा कि बाज़ लोग करते हैं। उनके दिमाग़ में यह बात आ गई कि फ़लां की दावत करनी चाहिए, न इस बात का ख़्याल किया कि उनके पास वक़्त है या नहीं? बस बार बार दावत क़ुबूल करने पर ज़िद कर रहे हैं। चाहे उस दावत की ख़ातिर कितनी ही मुसीबत उठानी पड़े, यह दावत नहीं बल्कि यह तो उसके साथ अदावत और दुश्मनी है। अगर दावत के ज़रिए तुम उसके साथ मुहब्बत का इज़्हार करना चाहते हो तो इस मुहब्बत का पहला तक़ाज़ा यह है कि जिस की दावत कर रहे हो उसको राहत पहुंचाने की फ़िक्र करो, उसको आराम पहुंचाने की फ़िक्र करो, न यह कि उस पर मुसीबत डाल दो।

आला दर्जे की दावत

हकीमुल उम्मत हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि दावत की तीन क़िस्में होती हैं। एक सब से आला, दूसरे

दरमियानी, तीसरे अदना, आज कल के माहौल में सब से आला दावत यह है कि जिस की दावत करनी हो उसको जाकर नक़द हदिया पेश कर दो, और नक़द हदिया पेश करने का नतीजा यह होगा कि उसको कोई तक्लीफ़ तो उठानी नहीं पड़ेगी, और फिर नक़द हदिये में उसको इख़्तियार होता है कि चाहे उसको खाने पर ख़र्च करे या किसी और ज़रूरत में ख़र्च करे, इस से उस शख़्स को ज़्यादा राहत और ज़्यादा फ़ायदा होगा, और तक्लीफ़ उसको ज़र्रा बराबर भी नहीं होगी। इसलिये यह दावत से सब से आला है।

दरमियानी दर्जे की दावत

दूसरे नम्बर की दावत यह है कि जिस शख़्स की दावत करना चाहते हो, खाना पका कर उसके घर भेज दो। यह दूसरे नम्बर पर इसलिये है कि खाने का क़िस्सा हुआ और उसको खाने के अलावा कोई और इख़्तियार नहीं रहा, लेकिन उस खाने पर उसको कोई ज़हमत और तक्लीफ़ नहीं उठानी पड़ी। अपने घर बुलाने की ज़हमत उसको नहीं दी बल्कि घर पर ही खाना पहुंचा दिया।

अदना दर्जे की दावत

तीसरे नम्बर की दावत यह है कि उसको अपने घर बुला कर खाना खिलाओ, आज कल के शहरी माहौल में जहां ज़िन्दगियां मसरूफ़ हैं, फ़ासले ज़्यादा हैं, उसमें अगर आप किसी शख़्स को दावत दें और वह तीस मील के फ़ासले पर रहता है, तो आप की दावत क़ुबूल करने का मतलब यह है कि वह दो घन्टे पहले घर से निकले, पचास रुपये ख़र्च करे और फिर तुम्हारे यहां आकर खाना खाए। तो यह आपने उसको राहत पहुंचाई या तक्लीफ़ में डाल दिया? लेकिन अगर इसके बजाए खाना पका कर उसके घर भेज देते, या उसको नक़द रक़म दे देते, उस में उसके साथ ज़्यादा ख़ैर ख़्वाही होती।

दावत का अनोखा वाकिआ

हमारे एक बुज़ुर्ग गुज़रे हैं हज़रत मौलाना मुहम्मद इदरीस साहिब कांधलवी रह्मतुल्लाहि अलैहि, अल्लाह तआला उनके दर्जों को बुलन्द फ़रमाए, आमीन। मेरे वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अलैहि के बहुत गहरे दोस्तों में से थे, लाहौर में कियाम था, एक बार कराची तश्रीफ़ लाए तो दारुल उलूम कोरंगी में हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि से मिलने के लिए भी तश्रीफ़ लाए, चूंकि अल्लाह वाले बुज़ुर्ग थे और वालिद साहिब के बहुत मुख़्लिस दोस्त थे इसलिये उनकी मुलाकात से वालिद साहिब बहुत खुश हुए, सुबह दस बजे के करीब दारुल उलूम पहुंचे थे, वालिद साहिब ने उनसे पूछा कि कहां कियाम है? फ़रमाया कि आगरा कालोनी में एक साहिब के यहां कियाम है। कब वापस तश्रीफ़ ले जायेंगे? फ़रमाया कल इन्शा अल्लाह वापस लाहौर रवाना हो जाऊंगा। बहर हाल कुछ देर बात चीत और मुलाकात के बाद जब वापस जाने लगे तो वालिद साहिब ने उनसे फ़रमाया कि: भाई मौलवी इदरीस तुम इतने दिनों के बाद यहां आए हो, मेरा दिल चाहता है कि तुम्हारी दावत करूं, लेकिन मैं यह सोच रहा हूं कि तुम्हारा कियाम आगरा ताज कालोनी में है, और मैं यहां कोरंगी में रहता हूं, अब अगर मैं आप से यह कहूं कि फ़लां वक़्त मेरे यहां आकर खाना खायें तब तो आपको मैं मुसीबत में डाल दूंगा, इसलिये कल आपको वापस जाना है, काम बहुत से होंगे इसलिये दिल इस बात को गवारा नहीं करता कि आपको दोबारा यहां आने की तक्लीफ़ दूं। लेकिन यह भी मुझे गवारा नहीं कि आप तश्रीफ़ लायें और बगैर दावत के आपको रवाना कर दूं। इसलिये मेरी तरफ़ से दावत के बदले ये सौ रुपये हदिया रख लें। मौलाना इदरीस साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि ने वह सौ का नोट सर पर रख लिया और फ़रमाया कि यह तो आपने मुझे बहुत बडी नेमत अता

फ़र्मा दी, आपकी दावत का शर्फ़ भी हासिल हो गया और कोई तक्लीफ़ भी उठानी नहीं पड़ी। और फिर इजाज़त लेकर रवाना हो गये।

मुहब्बत का तक़ाज़ा "राहत पहुंचाना"

यह है बे तकल्लुफ़ी और राहत पहुंचाना। हज़रत मुफ़्ती साहिब की जगह कोई और होता तो वह यह कहता कि "यह नहीं हो सकता कि आप लाहौर से कराची तश्रीफ़ लायें और मेरे घर दावत खाये बग़ैर चले जायें, इस वक़्त आप वापस जायें और दूसरे वक़्त तश्रीफ़ लायें और खाना खा कर जाएं। चाहे उसके लिए सौ मुसीबतें उठानी पड़ें।" और मौलाना इदरीस साहिब की जगह कोई और होता तो वह यह कहता कि "मैं तुम्हारी दावत का भूखा हूं मैं फ़क़ीर हूं जो तुम मुझे पैसे दे रहे हो कि इसका खाना खा लेना" याद रखो, मुहब्बत का तक़ाज़ा यह है कि जिस से मुहब्बत की जा रही है उसको राहत और आराम पहुंचाने की कोशिश की जाए, न यह कि उसको तक्लीफ़ में डाला जाए। मेरे बड़े भाई ज़की कैफ़ी मरहूम अल्लाह तआला उनके दर्जे बुलन्द फ़रमाए, आमीन। शेर बहुत अच्छे कहा करते थे, उनका एक बहुत ख़ूबसूरत शेर है कि:

मेरे महबूब मेरी ऐसी वफ़ा से तौबा
जो तेरे दिल की कदूरत का सबब बन जाए

ऐसी वफ़ादारी और ऐसा इज़्हारे मुहब्बत जिस से तक्लीफ़ हो, जिस से दिल में कदूरत (रंजिश) पैदा हो जाए, मैं ऐसी वफ़ादारी और मुहब्बत से तौबा करता हूं।

जब भाई साहिब ने यह शेर कहा तो मैंने उनसे अर्ज़ किया कि आपके इस शेर ने बिद्अ़त की जड़ काट दी, इसलिये कि सारी बिद्अ़तें इसी से पैदा होती हैं कि आदमी अपनी तरफ़ से वफ़ादारी के तरीक़े घड़ कर उस पर अमल शुरू कर देता है, और उसको यह

पता नहीं होता कि वफ़ादारी का यह तरीक़ा मेरे महबूब के दिल की कदूरत और दिल दुखाने का सबब बन रहा है।

दावत करना एक फ़न है

बहर हाल, दावत करना एक फ़न है, ऐसी दावत करो जिस से वाक़ई राहत पहुंचे, जिस से आराम मिले, न यह कि दूसरे के लिए तक्लीफ़ का सबब बन जाए। दूसरे यह कि दावत का मन्शा तो मुहब्बत का इज़्हार है, मुहब्बत के तक़ाज़े पर अमल करना है। उस दावत का रस्मों से कोई ताल्लुक़ नहीं, जैसे यह रस्म है कि अक़ीक़े के मौक़े पर दावत की जाती है, या तीजे दसवें और चालीसवें के मौक़े पर दावत की जाती है, इस रस्म के मौक़े पर दावत करेंगे, फ़लां को बुलायेंगे। याद रखिए, इन रस्मी दावतों का हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत से कोई ताल्लुक़ नहीं, दावत तो वह है जो खुले दिल से किसी क़ैद और शर्त के बग़ैर किसी रस्म के बग़ैर आदमी दूसरे की दावत करे।

ये बातें तो दावत करने के बारे में थीं, जहां तक दावत क़ुबूल करने का ताल्लुक़ है, इसके बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि एक मुसलमान का दूसरे मुसलमान पर हक़ है कि उसकी दावत को क़ुबूल करे, लेकिन दावत क़ुबूल करने का मतलब यह है कि दावत क़ुबूल करने वाले का मन्शा उसकी मुहब्बत और क़द्र दानी हो, और उसका मक़्सद यह न हो कि अगर मैं इस दावत में शरीक नहीं हुआ तो ख़ानदान में मेरी नाक कट जायेगी, और इस ख़्याल के साथ शरीक हुआ तो फिर वह दावत क़ुबूल करना सुन्नत नहीं रहेगा, यह दावत मस्नून उस वक़्त होगी जब शिर्कत से मक़्सद यह हो कि मेरे जाने से उसका दिल ख़ुश हो जायेगा।

दावत क़ुबूल करने की शर्त

फिर दावत क़ुबूल करने की एक शर्त है, वह यह कि दावत

कुबूल करना उस वक़्त सुन्नत है जब उस दावत कुबूल करने के नतीजे में आदमी किसी ना फ़रमानी और गुनाह में मुब्तला न हो, जैसे ऐसी जगह की दावत कुबूल कर ली जहां बड़े गुनाह का जुर्म हो रहा है। अब एक सुन्नत पर अमल करने के लिए गुनाहे कबीरा का अमल किया जा रहा है, ऐसी दावत कुबूल करना सुन्नत नहीं, आज कल की अक्सर दावतें ऐसी हैं जिन में यह मुसीबत पाई जाती है, उनमें ना फ़रमानियां हो रही हैं, शरीअत के मना किये हुए काम हो रहे हैं, गुनाहों का इर्तिकाब हो रहा है। शादी के कार्ड पर लिखा होता है "वलीमा मस्नूना" यह तो मालूम है कि वलीमा करना सुन्नत है, लेकिन किस तरह यह वलीमा मसनून किया जाए? इसका तरीक़ा क्या है? यह मालूम नहीं। चुनांचे वलीमा मस्नूना के अन्दर बे-पर्दगी हो रही है, मर्दों और औरतों का मिला जुला इज्तिमा है, गुनाहों के काम हो रहे हैं।

कब तक हथियार डालोगे?

यह सब क्यों हो रहा है? इसलिये कि हम लोग इन रस्मों और गुनाहों के सामने हथियार डालते जा रहे हैं, और हथियार डालते डालते अब इस मकाम पर पहुंच गये कि ख़राबियां, गुनाह, बुराइयां समाज में फैल कर राइज हो गये हैं। अगर किसी वक़्त कोई अल्लाह का बन्दा स्टैन्ड लेकर ख़ानदान वालों से यह कहता कि अगर यह गुनाह का काम होगा तो मैं इस दावत में शरीक नहीं हूंगा, तो इस बात कह उम्मीद थी कि इतनी तेज़ी से बुराइयां न फैलती, आज जब लोगों से कहा जाता है कि जिस दावत में मर्दों और औरतों का मिला जुला इज्तिमा हो, उसमें शिर्कत मत करो, तो ये लोग जवाब देते हैं कि अगर हमने शिर्कत न की तो ख़ानदान से और समाज से कट जायेंगे, मैं कहता हूं कि अगर गुनाहों से बचने के लिए अल्लाह की ख़ातिर ख़ानदान से कटना पड़े तो कट जाओ, यह कटना तुम्हारे लिए मुबारक है, और अगर कोई तुम्हारी दावत करना चाहता है तो

उसको चाहिए कि वह तुम्हारे उसूल का भी कुछ ख़्याल करे, जो शख़्स तुम्हारे उसूल का ख़्याल नहीं रखता उसकी दावत कुबूल करना तुम्हारे ज़िम्मे कोई ज़रूरी नहीं।

अगर एक बार कुछ लोग स्टैन्ड ले लें और अपने ख़ानदान वालों से साफ़ साफ़ कह दें कि हम मर्दों और औरतों की इकट्ठी दावतों में शरीक नहीं होंगे, अगर हमें बुलाना चाहते हो तो मर्दों और औरतों का इन्तिज़ाम अलग अलग करो, फिर देखोगे कि कुछ वक़्त के अन्दर इसकी बहुत इस्लाह हो सकती है, अभी यह सैलाब इतना आगे नहीं बढ़ा। लेकिन असल बात यह है कि जो आदमी दीन पर अमल करना चाहता है, वह यह बात कहते हुए शर्माता है, वह इस से डरता है कि अगर मैंने यह बात कही तो लोग मुझे बैक वर्ड (Bake Ward) समझेंगे, पिछड़ा और रजअ़त पसन्द समझेंगे। और इसके उलट जो शख़्स बे दीनी और आज़ादी के रास्ते पर चलता है, वह सीना तान कर फ़ख़्र के साथ अपनी आज़ादी और बे दीनी की तरफ़ दावत देता है। अब तो शादी और दूसरी तक़रीबात की दावतों में यहां तक नौबत आ गई है कि नौजवान लड़कियां मर्दों के सामने नाच पेश करने लगी हैं, मगर फिर भी ऐसी दावतों में लोग शरीक हो रहे हैं, कहां तक इस सैलाब में बहते जाओगे? कहां तक ख़ानदान वालों का साथ दोगे? अगर यही सिलसिला चलता रहा तो कोई बईद नहीं कि पश्चिमी तहज़ीब की लानतें हमारे समाज पर भी पूरी तरह मुसल्लत हो जायें। कोई हद तो होगी जहां जाकर तुम्हें रुकना पड़ेगा। इसलिये अपने लिए कुछ ऐसे उसूल बना लो, जैसे जिस दावत में खुली बुराइयों का जुर्म होगा वहां हम शरीक नहीं होंगे। या जिस दावत में मिली जुली महफ़िल होगी, हम शरीक नहीं होंगे, अगर अब भी अल्लाह के कुछ बन्दे स्टैन्ड ले लें तो इस सैलाब पर बन्द लग सकता है।

पर्दे वाली औरत अछूत बन जाए?

कभी कभी यह सोचते हैं कि तक़रीबात में पर्दा करने वाली औरतें

इक्का दुक्का ही होती हैं, तो उनके लिए हम अलग इन्तिज़ाम कर देंगे। ज़रा सोचो, क्या तुम इस पर्दा दार ख़ातून को अछूत बनाना चाहते हो? वह सब से अलग अछूत बन कर बैठी रहे, अगर एक बे पर्दा औरत है, वह अगर मर्दों से अलग पर्दे में हो जाए तो उसका क्या नुक़सान हुआ? लेकिन एक पर्दा दार बेपर्दा होकर मर्दों के सामने चली जायेगी तो उसका तो दीन ग़ारत हो जायेगा, इसलिये मर्दों और औरतों के अलग इन्तिज़ाम करने में कोई परेशानी नहीं है, बस सिर्फ़ तवज्जोह देने की बात है, सिर्फ़ एहतिमाम करने और उस पर डट जाने की बात है।

दावत क़ुबूल करने का शरई हुक्म

और शरई मस्अला यह है कि जिस दावत के बारे में पहले से यह मालूम हो कि इस दावत में फ़लां गुनाहे कबीरा का जुर्म होगा और अन्देशा यह हो कि मैं भी उस गुनाह में मुब्तला हो जाऊंगा, उस दावत में शिर्कत करना जायज़ नहीं, और जिस दावत के बारे में यह ख़्याल हो कि उस दावत में फ़लां गुनाह तो होगा लेकिन मैं अपने आपको उस गुनाह से बचा लूंगा, ऐसी दावत में आम आदमी को शिर्कत की गुन्जाइश है। लेकिन जिस आदमी की तरफ़ लोगों की निगाहें होती हैं, और जिनकी लोग पैरवी करते हैं, ऐसे आदमी के लिए किसी हाल में भी ऐसी दावत में शिर्कत करना जायज़ नहीं। और यह दावत क़ुबूल करने का अहम उसूल है, दावत क़ुबूल करने का मतलब यह नहीं कि आदमी उसकी वजह से गुनाहों का अमल करे।

दावत के लिए नफ़्ली रोज़ा तोड़ना

इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह भी फ़रमा दिया कि जिस शख़्स की दावत की गई है, अगर वह रोज़ेदार है, और रोज़े की वजह से खाना नहीं खा सकता तो वह मेज़बान के हक़ में दुआ कर दे। फ़ुक़हा-ए-किराम ने तो यहां तक

लिखा है कि अगर नफ़्ली रोज़ा किसी ने रखा है, और उसकी किसी मुसलमान ने दावत कर दी, तो अब मुसलमान की दावत क़ुबूल करने के लिए और उसका दिल ख़ुश करने के लिए नफ़्ली रोज़ा तोड़ दे तो इसकी भी इजाज़त है, बाद में उस रोज़े की क़ज़ा कर ले, लेकिन अगर रोज़ा तोड़ना नहीं चाहता तो कम से कम उसके हक़ में दुआ कर दे।

बिन बुलाए मेहमान का हुक्म

"عن ابی مسعود البدری رضی الله عنه، قال: دعا رجل النبی صلی الله علیه وسلم لطعام صنعه له خامس خمسة، فتبعهم رجل، فلما بلغ الباب قال النبی صلی الله علیه وسلم: ان هذا تبعنا فان شئت ان تاذن و ان شئت رجع، قال: بل اذن له یا رسول الله" (بخاری شریف)

हज़रत उबू मसऊद बदरी रज़ियल्लाहु अन्हु रिवायत करते हैं कि एक शख़्स ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की दावत की, और आपके साथ चार अफ़राद की भी दावत की, सादगी का ज़माना था, इसलिये बहुत सी बार जब कोई शख़्स हुज़ूरे अक़्दस की दावत करता तो आम तौर पर वह हुज़ूरे पाक से यह भी कह देता कि आप अपने साथ और भी तीन अफ़राद को ले आयें, या चार अफ़राद को ले आयें। चुनांचे उन साहिब ने पांच अफ़राद की दावत की थी, एक हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और चार सहाबा-ए-किराम, जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दावत में जाने लगे तो एक साहिब और साथ में हो लिए, जैसे बुज़ुर्गों के बाज़ मोतक़िदीन होते हैं कि जो बुज़ुर्गों के साथ लग जाते हैं, जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मेज़बान के घर के दरवाज़े पर पहुंचे तो आपने मेज़बान से फ़रमाया कि यह साहिब हमारे साथ आ गये हैं, इनको आपने दावत नहीं दी थी, अब अगर आपकी इजाज़त हो यह अन्दर आ जायें, अगर इजाज़त न हो तो यह वापस चले जायें, मेज़बान ने कहा या रसूलल्लाह मैं इजाज़त देता हूं,

आप इनको भी अन्दर ले आयें।

यह शख़्स चोर और लुटेरा है

इस हदीस के ज़रिये हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह तालीम दी कि जब किसी के घर पर दावत में शिर्कत के लिए जाओ, और इत्तिफ़ाक़ से कोई ऐसा शख़्स तुम्हारे साथ उस दावत में आ गया जिसको दावत नहीं दी गयी तो मेज़बान को उसके आने की इत्तिला कर दो, और फिर उसकी इजाज़त के बाद उसको दावत में शरीक करो, क्योंकि एक हदीस में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स किसी दावत में बिन बुलाये शिर्कत कर ले तो वह शख़्स चोर बनकर दाख़िल हुआ और लुटेरा बनकर निकला।

मेज़बान के भी हुक़ूक़ हैं

हक़ीक़त में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की यह तालीम एक बहुत बड़े उसूल की निशान देही करती है, जिसको हमने भुला दिया है, वह यह कि हमारे ज़ेहनों में यह बात बैठी हुई है कि अगर कोई शख़्स किसी का मेहमान बन जाए तो मेज़बान पर बेशुमार हुक़ूक़ आयद हो जाते हैं, कि वह उसका इकराम करे, उसकी ख़ातिर मुदारात करे वग़ैरह, लेकिन इस हदीस के ज़रिये हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बता दिया कि जिस तरह मेहमान के हुक़ूक़ मेज़बान पर हैं, इसी तरह मेजबान के भी कुछ हुक़ूक़ मेहमान पर हैं, उनमें से एक हक़ यह है कि वह मेहमान मेजबान को बिला वजह तक्लीफ़ न दे, जैसे कि मेहमान ऐसे लोगों को अपने साथ न ले जाये जिनकी दावत नहीं है। जैसे आज कल के कुछ पीरों, फ़कीरों के यहां होता है कि जिब किसी ने पीर साहिब की दावत की तो अब पीर साहिब अकेले नहीं जायेंगे, बल्कि उनके साथ एक लश्कर भी मेजबान के घर पर हमलावर हो जायेगा। जिसका नतीजा यह होता है कि उस मेजबान को यह पता भी नहीं होता कि इतने

मेहमान आयेंगे, जब अचानक वक्त पर इतना बड़ा लश्कर पहुंचता है तो अब मेज़बान के लिए एक मुसीबत खड़ी हो जाती है। इसी लिये हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ऐसा शख़्स चोर बनकर दाख़िल हुआ और लुटेरा बनकर निकला। लेकिन जहां बे-तकल्लुफ़ी का मामला हो, और यकीन से यह बात मालूम हो कि अगर मैं इसको अपने साथ ले जाऊंगा तो मेज़बान और ज़्यादा खुश हो जायेगा। ऐसे मौक़ों पर साथ ले जाने में कोई हरज नहीं। लेकिन जहां, ज़रा भी तक्लीफ़ पहुंचने का शुबह हो वहां पहले से बताना वाजिब है।

पहले से इत्तिला करनी चाहिए

इसी तरह मेज़बान का एक हक़ यह है कि जब तुम किसी के यहां मेहमान बनकर जाना चाहते हो तो पहले से उसको इत्तिला कर दो, या कम से कम ऐसे वक़्त में जाओ कि वह खाने का इन्तिज़ाम आसानी के साथ कर सके, क्योंकि अगर बिल्कुल खाने के वक़्त किसी के घर पहुंच गये तो उसको फ़ौरी तौर पर खाने का इन्तिज़ाम करने में तक्लीफ़ और मशक़्क़त होगी। इसलिये ऐसे वक़्त में जाना ठीक नहीं, यह मेज़बान का हक़ है।

मेहमान बिना इजाज़त रोज़ा न रखे

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तालीमात पर क़ुर्बान जाइए कि एक हदीस में आपने इर्शाद फ़रमाया कि किसी मेहमान के लिए जायज़ नहीं कि वह मेज़बान को बताये बग़ैर रोज़ा रखे, इसलिये कि जब तुम ने उसको बताया नहीं कि आज मैं रोज़ा रखूंगा, उसको तो यह मालूम है कि तुम उसके मेहमान हो, इसलिये वह तुम्हारे लिए नाश्ते का भी इन्तिज़ाम करेगा, दोपहर के खाने का भी इन्तिज़ाम करेगा फिर जब उसने सब इन्तिज़ाम कर लिया तो बिल्कुल वक़्त पर तुम ने उस से कहा कि मेरा तो रोज़ा है, उसकी मेहनत बेकार गई, उसके ख़र्चे बेकार गये और उसको तुम ने तक्लीफ़ भी पहुंचाई,

इसलिये हुक्म यह है कि मेज़बान की इजाज़त के बग़ैर रोज़ा रखना जायज़ नहीं। इसलिये जिस तरह मेहमान के हुकूक़ हैं, इसी तरह मेज़बान के भी हुकूक़ हैं।

मेहमान को खाने के वक़्त पर हाज़िर रहना चाहिए

या जैसे मेज़बान के यहां खाने का वक़्त मुकर्रर है, और तुम उस वक़्त ग़ायब हो गये और वह तुमको तलाश करता फिर रहा है, और अब वह बेचारा मेहमान के बग़ैर खाना नहीं खा सकता, इसलिये उसूल यह है कि मेहमान को चाहिए कि अगर किसी वक़्त खाना न खाना हो, या देर हो जाने का इम्कान हो तो पहले से मेज़बान को बता दे कि आज मैं खाने पर देर से आऊंगा, ताकि उसको तलाश और इन्तिज़ाम की तक्लीफ़ न हो।

मेज़बान को तक्लीफ़ देना बड़ा गुनाह है

दीन सिर्फ़ नमाज़ रोज़े का और ज़िक्र व तस्बीह का नाम नहीं, ये सब बातें दीन का हिस्सा हैं। हमने इनको दीन से ख़ारिज कर दिया है, बड़े बड़े दीनदार, बड़े बड़े तहज्जुद गुज़ार, इशराक़ चाश्त पढ़ने वाले भी ज़िन्दगी गुज़ारने और रहन सहन के इन आदाब का लिहाज़ नहीं करते, जिसकी वजह से गुनाहों में मुब्तला हो जाते हैं। याद रखो, अगर इन आदाब का लिहाज़ न करने के नतीजे में मेज़बान को तक्लीफ़ होगी तो एक मुसलमान को तक्लीफ़ पहुंचाने का गुनाहे कबीरा उस मेहमान को होगा।

मेरे वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि किसी मुसलमान को अपने क़ौल या फ़ेल से तक्लीफ़ पहुंचाना गुनाहे कबीरा यानी बड़े गुनाहों में से है, जैसे शराब पीना, चोरी करना, ज़िना करना गुनाहे कबीरा है, इसलिये अगर तुमने अपने किसी अमल से मेज़बान को तक्लीफ़ में मुब्तला कर दिया तो यह मुसलमान को तक्लीफ़ पहुंचाना हुआ, ये सब बड़े गुनाह हैं, ये सारी बातें इस उसूल में दाख़िल हैं जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस

हदीस में बता दिया। दुआ फ़रमायें कि अल्लाह तआला हम सब को इन अहकाम पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

واٰخر دعوانا ان الحمد للہ رب العالمین

लिबास के शरई उसूल

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰٓى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا۔ اَمَّا بَعْدُ:

اَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ.

"يَا بَنِيْٓ اٰدَمَ قَدْ اَنْزَلْنَا عَلَيْكُمْ لِبَاسًا يُّوَارِيْ سَوْاٰتِكُمْ وَرِيْشًا، وَلِبَاسُ التَّقْوٰى ذٰلِكَ خَيْرٌ" (الاعراف: ٢٦)

آمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم، وصدق رسوله النبى الكريم، ونحن على ذالك من الشاهدين والشاكرين، والحمد للّٰه رب العالمين.

तमहीद (आरंभिका)

जैसा कि पहले भी अर्ज़ कर चुका हूं कि इस्लाम की तालीमात ज़िन्दगी के हर शोबे को घेरे हुए हैं, इसलिये उनका ताल्लुक़ हमारी मुआशरत और रहन सहन के हर हिस्से से है, ज़िन्दगी का कोई गोशा इस्लाम की तालीमात से ख़ाली नहीं। "लिबास" भी ज़िन्दगी के गोशों में से अहम गोशा है, इसलिये कुरआन व सुन्नत ने इसके बारे में भी तफ़्सीली हिदायतें दी हैं।

मौजूदा दौर का प्रोपैगन्डा

आज कल हमारे दौर में यह प्रोपैगन्डे बड़ी कस्रत से किया गया है कि लिबास तो ऐसी चीज़ है जिसका हर क़ौम और हर वतन के हालात से ताल्लुक़ होता है, इसलिये आदमी अगर अपनी मर्ज़ी और माहौल के मुताबिक़ कोई लिबास इख़्तियार कर ले तो इसके बारे में शरीअ़त को बीच में लाना और शरीअ़त के अहकाम सुनाना तंग नज़री की बता है, और यह जुम्ला तो लोगों से बहुत ज़्यादा सुनने में

आता है कि इन मौलवियों ने अपनी तरफ़ से कैदें और शर्तें लगा दी हैं, वर्ना दीन में तो बड़ी आसानी है, अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तो दीन में इतनी पाबन्दियां नहीं लगाई हैं, मगर इन मुल्लाओं ने अपनी तरफ़ से घड़ कर ये पाबन्दियां लागू कर रखी हैं, और यह इन मुल्लाओं की तंग नज़री की दलील है, और इस तंग नज़री के नतीजे में इन्हों ने खुद भी बहुत सी बातों को छोड़ रखा है और दूसरों से भी छुड़ा रखा है।

हर लिबास अपना असर रखता है

खूब समझ लीजिए: लिबास का मामला इतना सादा और इतना आसान नहीं है कि आदमी जो चाहे लिबास पहनता रहे और उस लिबास की वजह से उसके दीन पर और उसके अख़्लाक़ पर और उसकी ज़िन्दगी पर, उसके तर्ज़े अमल पर कोई असर न पड़े, यह एक मानी हुई हक़ीक़त है जिसको शरीअत ने तो हमेशा बयान फ़रमाया, और अब नफ़्सियात और साइन्स के माहिरीन भी इस हक़ीक़त को तस्लीम करने लगे हैं कि इन्सान के लिबास का उसकी ज़िन्दगी पर, उसके अख़्लाक़ पर, उसके किर्दार पर बड़ा असर पड़ता है, लिबास महज़ एक कपड़ा नहीं है, जो इन्सान ने उठा कर पहन लिया है, बल्कि यह लिबास इन्सान के सोचने के अन्दाज़ पर, उसकी सोच पर, उसकी ज़ेहनियत पर असर डालता है। इसलिये लिबास को मामूली नहीं समझना चाहिए।

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु पर जुब्बे का असर

हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु के बारे में रिवायत है कि एक बार मस्जिदे नबवी में खुतबा देने के लिए तशरीफ़ लाए, उस वक़्त वह एक बहुत शानदार जुब्बा पहने हुए थे। जब खुतबे से फ़ारिग़ हो कर घर तशरीफ़ लाए तो जाकर उस जुब्बे को उतार दिया, और फ़रमाया कि मैं आइन्दा इस जुब्बे को नहीं पहनूंगा, इसलिये कि इस जुब्बे को पहनने से मेरे दिल में बड़ाई और तकब्बुर का एहसास

पैदा हो गया, इसलिये मैं आइन्दा इसको नहीं पहनूंगा। हालांकि वह जुब्बा अपने आप में ऐसी चीज़ नहीं थी, जो हराम होती, लेकिन अल्लाह तआला जिन हज़रात की तबीयतों को आईने की तरह साफ़ शफ़्फ़ाफ़ बनाते हैं, उनको ज़रा ज़रा सी बात भी बुरी लगती हैं, इसकी मिसाल यों समझिये कि जैसे एक कपड़ा दाग़दार है, और कपड़े पर हर जगह धब्बे ही धब्बे लगे हुए हैं, उसके बाद उस कपड़े पर एक दाग़ और आकर लग जाए तो उस कपड़े पर कोई असर ज़ाहिर न होगा। हमारा भी यही हाल है कि हमारा सीना दाग़ों और धब्बों से भरा हुआ है, इसलिये अगर खिलाफ़े शरीअ़त कोई बात हो जाती है तो उसकी ज़ुल्मत और उसकी अंधेरी और उसके वबाल का एहसास नहीं होता। लेकिन जिन हज़रात के सीनों को अल्लाह तआ़ला आईने की तरह शफ़्फ़ाफ़ बनाते हैं, उनकी मिसाल ऐसी है, जैसे सफ़ेद, साफ़ शफ़्फ़ाफ़ कपड़ा हो, उस पर अगर ज़रा सा भी दाग़ लग जायेगा तो वह दाग़ बहुत नुमायां नज़र आयेगा, इसी तरह अल्लाह वालों के दिल साफ़ शफ़्फ़ाफ़ होते हैं उन पर ज़रा सी भी छींट पड़ जाए तो उनको नागवार होती है। तो हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के वाक़िए से मालूम हुआ कि लिबास का असर इन्सान के अख़्लाक़ व किर्दार पर और उसकी ज़िन्दगी पर पड़ता है। इसलिये लिबास को मामूली समझ कर नज़र अन्दाज़ नहीं करना चाहिए, और लिबास के बारे में शरीअ़त के जो उसूल हैं वे समझ लेने चाहिऐं और उनकी पैरवी करनी भी ज़रूरी है।

आज कल का एक और प्रोपैगन्डा

आज कल यह जुम्ला भी बहुत कस्रत से सुनने में आता है कि साहिब, इस ज़ाहिरी लिबास में क्या रखा है, दिल साफ़ होना चाहिए, और हमारा दिल साफ़ है, हमारी नियत अच्छी है, अल्लाह तआ़ला के साथ हमारा ताल्लुक़ क़ायम है। सारे काम तो हम ठीक कर रहे हैं, अब अगर ज़रा सा लिबास बदल दिया तो इसमें क्या हरज है?

इसलिये कि दीन ज़ाहिर का नाम नहीं, बातिन का नाम है। दीन जिस्म का नाम नहीं, रूह का नाम है। शरीअत की रूह देखनी चाहिए, दीन की रूह को समझना चाहिए। आज कल इस किस्म के जुम्ले बहुत कस्रत से फैले हुए हैं और फैलाए जा रहे हैं और फ़ैशन बन गए हैं।

ज़ाहिर और बातिन दोनों मतलूब हैं

ख़ूब याद रखिए, दीन के अहकाम रूह पर भी हैं, जिस्म पर भी हैं, बातिन पर भी हैं और ज़ाहिर पर भी हैं। कुरआने करीम का इर्शाद है।

"وَذَرُوا ظَاهِرَ الْإِثْمِ وَبَاطِنَهُ" (سورة الانعام:١٢٠)

यानी ज़ाहिर के गुनाह भी छोड़ो और बातिन के गुनाह भी छोड़ो, सिर्फ़ यह नहीं कहा कि बातिन के गुनाह छोड़ो। ख़ूब याद रखिए: जब ज़ाहिर ख़राब है तो फिर यह शैतान का धोखा है कि बातिन ठीक है, इसलिये कि ज़ाहिर उसी वक़्त ख़राब होता है, जब अन्दर से बातिन ख़राब होता है, अगर बातिन ख़राब न हो तो ज़ाहिर भी ख़राब नहीं होगा।

एक ख़ूबसूरत मिसाल

हमारे एक बुज़ुर्ग एक मिसाल दिया करते थे कि जब कोई फल अन्दर से सड़ जाता है तो उसके सड़ने के आसार छिलके पर दाग़ की शक्ल में नज़र आने लगते हैं, और अगर अन्दर से वह फल सड़ा हुआ नहीं है तो छिलके पर कभी ख़राबी नज़र नहीं आयेगी, छिलके पर उसी वक़्त ख़राबी ज़ाहिर होती है जब अन्दर से ख़राब हो। इसी तरह जिस शख़्स का ज़ाहिर ख़राब है तो यह इस बात की निशानी है कि बातिन में भी कुछ न कुछ ख़राबी ज़रूर है। वर्ना ज़ाहिर ख़राब होता ही नहीं। इसलिये यह कहना कि हमारा ज़ाहिर अगर ख़राब है तो क्या हुआ? बातिन ठीक है। याद रखिए इस सूरत में बातिन कभी ठीक हो ही नहीं सकता।

दुनियावी काम में ज़ाहिर भी मतलूब है

दुनिया के सारे कामों में तो ज़ाहिर भी मतलूब है, और बातिन भी मतलूब है, एक बेचारा दीन ही ऐसा रह गया है जिसके बारे में यह कह दिया जाता है कि हमें इसका बातिन चाहिए, ज़ाहिर नहीं चाहिए, जैसे दुनिया के अन्दर जब आप मकान बनाते हैं तो मकान का बातिन तो यह है कि चार दीवारी खड़ी करके ऊपर से छत डाल दी तो बातिन हासिल हो गया, अब उस पर पलास्तर की क्या ज़रूरत है? और रंग व रोग़न की क्या ज़रूरत है? इसलिये कि मकान की रूह तो हासिल हो गई है, वह मकान रहने के क़ाबिल हो गया। मगर मकान के अन्दर तो यह फ़िक्र है कि सिर्फ़ चार दीवारी और छत काफ़ी नहीं, बल्कि पलास्तर भी हो, रंग व रोग़न भी हो, उसमें ख़ूबसूरती का सारा सामान मौजूद हो। यहां कमी सिर्फ़ बातिन ठीक कर लेने का फ़लसफ़ा नहीं चलता। या जैसे गाड़ी है, एक उसका बातिन है और एक ज़ाहिर है, गाड़ी का बातिन यह है कि एक ढांचा लेकर उसमें इन्जन लगा लो, तो अब बातिन हासिल है। इसलिये कि इन्जन लगा हुआ है। वह सवारी करने के क़ाबिल है, इसलिये अब न बाडी की ज़रूरत है, न रंग व रोग़न की ज़रूरत है, वहां तो किसी शख़्स ने आज तक यह नहीं कहा कि मुझे गाड़ी का बातिन हासिल हैं, अब ज़ाहिर की ज़रूरत नहीं, बल्कि वहां तो ज़ाहिर भी मतलूब है और बातिन भी मतलूब है। एक बेचारा दीन ही ऐसा मिस्कीन रह गया कि इसमें सिर्फ़ बातिन मतलूब है ज़ाहिर मतलूब नहीं।

यह शैतान का धोखा है

याद रखिए, यह शैतान का धोखा और फ़रेब है। इसलिये ज़ाहिर भी दुरुस्त करना ज़रूरी है और बातिन भी दुरुस्त करना ज़रूरी है, चाहे लिबास हो, या खाना हो, या रहन सहन और ज़िन्दगी गुज़ारने के आदाब हों, अगरचे इन सब का ताल्लुक़ ज़ाहिर से है, लेकिन इन सब का गहरा असर बातिन पर पड़ता है। इसलिये लिबास को

मामूली समझ कर नज़र अन्दाज़ नहीं करना चाहिए। जो लोग ऐसी बातें करते हैं, उनको दीन की सही समझ हासिल नहीं। अगर यह बात न होती तो हुज़ूर नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम लिबास के बारे में कोई हिदायत न फ़रमाते, कोई तालीम न देते, लेकिन आपने लिबास के बारे में हिदायतें दीं, आपकी तालीमात उसी जगह पर आती हैं, जहां लोगों के बहक जाने और ग़लती में पड़ जाने का ख़तरा होता है। इसलिये इन उसूलों को और तालीमात को तवज्जोह के साथ सुनने की ज़रूरत है।

शरीअत ने कोई लिबास मख़्सूस नहीं किया

शरीअत ने लिबास के बारे में बड़ी मोतदिल तालीमात अता फ़रमाई हैं। चुनांचे शरीअत ने कोई ख़ास लिबास मुक़र्रर करके और उसकी हैयत बता कर यह नहीं कहा कि हर आदमी के लिए ऐसा लिबास पहनना ज़रूरी है, इसलिये जो शख़्स इस हैयत से हट कर लिबास पहनेगा वह मुसलमानी के ख़िलाफ़ है। ऐसा इसलिये नहीं किया कि इस्लाम दीने फ़ित्रत है, और हालात के लिहाज़ से, मुख़्तलिफ़ मुल्कों के लिहाज़ से, वहां के मौसमों के लिहाज़ से, वहां की ज़रूरियात के लिहाज़ से लिबास मुख़्तलिफ़ हो सकता है। कहीं मोटा, कहीं किसी ढंग का, कहीं किसी हैयत का लिबास इख़्तियार किया जा सकता है, लेकिन इस्लाम ने लिबास के बारे में कुछ बुनियादी उसूल अता फ़रमा दिए, उन उसूलों की हर हालत में रियायत और लिहाज़ रखना ज़रूरी है। उनको समझ लेना चाहिए।

लिबास के चार बुनियादी उसूल

जो आयत मैंने आपके सामने तिलावत की है, उसमें अल्लाह तआला ने लिबास के बुनियादी उसूल बता दिए हैं, फ़रमाया कि:

"يَابَنِيْ آدَمَ قَدْ اَنْزَلْنَا عَلَيْكُمْ لِبَاسًا يُّوَارِيْ سَوْاٰتِكُمْ وَرِيْشًا، وَلِبَاسُ التَّقْوٰى ذٰلِكَ خَيْرٌ" (سورة الاعراف:٢٦)

ऐ बनी आदम, हमने तुम्हारे लिए ऐसा लिबास उतारा जो तुम्हारी

पोशीदा और शर्म की चीज़ों को छुपाता है, और जो तुम्हारे लिए ज़ीनत का सबब बनता है, और तक़्वे का लिबास तुम्हारे लिए सब से बेहतर है।

ये तीन जुम्ले इर्शाद फ़रमाए, और इन तीन जुम्लों में अल्लाह तआला ने उलूम की कायनात भर दी है।

लिबास का पहला बुनियादी मक़्सद

इस आयत में लिबास का पहला मक़्सद यह बयान फरमाया कि वह तुम्हारी पोशीदा और शर्म की चीज़ों को छुपा सके। "सौआत" के मायने वह चीज़ जिसके ज़िक्र करने से या जिसके ज़ाहिर होने से इन्सान शर्म महसूस करे, मुराद है "सत्रे औरत" तो गोया कि लिबास का सब से बुनियादी मक़्सद "सत्रे औरत" है। अल्लाह तआला ने मर्द और औरत के जिस्म के कुछ हिस्सों को "औरत" (छुपाने की चीज़) क़रार दिया, यानी वह छुपाने की चीज़ है। वह "सत्रे औरत" मर्दों में और है, औरतों में और है, मर्दों में सत्र का हिस्सा जिसको छुपाना हर हाल में ज़रूरी है। वह नाफ़ से लेकर घुटनों तक का हिस्सा है। इस हिस्से को खोलना बिला ज़रूरत जायज़ नहीं। इलाज वग़ैरह की मजबूरी में तो जायज़ है, लेकिन आम हालात में उसको छुपाना ज़रूरी है। औरत का सारा जिस्म, सिवाए चेहरे और गट्टों तक हाथ के सब का सब "औरत" और "सत्र" है। जिसका छुपाना ज़रूरी है। और खोलना जायज़ नहीं।

इसलिये लिबास का बुनियादी मक़्सद यह है कि वह शरीअत के मुक़र्रर किए हुए सत्र के हिस्सों को छुपा ले। जो लिबास इस मक़्सद को पूरा न करे, शरीअत की निगाह में वह लिबास ही नहीं, वह लिबास कहलाने के लायक़ ही हीं, क्योंकि वह लिबास अपना बुनियादी मक़्सद पूरा नहीं कर रहा है, जिसके लिए वह बनाया गया है।

लिबास के तीन ऐब

लिबास के बुनियादी मक़्सद को पूरा न करने की तीन सूरतें होती हैं। एक सूरत तो यह है कि वह लिबास इतना छोटा है कि लिबास पहनने के बावजूद सत्र का कुछ हिस्सा खुला रह गया, उस लिबास के बारे में यह कहा जायेगा कि उस लिबास से उसका बुनियादी मक़्सद हासिल न हुआ, और छुपने वाला हिस्सा खुल गया। दूसरी सूरत यह है कि उस लिबास से सत्र को छुपा तो लिया, लेकिन वह लिबास इतना बारीक है कि उस से अन्दर का बदन झलकता है। तीसरी सूरत यह है कि लिबास इतना चुस्त है कि लिबास के बावजूद जिस्म की बनावट और जिस्म का उभार नज़र आ रहा है, यह भी सत्र के ख़िलाफ़ है। इसलिये मर्द के लिए नाफ़ से लेकर घुटनों तक का हिस्सा ऐसे कपड़े से छुपाना ज़रूरी है जो इतना मोटा हो कि अन्दर से जिस्म न झलके, और वह इतना ढीला ढाला हो कि अन्दर के बदन के हिस्सों को नुमायां न करे, और इतना मुकम्मल हो कि जिस्म का कोई हिस्सा खुला न रह जाए, और यही तीन चीज़ें औरत के लिबास में भी ज़रूरी हैं।

आज कल का नंगा पहनावा

मौजूदा दौर के फ़ैशन ने लिबास के असल मक़्सद ही को मजरूह कर दिया है। इसलिये कि आज कल मर्दों और औरतों में ऐसे लिबास राइज़ हो गये हैं जिनमें इसकी कोई परवाह नहीं कि जिस्म का कौन सा हिस्सा खुल रहा है और कौन सा हिस्सा ढका हुआ है। शरीअत की निगाह में वह लिबास लिबास ही नहीं। जो औरतें बहुत बारीक और बहुत चुस्त लिबास पहनती हैं, जिसकी वजह से कपड़ा पहनने के बावजूद जिस्म की बनावट दूसरों के सामने ज़ाहिर होती है ऐसी औरतों के बारे में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"كاسيات عاريات" (مسلم شريف)

वे औरतें नंगी लिबास पहनने वालियां होंगी। यानी लिबास पहनने के बावजूद नंगी होंगी, इसलिये कि उस कपड़े से लिबास का वह बुनियादी मक़्सद हासिल न हुआ जिसके लिए अल्लाह तआ़ला ने लिबास को उतारा था। आज कल औरतों में यह वबा इस कस्रत से फैल चुकी है जिसकी कोई हद नहीं, शर्म व हया सब ताक़ पर रख दी गई है, और ऐसा लिबास राइज हो गया जो जिस्म को छुपाने के बजाए और नुमायां करता है, ख़ुदा के लिए हम इस बात को महसूस करें और अपने अन्दर फ़िक्र पैदा करें और अपने घरों में ऐसे लिबास पर पाबन्दी लगायें जो नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इन इर्शादात के ख़िलाफ़ हो। अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से हमारे दिलों में यह एहसास और फ़िक्र पैदा फ़रमाए, आमीन।

औरतें इन आज़ा (जिस्म के हिस्सों) को छुपायें

हमारे हज़रत डाक्टर अ़ब्दुल हई साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि अल्लाह तआ़ला उनके दरजों को बुलन्द फ़रमाये, आमीन। शायद ही आपका कोई जुमा ऐसा जाता हो जिसमें इस पहलू की तरफ़ मुतवज्जह न फ़रमाते हों, फ़रमाया करते थे कि यह जो फ़ितने आज कल आम रिवाज पा गये हैं, इनको किसी तरह ख़त्म करो, औरतें इस हालत में आ़म मज्मे के अन्दर जा रही हैं कि सर खुला हुआ है, बाज़ू खुले हुए हैं, सीना खुला हुआ है, पेट खुला हुआ है। हालांकि "सत्र" का हुक्म यह है कि मर्द के लिए मर्द के सामने सत्र खोलना भी जायज़ नहीं और औरत के लिए औरत के सामने सत्र खोलना भी जायज नहीं। जैसे अगर किसी औरत ने ऐसा लिबास पहन लिया जिसमें सीना खुला हुआ है, पेट खुला हुआ है, बाज़ू खुले हुए हैं, तो उस औरत को इस हालत में दूसरी औरतों के सामने आना भी जायज़ नहीं। कहां यह कि इस हालत में मर्दों के सामने आए, इसलिये कि यह अंग उसके सत्र का हिस्सा हैं।

गुनाहों के बुरे नतीजे

आज कल की शादी की तक़रीबात में जाकर देखिए, वहां क्या हाल हो रहा है, औरतें बे–हयाई के साथ ऐसे लिबास पहन कर मर्दों के सामने आ जाती हैं, यह अल्लाह तआला के अज़ाब को दावत देने वाली बात नहीं है तो और क्या है? डंके की चोट, सीना तान कर, ढिटाई के साथ जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इर्शादात की ऐसी खुल्लम खुल्ला खिलाफ़ वर्ज़ी होगी तो इसके बारे में हमारे हज़रत डा० साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि हक़ीक़त में इन फ़ितनों ने हमारे ऊपर यह अज़ाब मुसल्लत कर रखा है। यह बद अम्नी और बेचैनी जो आप देख रहे हैं कि किसी इन्सान की जान व माल महफ़ूज़ नहीं है, हक़ीक़त में हमारी इन ही बद आमालियों का नतीजा है, क़ुरआने करीम का इर्शाद है:

"وَمَآ اَصَابَكُمْ مِّنْ مُّصِيْبَةٍ فَبِمَا كَسَبَتْ اَيْدِيْكُمْ وَيَعْفُوْ عَنْ كَثِيْرٍ"

(سورة الشورىٰ: ۳۰)

यानी जो कुछ तुम्हें बुराई पहुंचती है वह सब तुम्हारे हाथों के करतूत की वजह से पहुंचती है। और बहुत से गुनाह तो अल्लाह तआला माफ़ ही फ़रमा देते हैं और उनकी पकड़ नहीं फ़रमाते हैं। खुदा के लिए अपने घरों से इस फ़ितने को दूर करें।

क़ियामत के क़रीबी ज़माने में औरतों की हालत

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस ज़माने का एक ऐसा नक़्शा खींचा है कि अगर आजका ज़माना किसी ने न देखा होता तो वह शख़्स हैरान हो जाता कि इस हदीस का मतलब क्या है? और आपने इस तरह नक़्शा खींचा जिस तरह कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मौजूदा दौर की औरतों को देख कर यह इर्शाद फ़रमाया हो। इसलिये कि उस ज़माने में इसका तसव्वुर भी नहीं था। चुनांचे फ़रमाया कि क़ियामत के क़रीब औरतें लिबास पहनने के बावजूद नंगी होंगी और उनके सरों के बाल ऐसे

·वे औरतें नंगी लिबास पहनने वालियां होंगी। यानी लिबास पहनने के बावजूद नंगी होंगी, इसलिये कि उस कपड़े से लिबास का वह बुनियादी मक़सद हासिल न हुआ जिसके लिए अल्लाह तआला ने लिबास को उतारा था। आज कल औरतों में यह वबा इस कस्रत से फैल चुकी है जिसकी कोई हद नहीं, शर्म व हया सब ताक़ पर रख दी गई है, और ऐसा लिबास राइज हो गया जो जिस्म को छुपाने के बजाए और नुमायां करता है, ख़ुदा के लिए हम इस बात को महसूस करें और अपने अन्दर फ़िक्र पैदा करें और अपने घरों में ऐसे लिबास पर पाबन्दी लगायें जो नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इन इर्शादात के ख़िलाफ़ हो। अल्लाह तआला अपनी रहमत से हमारे दिलों में यह एहसास और फ़िक्र पैदा फ़रमाए, आमीन।

औरतें इन आज़ा (जिस्म के हिस्सों) को छुपायें

हमारे हज़रत डाक्टर अब्दुल हई साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि अल्लाह तआला उनके दरजों को बुलन्द फ़रमाये, आमीन। शायद ही आपका कोई जुमा ऐसा जाता हो जिसमें इस पहलू की तरफ़ मुतवज्जह न फ़रमाते हों, फ़रमाया करते थे कि यह जो फ़ितने आज कल आम रिवाज पा गये हैं, इनको किसी तरह ख़त्म करो, औरतें इस हालत में आम मज्मे के अन्दर जा रही हैं कि सर खुला हुआ है, बाज़ू खुले हुए हैं, सीना खुला हुआ है, पेट खुला हुआ है। हालांकि "सत्र" का हुक्म यह है कि मर्द के लिए मर्द के सामने सत्र खोलना भी जायज़ नहीं और औरत के लिए औरत के सामने सत्र खोलना भी जायज़ नहीं। जैसे अगर किसी औरत ने ऐसा लिबास पहन लिया जिसमें सीना खुला हुआ है, पेट खुला हुआ है, बाज़ू खुले हुए हैं, तो उस औरत को इस हालत में दूसरी औरतों के सामने आना भी जायज़ नहीं। कहां यह कि इस हालत में मर्दों के सामने आए, इसलिये कि यह अंग उसके सत्र का हिस्सा हैं।

गुनाहों के बुरे नतीजे

आज कल की शादी की तक़रीबात में जाकर देखिए, वहां क्या हाल हो रहा है, औरतें बे-हयाई के साथ ऐसे लिबास पहन कर मर्दों के सामने आ जाती हैं, यह अल्लाह तआ़ला के अज़ाब को दावत देने वाली बात नहीं है तो और क्या है? डंके की चोट, सीना तान कर, ढिटाई के साथ जब हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इर्शादात की ऐसी खुल्लम खुल्ला खिलाफ़ वर्ज़ी होगी तो इसके बारे में हमारे हज़रत डा० साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि हकीकत में इन फ़ितनों ने हमारे ऊपर यह अज़ाब मुसल्लत कर रखा है। यह बद अम्नी और बेचैनी जो आप देख रहे हैं कि किसी इन्सान की जान व माल महफ़ूज़ नहीं है, हकीक़त में हमारी इन ही बद आमालियों का नतीजा है, कुरआने करीम का इर्शाद है:

"وَمَا أَصَابَكُمْ مِنْ مُصِيبَةٍ فَبِمَا كَسَبَتْ أَيْدِيكُمْ وَيَعْفُو عَنْ كَثِيرٍ"

(سورة الشورى: ٣٠)

यानी जो कुछ तुम्हें बुराई पहुंचती है वह सब तुम्हारे हाथों के करतूत की वजह से पहुंचती है। और बहुत से गुनाह तो अल्लाह तआ़ला माफ़ ही फ़रमा देते हैं और उनकी पकड़ नहीं फ़रमाते हैं। खुदा के लिए अपने घरों से इस फ़ितने को दूर करें।

क़ियामत के क़रीबी ज़माने में औरतों की हालत

एक हदीस में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस ज़माने का एक ऐसा नक़्शा खींचा है कि अगर आजका ज़माना किसी ने न देखा होता तो वह शख़्स हैरान हो जाता कि इस हदीस का मतलब क्या है? और आपने इस तरह नक़्शा खींचा जिस तरह कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मौजूदा दौर की औरतों को देख कर यह इर्शाद फ़रमाया हो। इसलिये कि उस ज़माने में इसका तसव्वुर भी नहीं था। चुनांचे फ़रमाया कि क़ियामत के क़रीब औरतें लिबास पहनने के बावजूद नंगी होंगी और उनके सरों के बाल ऐसे

गुनाहों पर शर्मिन्दगी और नदामत भी हो जाती है और तौबा की भी तौफ़ीक़ हो जाती है। लेकिन दूसरा शख़्स सब के सामने और खुल्लम खुल्ला दूसरों के सामने गुनाह कर रहा है और उस पर फ़ख़्र भी कर रहा है कि मैंने यह गुनाह किया, यह बड़ी ख़तरनाक बात है, एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि:

"كل امتى معافى الا المجاهرين" (بخارى شريف)

यानी मेरी उम्मत में जितने गुनाह करने वाले हैं, सब की मग़फ़िरत की उम्मीद है, इन्शा अल्लाह सब की माफ़ी हो जायेगी, या तो तौबा की तौफ़ीक़ हो जायेगी, या अल्लाह तआला वैसे ही माफ़ फ़रमा देंगे। लेकिन वे लोग जो डंके की चोट पर खुल्लम खुल्ला ऐलानिया गुनाह करने वाले हों, और उस गुनाह पर कभी शर्मिन्दा न होते हों, बल्कि उस गुनाह पर फ़ख़्र करते हों और बल्कि उस गुनाह को सवाब समझ कर करते हों कि जो कुछ हम कर रहे हैं यह दुरुस्त है, और अगर उनको समझाया जाए तो उस पर बहस करने और मुनाज़रा करने को तैयार हो जाएं। और कहते हैं कि इसमें क्या हर्ज है? क्या हम ज़माने से कट जायें? क्या हम दक़ियानूस होकर बैठ जायें? और सारी दुनिया के ताने हम अपने सर ले लें? क्या समाज से कट कर बैठ जायें?

समाज को छोड़ दो

अरे यह तो देखो कि अगर समाज से कट कर अल्लाह के हो जाओगे, यह कौन सा महंगा सौदा है? याद रखो कि क़ब्र में जाने के बाद तुम्हारे आमाल के सिवा कोई तुम्हारा साथी नहीं होगा। उस वक़्त तुम अपने समाज को मदद के लिए पुकारना कि तुम्हारी वजह से हम यह काम कर रहे थे, अब आकर हमारी मदद करो, क्या उस वक़्त तुम्हारे समाज के अफ़राद में से कोई आकर तुम्हारी मदद करेगा? और तुम्हें अल्लाह तआला के अज़ाब से छुड़ा सकेगा? उस

वक़्त के बारे में कुरआने करीम का इर्शाद है कि:

"مَالَكُمْ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ مِنْ وَّلِيٍّ وَّلَا نَصِيْرٍ" (البقرة:١٠٧)

यानी उस वक़्त अल्लाह तआला के सिवा कोई तुम्हारा वली और मददगार नहीं होगा जो तुम्हें अज़ाब से छुड़ा सके।

नसीहत भरा वाक़िआ

कुरआने करीम ने सूरः साफ़्फ़ात में एक शख़्स का वाक़िआ लिखा है कि अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल से उस शख़्स को जब जन्नत में पहुंचा देंगे, और जन्नत की सारी नेमतें अता फ़रमा देंगे, उस वक़्त उसको अपने एक साथी और दोस्त का ख़्याल आयेगा कि मालूम नहीं उसका क्या हाल है? इसलिये कि वह दुनिया के अन्दर मुझे ग़लत कामों पर उक्साया करता था, और मुझ से बहसें किया करता था कि आज कल के हालात ऐसे हैं, माहौल ऐसा है, समाज के तक़ाज़े ये हैं, वक़्त के तक़ाज़े ये हैं वग़ैरह। तो ऐसी बातें करके मुझे बहकाया करता था। अब ज़रा उसको देखूं तो वह किस हाल में है? चुनांचे वह जब उसको देखने के लिए जहन्नम के अन्दर झांकेगा। कुरआने करीम फ़रमाता है कि:

"فَاطَّلَعَ فَرَاٰهُ فِیْ سَوَآءِ الْجَحِیْمِ، قَالَ تَاللّٰهِ اِنْ كِدْتَّ لَتُرْدِیْنِ، وَلَوْ لَا نِعْمَةُ رَبِّیْ لَكُنْتُ مِنَ الْمُحْضَرِیْنَ" (الصافات:٥٥تا٥٧)

जब उसको देखने के लिए जहन्नम के अन्दर झांकेगा तो उस साथी को जहन्नम के बीचों बीच देखेगा, और फिर उसको मुख़ातिब हो कर उस से कहेगा कि मैं क़सम खाकर कहता हूं कि तूने मुझे हलाक ही कर दिया था। यानी अगर मैं तेरे कहने में आ जाता, तेरी बात मान लेता और तेरी इत्तिबा करता तो आज मेरा भी यही हश्र होना था जो हश्र तेरा हो रहा है। और अगर मेरे साथ मेरे रब का फ़ज़्ल और उसकी रहमत शामिले हाल न होती तो मुझे भी इसी तरह धर लिया गया होता, जिस तरह आज तुझे धर लिया गया है।

हम बैक-वर्ड ही सही

बहर हाल, इस समाज के तक़ाज़े यहां पर तो बड़े खुशनुमा लगते हैं, लेकिन अगर इस बात पर ईमान है कि एक दिन मरना है और अल्लाह तआला के सामने जवाब देना है, अल्लाह तआला के सामने हाज़िर होना है और जन्नत और जहन्नम भी कोई चीज़ है, तो फिर खुदा के लिए इस समाज की बातों को छोड़ो, इसके डर और ख़ौफ़ को छोड़ो, अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अहकाम की तरफ़ आओ। और यह समाज तुम्हें जो ताने देता है, उन तानों को खुशी से बर्दाश्त करो, अगर समाज यह कहता है कि तुम रज्अ़त पसन्द हो। तुम दक़ियानूस हो, तुम बैक--वर्ड (Bake Ward) हो तुम ज़माने के साथ चलना नहीं जानते। तो एक बार इस समाज को ख़म ठोक कर और कमर कस कर यह जवाब दे दो कि हम ऐसे ही हैं, तुम अगर हमारे साथ ताल्लुक़ रखना चाहते हो रखो, नहीं रखना चाहते, मत रखो। जब तक एक बार यह नहीं कहोगे याद रखो, यह समाज तुम्हें जहन्नम की तरफ़ ले जाता रहेगा।

ये ताने मुसलमान के लिए मुबारक हैं

हज़राते अंबिया अलैहिमुस्सलाम को भी ये ताने दिए गये। सहाबा– ए–किराम को भी ये ताने दिए गये, और जो शख़्स भी दीन पर चलना चाहता है उसको दिए जाते हैं। लेकिन जब तक इन तानों को अपने लिए फ़ख़्र का सबब नहीं क़रार दोगे, याद रखो, उस वक़्त तक कामयाबी हासिल नहीं होगी। एक रिवायत में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इर्शाद है कि:

"اکثروا ذکر اللّٰہ حتی یقولوا "مجنون" (مسند احمد)

अल्लाह की याद और ज़िक्र इस हद तक करो कि लोग तुम्हें पागल कहने लगें।

मतलब यह है कि अगर समाज एक तरफ़ जा रहा है, ज़माना एक तरफ़ जा रहा है, अब तुम उसके बहाव पर बहने के बजाए

उसके बहाव का रुख़ मोड़ने की कोशिश करो। चुनांचे आज अगर कोई शख़्स दियानत दारी और अमानत दारी से कोई काम करता है, तो लोग उसके बारे में यही कहते हैं कि यह पागल है, इसका दिमाग़ ख़राब हो गया है। जैसे आज अगर कोई शख़्स यह चाहे कि मैं रिश्वत न लूं, न रिश्वत दूं, सूद न खाऊं और हराम कामों से परहेज़ करूं, और लिबास के मामले में अल्लाह तआला के बताये हुए अहकाम पर अमल करूं, तो उस वक़्त समाज उसको यही कहेगा कि इसका दिमाग़ ख़राब हो गया है, यह पागल है. हालांकि जब समाज तुम्हें यह कहे कि तुम पागल हो, तुम्हारा दिमाग़ ख़राब हो गया है, तो यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तरफ़ से खुश ख़बरी है। और तुम्हारे लिए फ़ख़्र वाला कलिमा है, और यह वह लक़ब है जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तुम्हें दिया है। इसलिये जिस दिन तुम्हें दीन की वजह से कोई शख़्स यह कह दे कि यह पागल है, उस दिन ख़ुशी मनाओ, और दो रक्अत शुक्राने की नमाज़ अदा करो कि अल्लाह तआला ने आज हमें उस मक़ाम तक पहुंचा दिया जो नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक मोमिन के लिए फ़रमाया था। इसलिये इस से डरने और घबराने की कोई ज़रूरत नहीं। मौलाना ज़फ़र अली ख़ां मरहूम ने ख़ूब कहा कि:

तौहीद तो यह है कि ख़ुदा हश्र में कह दे
यह बन्दा दो आलम से ख़फ़ा मेरे लिए है

इसलिये अगर सारी दुनिया के ख़फ़ा होने के नतीजे में अल्लाह तबारक व तआला से तुम्हारा ताल्लुक़ जुड़ जाए तो क्या यह महंगा सौदा है? यह दुनियावी ज़िन्दगी मालूम नहीं कितने दिन की ज़िन्दगी है, ये बातें ये ताने सब ख़त्म होकर रह जायेंगे, और जिस दिन तुम्हारी आंख बन्द होगी और वहां तुम्हारा इस्तिक़बाल (स्वागत) होगा, उस वक़्त तुम देखना कि इन ताना देने वालों का क्या हश्र होगा,

और यह ताने देने वाले जो आज तुम पर हंस रहे हैं, क़ियामत के दिन ये हंसने वाले रोयेंगे और तुम हंसा करोगे। इसलिये इस समाज वालों से कब तक सुलह करोगे, कब तक इनके सामने हथियार डालते रहोगे, कब तक तुम इनके पीछे चलोगे। इसलिये जब तक एक बार हिम्मत करके इरादा नहीं करोगे, उस वक़्त तक छुटकारा नहीं मिलेगा। और नंगेपन के लिबास का जो रिवाज चल पड़ा है, एक बार पक्का इरादा करके इसको ख़त्म करो। अल्लाह तआला हम सब को इसकी हिम्मत और तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन। बहर हाल, अल्लाह तआला ने लिबास का जो पहला मक़्सद बयान फ़रमाया, वह है "सत्रे औरत" जो लिबास छुपाने वाला नहीं, वह हक़ीक़त में लिबास ही नहीं, वह नंगापन है।

लिबास का दूसरा मक़्सद

लिबास का दूसरा मक़्सद अल्लाह तआला ने यह बयान फ़रमाया कि "रीशन्" यानी हमने उस लिबास को तुम्हारे लिए ज़ीनत की चीज़ और ख़ूबसूरती की चीज़ बनाई, एक इन्सान की ख़ूबसूरती लिबास में है, इसलिये लिबास ऐसा होना चाहिए कि जिसे देख कर इन्सान को ख़ुशी हो, बद शक्ल और बे ढंगा न हो, जिसको देख कर दूसरों को नफ़रत और कराहत हो, बल्कि ऐसा होना चाहिए जिसको देख कर ज़ीनत का फ़ायदा हासिल हो सके।

अपना दिल ख़ुश करने के लिए क़ीमती लिबास पहनना

कभी कभी दिल में यह शक व गुमान रहता है कि कैसा लिबास पहनें? अगर बहुत क़ीमती लिबास पहन लिया तो यह ख़्याल रहता है कि कहीं फ़ुज़ूल ख़र्ची में दाख़िल न हो जाए? अगर मामूली लिबास पहनें तो किस दर्जे का पहनें? अल्लाह तआला हज़रत थानवी रह० के दरजों को बुलन्द फ़रमाए, आमीन। अल्लाह तआला ने इस दौर के अन्दर उन से ऐसा अजीब काम लिया कि आपने कोई चीज़ छुपी नहीं छोड़ी, हर हर चीज़ को दो और दो चार करके बिल्कुल वाज़ेह

करके इस दुनिया से तशरीफ़ ले गए। चुनांचे आपने लिबास के बारे में फ़रमाया कि लिबास ऐसा होना चाहिए जो छुपाने वाला हो और छुपाने वाला होने के साथ साथ उस से थोड़ा सा आसाइश का मक़्सद भी हासिल हो, यानी उस लिबास के ज़रिये जिस्म को राहत भी हासिल हो, आराम भी हासिल हो, ऐसा लिबास पहनने में कोई हर्ज नहीं। जैसे पतला लिबास पहन लिया, इस ख़्याल से कि जिस्म को आराम मिलेगा, इसमें कोई हर्ज नहीं, शरअ़न जायज़ है। शरीअ़त ने इस पर कोई पाबन्दी लागू नहीं की। इसी तरह अपने दिल को ख़ुश करने के लिए ख़ुशनुमा और ज़ीनत का लिबास पहने तो यह भी जायज़ है। जैसे एक कपड़ा दस रुपये गज़ है और दूसरा कपड़ा पन्द्रह रुपये गज़ मिल रहा है, अब अगर एक शख़्स पन्द्रह रुपये गज़ वाला इसलिये ख़रीदे कि उसके ज़रिये मेरे जिस्म को आराम मिलेगा, या इस वजह से कि यह कपड़ा मुझे ज़्यादा अच्छा लगता है। इसको पहनने से मेरा दिल ख़ुश होगा और अल्लाह तआ़ला ने मुझे इतनी वुस्अ़त दी है कि मैं दस रुपये के बजाए पन्द्रह रुपये गज़ वाला कपड़ा पहन सकता हूं, तो यह न फ़ुज़ूल ख़र्ची में दाख़िल है, और गुनाह भी नहीं है, बल्कि शरअ़न यह भी जायज़ है। इसलिये कि अल्लाह तआ़ला ने तुम्हें वुस्अ़त भी दी है, और तुम अपना दिल ख़ुश करने के लिए ऐसा कपड़ा पहन रहे हो, इसलिये जायज़ है।

मालदार को अच्छे कपड़े पहनना चाहिए

बल्कि जिस शख़्स की आमदनी अच्छी हो, उसके लिए ख़राब क़िस्म का कपड़ा और बहुत घटिया क़िस्म का लिबास पहनना कोई पसन्दीदा बात नहीं, चुनांचे हदीस शरीफ़ में है कि एक साहिब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने देखा कि वह साहिब बहुत बद शक्ल क़िस्म का पुराना लिबास पहने हुए हैं, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उन साहिब से पूछाः

"الك مال؟ قال نعم، قال: من اى المال؟ قال قد اتلنى الله من الابل والغنم والخيل والرقيق، قال: فاذا اتاك الله مالا فليرا ثرنعمة الله عليك وكرامته"

(ابو داؤد شريف)

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उस से पुछा: "तुम्हारे पास माल है? उसने कहा कि हां, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पूछा कि तेरे पास किस किस्म का माल है? उसने जवाब दिया कि या रसूलल्लाह, अल्लाह तआ़ला ने मुझे हर किस्म का माल अ़ता फ़रमाया है, यानी ऊंट, बकरियां, घोड़े और गुलमा सब हैं। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब अल्लाह तआ़ला ने तुम्हें माल दिया है तो उसके इनामात का कुछ असर तुम्हारे लिबास से भी ज़ाहिर होना चाहिए, ऐसा न हो कि अल्लाह तआ़ला ने तो सब कुछ दे रखा है, लेकिन फ़कीर और मांगने वाले की तरह फटे पुराने कपड़े पहने हुए हैं। यह तो एक तरह से अल्लाह तआ़ला की नेमत की नाशुक्री है। इसलिये अल्लाह तआ़ला की नेमत का असर ज़ाहिर होने का मतलब यह है कि अपने आराम की ख़ातिर और अपनी राहत की ख़ातिर, अपने को संवारने की ख़ातिर कोई शख़्स अच्छा और कीमती लिबास पहन ले तो इसमें भी कोई गुनाह नहीं, जायज़ है।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का कीमती लिबास पहनना

मैं तो यह कहता हूं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बारे में यह बात जो मशहूर हो गई है कि "काली कमली वाले" इस बात को हमारे शायरों ने बहुत मशहूर कर दिया। यह बात सही है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुबारक ज़िन्दगी का ज़्यादा हिस्सा सादगी की हालत में बसर हुआ है, लेकिन आप सल्ल० के बारे में जिस तरह यह मन्क़ूल है कि आप मोटा कपड़ा इस्तेमाल फ़रमाते थे, और जहां यह मन्क़ूल है कि आपने मोटी चादरें इस्तेमाल फ़रमायीं, इसी तरह आपके बारे में यह भी मन्क़ूल है कि एक बार आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक

करके इस दुनिया से तश्रीफ़ ले गए। चुनांचे आपने लिबास के बारे में फ़रमाया कि लिबास ऐसा होना चाहिए जो छुपाने वाला हो और छुपाने वाला होने के साथ साथ उस से थोड़ा सा आसाइश का मक़सद भी हासिल हो, यानी उस लिबास के ज़रिये जिस्म को राहत भी हासिल हो, आराम भी हासिल हो, ऐसा लिबास पहनने में कोई हर्ज नहीं। जैसे पतला लिबास पहन लिया, इस ख़्याल से कि जिस्म को आराम मिलेगा, इसमें कोई हर्ज नहीं, शर्अन जायज़ है। शरीअत ने इस पर कोई पाबन्दी लागू नहीं की। इसी तरह अपने दिल को ख़ुश करने के लिए ख़ुशनुमा और ज़ीनत का लिबास पहने तो यह भी जायज़ है। जैसे एक कपड़ा दस रुपये गज़ है और दूसरा कपड़ा पन्द्रह रुपये गज़ मिल रहा है, अब अगर एक शख़्स पन्द्रह रुपये गज़ वाला इसलिये ख़रीदे कि उसके ज़रिये मेरे जिस्म को आराम मिलेगा, या इस वजह से कि यह कपड़ा मुझे ज़्यादा अच्छा लगता है। इसको पहनने से मेरा दिल ख़ुश होगा और अल्लाह तआला ने मुझे इतनी वुस्अत दी है कि मैं दस रुपये के बजाए पन्द्रह रुपये गज़ वाला कपड़ा पहन सकता हूं, तो यह न फ़ुज़ूल ख़र्ची में दाख़िल है, और गुनाह भी नहीं है, बल्कि शर्अन यह भी जायज़ है। इसलिये कि अल्लाह तआला ने तुम्हें वुस्अत भी दी है, और तुम अपना दिल ख़ुश करने के लिए ऐसा कपड़ा पहन रहे हो, इसलिये जायज़ है।

मालदार को अच्छे कपड़े पहनना चाहिए

बल्कि जिस शख़्स की आमदनी अच्छी हो, उसके लिए ख़राब क़िस्म का कपड़ा और बहुत घटिया क़िस्म का लिबास पहनना कोई पसन्दीदा बात नहीं, चुनांचे हदीस शरीफ़ में है कि एक साहिब हुज़ुरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए, आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने देखा कि वह साहिब बहुत बद शक्ल क़िस्म का पुराना लिबास पहने हुए हैं, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन साहिब से पूछाः

"الك مال؟ قال نعم، قال: من اى المال؟ قال قد اتانى الله من الابل والغنم والخيل والرقيق، قال: فاذا اتاك الله مالا فلیرا ثرنعمة الله عليك وكرامته"

(ابو داؤد شریف)

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उस से पुछाः "तुम्हारे पास माल है? उसने कहा कि हां, आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पूछा कि तेरे पास किस क़िस्म का माल है? उसने जवाब दिया कि या रसूलल्लाह, अल्लाह तआला ने मुझे हर क़िस्म का माल अता फ़रमाया है, यानी ऊंट, बकरियां, घोड़े और गुलमा सब हैं। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब अल्लाह तआला ने तुम्हें माल दिया है तो उसके इनामात का कुछ असर तुम्हारे लिबास से भी ज़ाहिर होना चाहिए, ऐसा न हो कि अल्लाह तआला ने तो सब कुछ दे रखा है, लेकिन फकीर और मांगने वाले की तरह फटे पुराने कपड़े पहने हुए हैं। यह तो एक तरह से अल्लाह तआला की नेमत की नाशुक्री है। इसलिये अल्लाह तआला की नेमत का असर ज़ाहिर होने का मतलब यह है कि अपने आराम की ख़ातिर और अपनी राहत की ख़ातिर, अपने को संवारने की ख़ातिर कोई शख़्स अच्छा और कीमती लिबास पहन ले तो इसमें भी कोई गुनाह नहीं, जायज़ है।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का क़ीमती लिबास पहनना

मैं तो यह कहता हूं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बारे में यह बात जो मशहूर हो गई है कि "काली कमली वाले" इस बात को हमारे शायरों ने बहुत मशहूर कर दिया। यह बात सही है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुबारक ज़िन्दगी का ज़्यादा हिस्सा सादगी की हालत में बसर हुआ है, लेकिन आप सल्ल० के बारे में जिस तरह यह मन्कूल है कि आप मोटा कपड़ा इस्तेमाल फ़रमाते थे, और जहां यह मन्कूल है कि आपने मोटी चादरें इस्तेमाल फ़रमायीं, इसी तरह आपके बारे में यह भी मन्कूल है कि एक बार आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक

ऐसा जुब्बा इस्तेमाल फरमाया जिसकी कीमत दो हज़ार दीनार थी, वजह इसकी यह है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हर अमल शरीअत का हिस्सा बनना था, इसलिये हम जैसे कमज़ोरों के लिए यह भी बयान फ़रमाया कि अगर तुम अपनी जिस्मानी राहत और आराम के लिए कोई कीमती लिबास पहनना चाहते हो तो यह भी जायज़ है।

नुमाइश और दिखावा जायज़ नहीं

लेकिन अगर लिबास पहनने से न तो आराम मक्सद है, और न खुद को संवारना मक्सूद है, बल्कि नुमाइश और दिखावा मक्सूद है, ताकि लोग देखें कि हमने इतना शानदार कपड़ा पहना हुआ है, और इतना आला दर्जे का लिबास पहना हुआ है, और यह दिखाना मक्सूद है कि हम बड़े दौलत वाले बड़े पैसे वाले हैं, और दूसरों पर बड़ाई जताना और दूसरों पर रोब जमाना मक्सूद है, ये सब बातें नुमाइश में दाखिल हैं, और हराम हैं, इसलिये कि नुमाइश की ख़ातिर जो भी लिबास पहना जाए वह हराम है।

यहां शैख़ की ज़रूरत

इन दोनों बातों में बहुत बारीक फ़र्क है, कि अपना दिल खुश करना मक्सूद है या दूसरों पर अपनी बड़ाई जताना मक्सूद है, यह कौन फैसला करेगा कि यह लिबास अपना दिल खुश करने के लिए पहना या दूसरों पर बड़ाई जताने के लिए पहना? यह फैसला करना हर एक के बस का काम नहीं और इस मक्सद के लिए किसी इस्लाह करने वाले और रहनुमा की ज़रूरत पड़ती है, वह इन दोनों के दरमियान फ़र्क करके बता देता है कि इस वक्त जो कपड़े तुम पहन रहे हो और यह कह रहे हो कि अपना दिल खुश करने के लिए पहन रहा हूं, यह शैतान का धोखा है, हकीकत में इन कपड़ों के पहनने का मक्सद दूसरों पर बड़ाई ज़ाहिर करना है, और कभी कभी इसके उलट भी हो जाता है। बहर हाल, किसी इस्लाह करने वाले

ऐसा जुब्बा इस्तेमाल फ़रमाया जिसकी क़ीमत दो हज़ार दीनार थी, वजह इसकी यह है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हर अमल शरीअत का हिस्सा बनना था, इसलिये हम जैसे कमज़ोरों के लिए यह भी बयान फ़रमाया कि अगर तुम अपनी जिस्मानी राहत और आराम के लिए कोई क़ीमती लिबास पहनना चाहते हो तो यह भी जायज़ है।

नुमाइश और दिखावा जायज़ नहीं

लेकिन अगर लिबास पहनने से न तो आराम मक़्सद है, और न ख़ुद को संवारना मक़्सूद है, बल्कि नुमाइश और दिखावा मक़्सूद है, ताकि लोग देखें कि हमने इतना शानदार कपड़ा पहना हुआ है, और इतना आला दर्जे का लिबास पहना हुआ है, और यह दिखाना मक़्सूद है कि हम बड़े दौलत वाले बड़े पैसे वाले हैं, और दूसरों पर बड़ाई जताना और दूसरों पर रोब जमाना मक़्सूद है, ये सब बातें नुमाइश में दाख़िल हैं, और हराम हैं, इसलिये कि नुमाइश की ख़ातिर जो भी लिबास पहना जाए वह हराम है।

यहां शैख़ की ज़रूरत

इन दोनों बातों में बहुत बारीक फ़र्क़ है, कि अपना दिल ख़ुश करना मक़्सूद है या दूसरों पर अपनी बड़ाई जताना मक़्सूद है, यह कौन फ़ैसला करेगा कि यह लिबास अपना दिल ख़ुश करने के लिए पहना या दूसरों पर बड़ाई जताने के लिए पहना? यह फ़ैसला करना हर एक के बस का काम नहीं और इस मक़्सद के लिए किसी इस्लाह करने वाले और रहनुमा की ज़रूरत पड़ती है, वह इन दोनों के दरमियान फ़र्क़ करके बता देता है कि इस वक़्त जो कपड़े तुम पहन रहे हो और यह कह रहे हो कि अपना दिल ख़ुश करने के लिए पहन रहा हूं, यह शैतान का धोखा है, हक़ीक़त में इन कपड़ों के पहनने का मक़्सद दूसरों पर बड़ाई ज़ाहिर करना है, और कभी कभी इसके उलट भी हो जाता है। बहर हाल, किसी इस्लाह करने वाले

की ज़रूरत है और यह पीरी मुरीदी हकीकत में इसी काम के लिए होती है कि इस किस्म के कामों में उस से रहनुमाई हासिल की जाए। कि इस वक़्त मेरे साथ यह सूरते हाल है, बताइये कि इस वक़्त ऐसे कपड़े पहनूं या न पहनूं? वह इस्लाह करने वाला बताता है कि इस वक़्त ऐसे कपड़े पहनो, और इस वक़्त मत पहनो। दिखावे और आराम में यह बारीक फ़र्क़ है। दुनिया के जितने काम हैं चाहे वह लिबास हो, या खाना हो, या जूते हों, या मकान हो, उन सब में यह असल काम कर रही है जो हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने बयान फ़रमा दी है। यह बड़ा सुनेहरा उसूल है।

फ़ुज़ूल ख़र्ची और घमण्ड से बचें

इसी लिए हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का बड़ा उसूली इर्शाद है कि:

"كل ماشئت والبس ماشئت ما اخطئتك اثنتان: سرف ومخيلة"

(بخاری شریف)

यानी जो चाहो खाओ, जो चाहो पहनो, लेकिन दो चीज़ों से परहेज़ करो, एक फ़ुज़ूल ख़र्ची और दूसरे तकब्बुर से, मतलब यह है कि जिस तरह का कपड़ा चाहो पहनो, तुम्हारे लिए यह जायज़ है, लेकिन फ़ुज़ूल ख़र्ची न हो, और फ़ुज़ूल ख़र्ची उसी वक़्त होती है जब आदमी नुमाइश के लिए कपड़ा पहनता है। और दूसरे यह कि जिस कपड़े को पहन कर तकब्बुर पैदा हो, उस से बचो। लेकिन कौन से कपड़े से फ़ुज़ूल ख़र्ची हो गयी और कौन से कपड़े से तकब्बुर पैदा हो गया, इसके लिये किसी तबीब और इलाज करने वाले की ज़रूरत होती है। वह आकर बताता है कि यहां तकब्बुर हो गया, और यहां फ़ुज़ूल ख़र्ची हो गयी। बहर हाल, मैं यह अर्ज़ कर रहा था कि लिबास का दूसरा मक़्सद है ज़ीनत, लेकिन इस ज़ीनत की हदें हैं, बस उन शरीअत की हदों के अन्दर रह कर जितनी ज़ीनत कर सकते हो उसको इख़्तियार कर लो, लेकिन अगर उन हदों से बाहर

निकल कर ज़ीनत इख़्तियार करोगे तो यह हराम होगी, और ना जायज़ होगी।

फ़ैशन के पीछे न चलें

आज कल अजीब मिज़ाज बन गया है कि अपनी पसन्द या ना पसन्द का कोई मेयार नहीं, बस जो फ़ैशन चल गया वह पसन्द है, और जो चीज़ फ़ैशन से बाहर हो गई वह ना पसन्द है। एक ज़माने में एक चीज़ का फ़ैशन चल रहा था तो अब उसको पसन्द किया जाने लगा और उसकी तारीफ़ की जाने लगी कि यह बहुत अच्छी चीज़ है, और जब उसका फ़ैशन निकल गया तो अब उसी की बुराई शुरू हो गई। जैसे एक ज़माने में लम्बी और नीची क़मीस का फ़ैशन चल गया तो अब जिसको भी देखो वह लम्बी क़मीस पहन रहा है और उसके फ़ज़ाइल बयान कर रहा है, और उसकी तारीफ़ कर रहा है कि यह बहुत अच्छी चीज़ है, और जब ऊंची क़मीस पहनने का फ़ैशन चल पड़ा तो अब ऊंची क़मीस की तारीफ़ हो रही है और उसको पसन्दीदा क़रार दिया जा रहा है। यह फ़ैशन के ताबे होकर ख़ूबसूरती और बद सूरती को मुताय्यन करना सही नहीं, बल्कि अपने आपको जो चीज़ अच्छी लगे, और अपने ख़्याल को जो चीज़ ख़ूबसूरत लगे, उसके पहनने की शरीअत की तरफ़ से इजाज़त है।

मन भाता खाओ, मन भाता पहनो

हमारे यहां हिन्दी में एक कहावत मशहूर थी कि "खाए मन भाता और पहने जग भाता" यानी खाए तो वह चीज़ जो अपने मन को भाए, अपने दिल को अच्छी लगे, अपना दिल उस से खुश हो, और अपने आपको पसन्द हो। लेकिन लिबास वह पहने जो जग को भाए। जग से मुराद ज़माना, यानी जो ज़माने के लोगों को पसन्द हो। ज़माने के लोग जिसको पसन्द करें, और उनकी आंखों को अच्छा लगे। यह कहावत मशहूर है लेकिन यह इस्लामी उसूल नहीं, इस्लामी

उसूल यह है कि पहने भी मन भाता और खाए भी मन भाता, और "जग भाता" वाली बात न लिबास में दुरुस्त है और न खाने में दुरुस्त है, बल्कि शरीअत ने तो यह कहा है कि अपने दिल को खुश करने के लिए शरीअत की हदों में रहते हुए जो भी लिबास इस्तेमाल करो, वह जायज़ है। लेकिन फ़ैशन की इत्तिबा में लोगों को दिखाने के लिए और नुमाइश के लिए कोई लिबास इस्तेमाल कर रहे हो तो वह जायज़ नहीं।

औरतें और फ़ैशन परस्ती

इस मामले में आज कल ख़ास तौर पर औरतों का मिज़ाज सुधार के क़ाबिल है। औरतें यह समझती हैं कि लिबास अपने लिए नहीं बल्कि दूसरों के लिए है। इसलिये लिबास पहन कर अपने दिल को खुश करने का मामला बाद का है, असल यह है कि देखने वाले उस लिबास को देख कर उसको फ़ैशन के मुताबिक़ क़रार दें, और उसकी तारीफ़ करें, और हमारा लिबास देख कर लोग यह समझें कि ये बड़े लोग हैं, ये बातें औरतों में ज़्यादा पाई जाती हैं और इसका नतीजा यह है कि ये औरतें अपने घर में अपने शौहरों के सामने तो मैली कुचैली रहेंगी, और लिबास पहनने का ख़्याल भी नहीं आएगा, लेकिन जहां कहीं घर से बाहर निकलने की नौबत आ गई या किसी तक़रीब में शिर्कत की नौबत आ गई तो फिर उसके लिए इस बात का एहतिमाम किया जा रहा है कि वह लिबास फ़ैशन के मुताबिक़ हो, और उसके पहनने के नतीजे में वे लोग हमें दौलत मन्द समझें, इसका नतीजा यह है कि अगर एक लिबास एक तक़रीब के अन्दर पहन लिया तो अब वह लिबास दूसरी तक़रीब के अन्दर नहीं पहना जा सकता, अब वह लिबास हराम हो गया। इसलिये कि अगर वही लिबास पहन कर दूसरी तक़रीब में चले गए तो दूसरी औरतें यह समझेंगी कि इनके पास तो एक ही जोड़ा है। सब जगह वही एक जोड़ा पहन कर आ जाती हैं, जिसकी वजह से हमारी बे इज़्ज़ती हो

जायेगी। हक़ीक़त में इन बातों के पीछे नुमाइश का जज़्बा है और यह नुमाइश का जज़्बा मना है, लेकिन नुमाइश के इरादे और एहतिमाम के बग़ैर कोई औरत अपने दिल को ख़ुश करने के लिए आज एक जोड़ा पहन ले और कल को दूसरा जोड़ा पहन ले, और अल्लाह ने अता भी फ़रमाया है, तो इसमें कोई हरज नहीं।

हज़रत इमाम मालिक रहमतुल्लाहि अलैहि और नये जोड़े

हमारे बुज़ुर्गों में भी ऐसे लोग गुज़रे हैं जो बहुत अच्छा और उम्दा लिबास पहना करते थे, हज़रत इमाम मालिक रहमतुल्लाहि अलैहि का नाम आपने सुना होगा, जो बड़े दर्जे के इमाम गुज़रे हैं। मदीना तैयबा के रहने वाले, इमामे दारुल हिज्रत, उनके बारे में एक जगह लिखा हुआ देखा कि वह हर दिन एक नया जोड़ा पहना करते थे, गोया कि उनके लिए साल में तीन सौ साठ जोड़े बनते थे, और जो जोड़ा एक दिन पहना, वह दोबारा बदन पर नहीं आता था। दूसरे दिन दूसरा जोड़ा तीसरे दिन तीसरा जोड़ा। किसी को ख़्याल आया कि हर दिन नया जोड़ा पहनना तो फ़ुज़ूल ख़र्ची है, चुनांचे उसने आपसे कहा कि हज़रत यह रोज़ाना नया जोड़ा पहनना तो फ़ुज़ूल ख़र्ची में दाख़िल है? उन्हों ने जवाब दिया कि मैं क्या करूं, बात असल में यह है कि जब साल शुरू होता है तो मेरा एक दोस्त तीन सौ साठ जोड़े सिलवा कर मेरे घर ले आता है, और यह कहता है कि यह आपका रोज़ का एक जोड़ा है, अब मैंने ख़ुद से तो इस बात का एहतिमाम नहीं किया कि रोज़ाना एक जोड़ा पहनूं, अगर मैं इन जोड़ों को वापस कर दूं तो उसका दिल तोड़ने वाली बात होती है, और अगर न पहनूं तो भी उसका मक़्सद हासिल नहीं होगा, इसलिये कि उसका हदिया देने का मक़्सद यह है कि मैं रोज़ाना नया जोड़ा पहनूं। इसलिये मैं रोज़ाना एक जोड़ा बदलता हूं। और उसको उतारने के बाद किसी मुस्तहिक़ को दे देता हूं, जिसकी वजह से

बहुत से अल्लाह के बन्दों का भला हो जाता है। बहर हाल, उनका रोज़ाना नया जोड़ा पहनना अपने दिल को खुश करने के लिए था, दिखावे के लिए नहीं था, और जिसने हदिया दिया था उसका दिल खुश करने की ख़ातिर पहन लिया।

हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि का एक वाक़िआ

एक बड़ा अजीब व ग़रीब वाक़िआ याद आ गया, यह वाक़िआ मैं ने अपने वालिद माजिद रहमतुल्लाहि अलैहि से सुना है, बड़ा सबक़ आमोज़ वाक़िआ है, वह यह कि हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी साहिब की दो बीवियां थीं, एक बड़ी और एक छोटी, दोनों का हज़रते वाला से बहुत ताल्लुक़ था। लेकिन बड़ी पीरानी साहिबा पुराने वक़्तों की थीं, और हज़रते वाला को ज़्यादा से ज़्यादा आराम पहुंचाने की फ़िक्र में रहती थीं, ईद आने वाली थी, हज़रत पीरानी साहिबा के दिल में ख़्याल आया कि हज़रते वाला के लिए किसी उम्दा और अच्छे कपड़े का अच्कन बनाया जाए, उस ज़माने में एक कपड़ा चला करता था, जिसका नाम था "आंख का नशा" यह बड़ा शोख़ किस्म का कपड़ा होता था। अब हज़रते वाला से पूछे बग़ैर कपड़ा ख़रीद कर उसका अच्कन सीना शुरू कर दिया और हज़रते वाला को इस ख़्याल से नहीं बताया कि अच्कन सिलने के बाद जब अचानक मैं उनको पेश करूंगी तो अचानक मिलने से खुशी ज़्यादा होगी, और सारा रमज़ान उसके सीने में मश्गूल रहीं, इसलिये कि उस ज़माने में मशीन का रिवाज तो था नहीं, हाथ से सिलाई होती थी, चुनांचे जब वह सिलकर तैयार हो गया तो ईद की रात को वह अच्कन हज़रते वाला की ख़िदमत में पेश करके कहा कि मैंने आपके लिए यह अच्कन तैयार किया है, मेरा दिल चाह रहा है कि आप इसको पहन कर ईदगाह जायें, और ईद की नमाज़ पढ़ें। अब कहां हज़रते वाला का मिज़ाज और कहां वह शोख़ अच्कन, वह तो हज़रते वाला के मिज़ाज के बिल्कुल ख़िलाफ़ था, लेकिन हज़रत फ़रमाते हैं कि अगर

मैं पहनने से इन्कार करूं तो उनका दिल टूट जायेगा, इसलिये कि उन्हों ने तो पूरा रमज़ान उसके सीने में मेहनत की और मुहब्बत से मेहनत की। इसलिये आपने उनका दिल रखने के लिए फ़रमाया कि तुमने तो यह माशा-अल्लाह बड़ा अच्छा अच्कन बनाया है, और फिर आपने वह अच्कन पहना और ईदगाह में पहुंचे और नमाज़ पढ़ाई, जब नमाज़ से फ़ारिग़ हुए तो एक आदमी आपके पास आया, और कहा कि हज़रत आपने यह जो अच्कन पहन रखा है यह आपको ज़ेब नहीं देता, इसलिये कि यह बहुत शोख़ किस्म का अच्कन है। हज़रते वाला ने जवाब में फ़रमाया कि हां भाई तुम बात तो ठीक कह रहे हो, और यह कह कर फिर आपने वह अच्कन उतारा और उसी शख़्स को दे दिया कि यह तुम्हें हदिया है, इसको तुम पहन लो।

दूसरे का दिल खुश करना

उसके बाद हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने यह वाक़िआ मेरे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि को सुनाया कि जिस वक़्त मैं वह अच्कन पहन कर ईदगाह की तरफ़ जा रहा था तो कुछ न पूछो कि उस वक़्त मेरा दिल कितना कट रहा था, इसलिये कि सारी उमर इस किस्म का शोख़ लिबास कभी नहीं पहना, लेकिन दिल में उस वक़्त यह नियत थी कि जिस अल्लाह की बन्दी ने मेहनत के साथ इसको सिला है उसका दिल खुश हो जाए। तो उसका दिल ख़ुश करने के लिए अपने ऊपर यह मशक़्क़त बर्दाश्त कर ली और उसके पहनने पर ताने भी सहे, इसलिये कि लोगों ने उसके पहनने पर ताने भी दिए कि कैसा लिबास पहन कर आ गए, लेकिन घर वालों का दिल ख़ुश करने के लिए यह काम किया।

बहर हाल, इन्सान अच्छे से अच्छा लिबास अपना दिल खुश करने के लिए पहने, अपने घर वालों का दिल ख़ुश करने के लिए पहने। और किसी हदिया तोहफ़ा देने वाले का दिल ख़ुश करने के

लिए पहने तो इसमें कोई हरज नहीं, लेकिन अच्छा लिबास इस मक़्सद के लिए पहनना कि लोग मुझे बड़ा समझें, मैं फ़ैशन ऐबल नज़र आऊं, मैं दुनिया वालों के सामने बड़ा बन जाऊं, और नुमाइश और दिखावे के लिए पहने तो यह अज़ाब की चीज़ है और हराम है, इस से बचना चाहिए।

लिबास के बारे में तीसरा उसूल

लिबास के बारे में शरीअ़त ने जो तीसरा उसूल बयान फ़रमाया, वह है "तशब्बोह से बचना" यानी ऐसा लिबास पहनना जिसको पहन कर इन्सान किसी क़ौम का फ़र्द नज़र आए, और इस मक़्सद से वह लिबास पहने, ताकि मैं उन जैसा हो जाऊं, इसको शरीअ़त में तशब्बोह कहते हैं। दूसरे लफ़्ज़ों में यों कहा जाए कि किसी ग़ैर मुस्लिम क़ौम की नक़्क़ाली की नियत से कोई लिबास पहनना, इस से नज़र हटा कर कि वह चीज़ हमें पसन्द है या नहीं? वह अच्छी है या बुरी है? लेकिन चूंकि फ़लां क़ौम की नक़्क़ाली करनी है बस उनकी नक़्क़ाली के पेशे नज़र उस लिबास को इख़्तियार किया जा रहा है। इसको "तशब्बोह" कहा जाता है। इस नक़्क़ाली पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बड़ी सख़्त वईद इर्शाद फ़रमाई है। चुनांचे इर्शाद फ़रमाया कि:

"من تشبه بقوم فهو منهم" (ابوداؤد شریف)

यानी जो शख़्स किसी क़ौम के साथ तशब्बोह इख़्तियार करे, उसकी नक़्क़ाली करे और उन जैसा बनने की कोशिश करे तो वह उन्हीं में से है। गोया कि वह मुसलमानों में से नहीं है, उसी क़ौम का एक फ़र्द है, इसलिये कि यह शख़्स उन्हीं को पसन्द कर रहा है, उन्हीं से मुहब्बत रखता है, उन्हीं जैसा बनना चाहता है, तो अब तेरा हश्र भी उन्हीं के साथ होगा, अल्लाह तआ़ला महफ़ूज़ फ़रमाए, आमीन।

"तशब्बोह" की हकीकत

तशब्बोह के बारे में यह बात समझ लेनी चाहिए कि यह "तशब्बोह" कब पैदा होती है? और कब इसकी मनाही आती है? पहली बात तो यह है कि किसी ऐसे काम में दूसरी कौम की नक्काली करना जो अपने आप में बुरा काम है, और शरीअत के उसूल के खिलाफ़ है। ऐसे काम में नक्काली तो हराम है। दूसरे यह कि वह काम अगरचे अपने आप में तो बुरा नहीं है, बल्कि दुरुस्त है, लेकिन यह शख़्स इस ग़र्ज़ से वह काम कर रहा है कि मैं उन जैसा नज़र आऊं, और देखने में उन जैसा लगूं, और एहतिमाम करके उन जैसा बनने की कोशिश कर रहा है। इस सूरत में वह दुरुस्त काम भी हराम और ना जायज़ हो जाता है।

गले में जुन्नार डालना

जैसे हिन्दू अपने गले में जुन्नार (वह धागा हिन्दू गले या बग़ल के दर्मियान पहने रहते हैं, या वह धागा या ज़ंजीर जो ईसाई, आग को पूजने वाले यानी मजूसी और यहूदी अपनी कमर में बांधते हैं, इसी तरह निशानी के तौर पर जैसे आज कल हिन्दू अपने हाथ पर लाल धागा बांधे रहते हैं वह भी इसमें दाख़िल माना जायेगा) डाला करते हैं, अब यह जुन्नार एक तरह का हार ही होता है। अगर कोई मुसलमान वैसे ही इत्तफ़ाक़न डाल ले तो कोई गुनाह का काम नहीं है, ना जायज़ और हराम काम नहीं है, बल्कि पहन सकता है। लेकिन अगर कोई शख़्स इस मक़सद के लिए अपने गले में "जुन्नार" डाल रहा है ताकि मैं उन जैसा लगूं तो यह ना जायज़ और हराम है, और "तशब्बोह" में दाख़िल है।

माथे पर क़श्क़ा (बिंदिया) लगाना

या जैसे हिन्दू औरतें अपने माथे पर सुर्ख़ क़श्क़ा (बिंदिया) लगाती हैं, अब अगर मान लो हिन्दू औरतों में इस तरह का क़श्क़ा (बिंदिया) लगाने का रिवाज न होता, और मुसलमान औरत ख़ूबसूरती

और ज़ीनत के लिए लगाती तो यह काम अपने आप में जायज़ था। कोई ना जायज़ और हराम नहीं था। लेकिन अब एक औरत कश्का (बिंदिया) इसलिये लगा रही है ताकि मैं उनका फैशन इख़्तियार करूं, और उन जैसी नज़र आऊं, तो इस सूरत में यह कश्का (बिंदिया) लगाना हराम है, ना जायज़ है। हिन्दुस्तान में मुसलमान औरतें तो उनकी मुशाबहत इख़्तियार करने के लिए यह कश्का (बिंदिया) लगाती हैं, लेकन अब सुना है कि यहां पाकिस्तान में भी औरतों में कश्का (बिंदिया) लगाने का रिवाज शुरू हो गया है, हालांकि यहां हिन्दू औरतों के साथ रहन सहन भी नहीं है। इसके बावजूद औरतें अपने माथे पर यह कश्का (बिंदिया) लगाती हैं तो यह उनके साथ "तशब्बोह" इख़्तियार करना है। जो हराम और ना जायज़ है। इसलिये अगर कोई अमल जो अगरचे अपनी ज़ात में जायज़ और दुरुस्त हो, मगर उसके ज़रिये दूसरी कौमों के साथ मुशाबहत पैदा करना मक़्सूद हो तो उसको "तशब्बोह" कहते हैं। जिसको हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ना जायज़ और हराम क़रार दिया है।

दूसरी क़ौम की नक़्क़ाली जायज़ नहीं

इसी ऊपर लिखे गये उसूल की बुनियाद पर यह कहा जायेगा कि जो लिबास किसी भी क़ौम का शिआर बन चुके हैं। यानी वह लिबास उस कौम की ख़ुसूसी पहचान बन चुका है, अगर उनकी नक़्क़ाली की ग़र्ज़ से ऐसा लिबास इख़्तियार किया जायेगा तो वह हराम और ना जायज़ होगा और गुनाह होगा। जैसे आज कल मर्दों में कोट पतलून का रिवाज चल पड़ा है। इसमें बाज़ बातें तो अपने आप में ना जायज़ हैं। चाहे उसमें तशब्बोह पाया जाये या न पाया जाए। चुनांचे एक ख़राबी तो यह है कि यह पतलून टख़्ने से नीचे पहनी जाती है, और कोई लिबास भी मर्दों के लिए टख़्नों से नीचे पहनना जायज़ नहीं। दूसरी ख़राबी यह है कि अगर पतलून ऐसी चुस्त हो

कि उसकी वजह से आज़ा (जिस्म के अंग) नुमायां हों, तो फिर लिबास का जो बुनियादी मक़्सद था, यानी "सतर" करना, वह हासिल न हुआ, तो फिर वह लिबास शरअी लिहाज़ से बेमानी और बेकार है। इसलिये इन दो ख़राबियों की वजह से अपने आप में पतलून पहनना जायज़ नहीं, लेकिन अगर कोई शख़्स इस बात का एहतिमाम करे कि वह पतलून चुस्त न हो, बल्कि ढीली ढाली हो, और इसका एहतिमाम करे कि वह पतलून टख़्नों से नीचे न हो तो ऐसी पतलून पहनना अपने आप में दुरुस्त है।

पतलून पहनना

लेकिन अगर कोई शख़्स पतलून इस मक़्सद से पहने ताकि मैं अंग्रेज़ नज़र आऊं, और उनकी नक़्क़ाली करूं, और उन जैसा बन जाऊं, तो इस सूरत में पतलून पहनना हराम और ना जायज़ है, और "तशब्बोह" में दाख़िल है। लेकिन अगर नक़्क़ाली मक़्सूद नहीं है, और इस बात का भी एहतिमाम कर रहा है कि पतलून टख़्नों से ऊंची हो और ढीली हो, तो ऐसी सूरत में उसके पहनने को हराम तो नहीं कहेंगे लेकिन अपनी ज़ात के ऐतबार से उस पतलून का पहनना अच्छा नहीं, और फिर भी कराहत से ख़ाली नहीं। क्यों? इस बात को ज़रा ग़ौर से समझ लें।

तशब्बोह और मुशाबहत में फ़र्क़

वह यह कि दो चीज़ें अलग अलग हैं, एक "तशब्बोह" और एक है "मुशाबहत" दोनों में फ़र्क़ है। "तशब्बोह के मायने तो यह हैं कि आदमी इरादा करके नक़्क़ाली करे, और इरादा करके उन जैसा बनने की कोशिश करे, यह तो बिल्कुल ही ना जायज़ है। दूसरी चीज़ है "मुशाबहत" यानी उस जैसा बनने का इरादा तो नहीं किया था, लेकिन इस अमल से उनके साथ मुशाबहत ख़ुद बख़ुद पैदा हो गई। तो यह "मुशाबहत" जो ख़ुद बख़ुद पैदा हो जाए यह हराम नहीं, लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बिला ज़रूरत

मुशाबहत पैदा होने से भी बचने की ताकीद फ़रमाई है। फ़रमाया कि इसकी कोशिश करो कि उनसे फ़र्क़ रहे। मुसलमान क़ौम और मुसलमान मिल्लत का एक फ़र्क़ और नुमायां पन होना चाहिए। ऐसा न हो कि देख कर पता न चले कि यह आदमी मुसलमान है या नहीं, सर से पांव तक अपना हुलिया ऐसा बना रखा है कि देख कर यह पता ही नहीं चलता कि यह मुसलमान है कि नहीं, इसको सलाम करें या न करें, जिन चीज़ों के करने की गुंजाइश और इजाज़त है उनके ज़रिये भी ऐसा हुलिया बनाना जायज़ नहीं।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मुशाबहत से दूर रहने का एहतिमाम

आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने "मुशाबहत" से बचने का इतना एहतिमाम फ़रमाया कि मुहर्रम की दस तारीख़ को आशूरा के दिन रोज़ा रखना बड़ी फ़ज़ीलत का काम है, और जब आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हिजरत करके मदीना मुनव्वरा तश्रीफ़ लाए तो शुरू में आशूरा का रोज़ा फ़र्ज़ था, और रमज़ान के रोज़े उस वक़्त तक फ़र्ज़ नहीं हुए थे, और जब रमज़ान के रोज़े फ़र्ज़ हो गए तो आशूरा के रोज़े की फ़र्ज़ियत ख़त्म हो गई। अब फ़र्ज़ तो न रहा लेकिन नफ़्ल और मुस्तहब बन गया। लेकिन जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यह मालूम हुआ कि यहूदी भी आशूरा के दिन रोज़ा रखते हैं, अब ज़ाहिर है कि अगर मुसलमान आशूरा के दिन रोज़ा रखेंगे तो वे यहूदियों की नक़्क़ाली में तो नहीं रखेंगे, वे तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इत्तिबा में रखेंगे, लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अगर आइन्दा साल मैं ज़िन्दा रहा तो आशूरा के साथ एक रोज़ा और मिला कर रखूंगा, या नवीं तारीख़ का रोज़ा या ग्यारहवीं तारीख़ का रोज़ा, ताकि यहूदियों के साथ मुशाबहत पैदा न हो, बल्कि उनसे अलाहिदगी और फ़र्क़ पैदा हो जाए। (मुस्नद अहमद)

अब देखिए कि रोज़े जैसी इबादत में भी आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुशाबहत पैदा होने को पसन्द नहीं फ़रमाया, इसलिये आपने फ़रमाया कि जब आशूरा का रोज़ा रखो तो उसके साथ या तो नवीं तारीख़ का रोज़ा मिला लो, या ग्यारहवीं तारीख़ का रोज़ा मिला लो, ताकि यहूदियों के साथ मुशाबहत भी पैदा न हो। इसलिये "तशब्बोह" तो हराम है, लेकिन "मुशाबहत" पैदा हो जाना भी कराहत से ख़ाली नहीं, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस से भी बचने का हुक्म फ़रमाया है।

मुश्रिकीन की मुख़ालिफ़त करो

एक हदीस शरीफ़ में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"خالفوا المشركين" (بخاری شریف)

यानी मुश्रिकीन के तरीक़ों की मुख़ालिफ़त करो, यानी उन्हों ने जैसे तरीक़े इख़्तियार किए हैं तुम उनसे अलग तरीक़ा बनाओ, चुनांचे एक हदीस में फ़रमाया:

"فرق ما بيننا وبين المشركين العمائم على القلانس" (ابوداؤدشریف)

यानी हमारे और मुश्रिकीन के दरमियान फ़र्क़ टोपी पर अमामा (पगड़ी) पहनना है, यानी मुश्रिकीन अमामे (पगड़ी) के नीचे टोपियां नहीं पहनते हैं, तुम उनकी मुख़ालिफ़त करो, और अमामे (पगड़ी) के नीचे टोपी पहना करो, हालांकि बग़ैर टोपी के अमामा (पगड़ी) पहनना कोई ना जायज़ और हराम नहीं, लेकिन ज़रा सी मुशाबहत से बचने के लिए हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह हुक्म फ़रमा दिया कि टोपी के ऊपर अमामा (पगड़ी) पहनो, ताकि उन जैसा होना लाज़िम न आए, इसलिये बिला वजह किसी दूसरी क़ौम की मुशाबहत इख़्तियार करना अच्छा नहीं है। आदमी इस से जितना बचे बेहतर है। इसी लिये हज़राते सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम इसका बहुत एहतिमाम फ़रमाते थे कि दूसरी क़ौमों की

मुशाबहत पैदा न हो।

मुसलमान एक आला व अफ़्ज़ल क़ौम है

सोचने की बात है कि जब अल्लाह तआ़ला ने तुमको एक अलग क़ौम बनाया, और अपने गिरोह में शामिल फ़रमा कर तुम्हारा नाम "हिज़्बुल्लाह" रखा, यानी अल्लाह का गिरोह, सारी दुनिया एक तरफ़ और तुम एक तरफ़। क़ुरआने करीम ने बयान फ़रमाया कि बुनियादी तौर पर पूरी दुनिया में दो जमाअ़तें हैं, चुनांचे फ़रमाया कि:

"خَلَقَكُمْ فَمِنْكُمْ كَافِرٌ وَّمِنْكُمْ مُّؤْمِنٌ" (سورة التغابن:٢)

यानी दो जमाअ़तें हैं। एक काफ़िर और एक मोमिन, इसलिये मोमिन को कभी काफ़िर की जमाअ़त के साथ गड–मड न होना चाहिए। इसका फ़र्क़ होना चाहिए उसके लिबास में, उसकी पोशाक में उसकी शक्ल व सूरत में, उसके उठने बैठने में, उसके तरीक़े अदा में। हर चीज़ में इस्लामी रंग नुमायां होना चाहिए, अब अगर मुसलमान दूसरों का तरीक़ा इख़्तियार कर ले तो उसके नतीजे में वह इम्तियाज़ (यानी जो उसकी एक अलग शान है) मिट जायेगा।

अब आज देख लो कि यह जो तरीक़ा चल पड़ा है कि सब का लिबास एक जैसा है, अगर तुम किसी मज्मे में जाओगे तो यह पता लगाना मुश्किल होगा कि कौन मुसलमान है कौन मुसलमान नहीं, न लिबास से, न पोशाक से, न किसी और अन्दाज़ से, यह पता नहीं लगा सकते, अब इसको सलाम करें या ने करें? और इस से किस क़िस्म की बातें करें। इसलिये इन ख़राबियों का दरवाज़ा बन्द करने के लिए हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तशब्बोह से भी बचो इसलिये कि वह तो बिल्कुल हराम है, और "मुशाबहत" से भी बचो। और यह मुशाबहत भी कराहत यानी ना पसन्दीदगी से ख़ाली नहीं है और अच्छी भी नहीं है।

यह बे-ग़ैरती की बात है

यह कितनी बे-ग़ैरती की बात है कि इन्सान एक ऐसी क़ौम का लिबास पसन्द करके उसको इख़्तियार करे, जिस क़ौम ने तुम्हें हर तरीक़े से गुलामी की चक्की में पीसा, तुम्हारे ऊपर ज़ुल्म व सितम तोड़े, तुम्हारे ख़िलाफ़ साज़िशें कीं, तुम्हें मौत के घाट उतारा और ज़ुल्म व सितम का कोई तरीक़ा ऐसा नहीं है जो उसने छोड़ा हो, अब तुम ऐसी क़ौम के तरीक़ों को इज़्ज़त और एहतिराम के साथ इख़्तियार करो, यह कितनी बे-ग़ैरती की बात है।

अंग्रेज़ों की तंग नज़री

लोग हमें यह कहते हैं कि आप जो इस क़िस्म का लिबास पहनने से मना करते हैं यह तंग नज़री की बात है, और ऐसी बात कहने वालों को तंग नज़र कहा जाता है। हालांकि जिस क़ौम का लिबास तुम इख़्तियार कर रहे हो, उसकी तंग नज़री और मुसलमान दुश्मनी का आलम यह है कि जब उसने हिन्दुस्तान पर क़ब्ज़ा किया तो हमारे मुग़ल मुसलमान बादशाहों का जो लिबास था, यानी पगड़ी और ख़ास शलवार क़मीस उसने वह लिबास अपने ख़ानंसामों को पहनाया, अपने बैरों को पहनाया, अपने चौकीदारों को पहनाया और उसने उनको यह लिबास पहनने पर मज्बूर किया। ऐसा क्यों किया? सिर्फ़ मुसलमानों को ज़लील करने के लिए और यह दिखाने के लिए कि देखो, हमने तुम्हारे बादशाहों का लिबास अपने नौकरों को, अपने ख़ानसामों को और बैरों को पहनाया, इस क़ौम की तंग नज़री का तो यह आलम है और माशा अल्लाह हमारी दरिया दिली का यह आलम है कि हम उनका लिबास बड़े फ़ख़्र से और बड़े ज़ौक़ व शौक़ से पहनने के लिए तैयार हैं। अब अगर उनसे कोई कहे कि यह लिबास पहनना ग़ैरत के ख़िलाफ़ है तो उसको कहा जाता है कि तू तंग नजर है।

ख़िरद का नाम जुनूं रख दिया जुनूं का ख़िरद
जो चाहे आपका हुस्ने करिश्मा साज़ करे

बहर हाल, इसमें शरआ़ी बुराई के अ़लावा बड़ी बे-ग़ैरती की भी बात है।

तुम अपना सब कुछ बदल डालो, लेकिन......

यह बात भी ख़ूब समझ लो कि तुम कितना ही उनका लिबास पहन लो, और कितना ही उनका तरीक़ा इख़्तियार कर लो, मगर तुम फिर भी उनकी निगाह में इज़्ज़त नहीं पा सकते, कुरआने करीम ने साफ़ साफ़ कह दिया है कि:

"وَلَنْ تَرْضٰى عَنْكَ الْيَهُوْدُ وَلَا النَّصٰرٰى حَتّٰى تَتَّبِعَ مِلَّتَهُمْ" (البقرة: ١٢٠)

ये यहूद और नसारा तुम से कभी भी राज़ी नहीं होंगे, जब तक तुम इनकी मिल्लत को इख़्तियार नहीं कर लोगे, उनके नज़रियात, उनके ईमान, उनके दीन को इख़्तियार नहीं कर लोगे, उस वक़्त तक वे तुम से राज़ी नहीं होंगे।

इसलिये अब तुम अपना लिबास बदल लो, पोशाक बदल लो, सरापा बदल लो, जिस्म बदल लो, जो चाहो बदल लो, लेकिन वे तुम से राज़ी होने को तैयार नहीं। चुनांचे तुम ने तजुर्बा करके देख लिया, सब कुछ करके देख लिया, सब कुछ उनकी नक़्क़ाली पर फ़ना करके देख लिया, सर से लेकर पांव तक तुम ने अपने आपको बदल लिया, क्या तुम से वे लोग खुश हो गए? क्या तुम से राज़ी हो गए? क्या तुम्हारे साथ उन्हों ने हमदर्दी का बर्ताव शुरू कर दिया? आज भी उनकी दुश्मनी का वही आ़लम है, और इस लिबास की वजह से उनके दिल में तुम्हारी इज़्ज़त कभी पैदा नहीं हो सकती।

इक़बाल मरहूम की मग़रिबी ज़िन्दगी पर टिप्पणी

इक़बाल मरहूम ने नसर के अन्दाज़ में तो बहुत गड़ बड़ बातें भी की हैं, लेकिन शेरों में कभी कभी बड़ी हिक्मत की बातें कह देते हैं। चुनांचे मग़रिबी लिबास और मग़रिबी ज़िन्दगी के तरीक़े वग़ैरह पर

तब्सिरा (टिप्पणी) करते हुए उन्हों ने कहा है कि:

कुव्वते मग़रिब न अज़ चंग व रबाब
ने ज़-रक़्से दुख़्तराने बे हिजाब
ने ज़-सहरे साहिराने लाला ज़ोस
ने ज़-उर्यां साक़ ने अज़ क़त्ए मोश

यानी मगरिबी मुल्कों के अन्दर जो कुव्वत नज़र आ रही है, यह इस चंग व रबाब की वजह से नहीं। मौसीक़ी और गानों की वजह से नहीं, और लड़कियों के बेपर्दा होने और उनके नाचने गाने की वजह से भी नहीं है, और यह तरक़्क़ी इस वजह से भी नहीं है कि उनकी औरतों ने सर के बाल काट कर पट्ठे बना लिये, और न इस वजह से है कि उन्हों ने अपनी पिन्डली नंगी कर लीं। आगे कहते हैं कि:

कुव्वते अफ़रंग अज़ इल्म व फ़न अस्त
अज़ हमीं आतिशे चिराग़श रोशन अस्त

यानी जो कुछ कुव्वत है वह उनकी मेहनत की वजह से है, इल्म व हुनर की वजह से है, और इसी वजह से वे तरक़्क़ी कर रहे हैं, फिर आख़िर में कहा कि:

हिक्मत अज़ क़ता व बुरीद जामा नेस्त
माने-ए-इल्म व हुनर अमामा नेस्त

यानी हिक्मत और हुनर किसी ख़ास क़िस्म का लिबास पहनने से हासिल नहीं होती, और अमामा पहनने से इल्म व हुनर हासिल होने में कोई रुकावट पैदा नहीं होती। बहर हाल, असल चीज़ जो हासिल करने की थी वह तो हासिल की नहीं, और लिबास व पोशाक और तरीके ज़िन्दगी में उनकी नक़ल उतार कर उनके आगे भी अपने आप को ज़लील कर लिया। दुनिया से इज़्ज़त वही कराता है जिसको अपने तरीके ज़िन्दगी से इज़्ज़त हो। अगर दिल में अपनी इज़्ज़त नहीं, अपने तरीके की इज़्ज़त नहीं तो फिर वह दुनिया से क्या इज़्ज़त करायेगा। इसलिये तुम्हारा यह अन्दाज और यह तरीका

उनको कभी पसन्द नहीं आयेगा चाहे तुम उनके तरीक़ों में डूब कर देख लो, और अपने आप को पूरी तरह बदल कर देख लो।

तशब्बोह और मुशाबहत दोनों से बचो

बहर हाल फ़त्वे की बात तो वह है जो मैंने पहले अर्ज़ की कि "तशब्बोह" तो ना जायज़, हराम और गुनाह है, और "तशब्बोह" का मतलब यह है कि इरादा करके उन जैसा बनने की कोशिश करना, और "मुशाबहत" के मायने यह हैं कि उन जैसा बनने का इरादा तो नहीं था लेकिन कुछ मुशाबहत पैदा हो गई। यह गुनाह और हराम तो नहीं है, लेकिन कराहत से ख़ाली नहीं, और गैरत के तो बिल्कुल ख़िलाफ़ है। इसलिये इन दोनों से बचने की ज़रूरत है। यह लिबास का तीसरा उसूल था।

लिबास के बारे में चौथा उसूल

लिबास के बारे में चौथा उसूल यह है कि ऐसा लिबास पहनना हराम है जिसको पहन कर दिल में तकब्बुर और बड़ाई पैदा हो जाए। चाहे वह लिबास टाट ही का क्यों न हो। जैसे अगर कोई एक शख़्स टाट का लिबास पहने और मक़्सद उसका यह हो कि यह पहन कर लोगों की नज़रों में बड़ा बुज़ुर्ग और सूफ़ी नज़र आऊं, और मुत्तक़ी परहेज़गार बन जाऊं, और फिर उसकी वजह से दूसरों पर अपनी बड़ाई का ख़्याल दिल में आ जाए, और दूसरों की तहक़ीर (ज़लील समझना) पैदा हो जाए तो ऐसी सूरत में वह टाट का लिबास भी तकब्बुर का ज़रिया और सबब है, इसलिये हराम है। हज़रत सुफ़ियान सौरी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि तकब्बुर कपड़े पहनने से नहीं होता बल्कि दूसरों की हक़ारत (ज़लील समझना) दिल में लाने से होता है, इसलिये कभी कभी एक शख़्स यह समझता है कि मैं बड़ा तवाज़ो वाला लिबास पहन रहा हूं और हक़ीक़त में उसके अन्दर तकब्बुर भरा होता है।

टख़्ने छुपाना जायज़ नहीं

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स अपने कपड़े को तकब्बुर के साथ नीचे घसीटे तो अल्लाह तआला क़ियामत के दिन उसको रहमत की निगाह से देखेंगे भी नहीं।

(बुख़ारी शरीफ़)

दूसरी हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मर्द के कपड़े के नीचे का जितना टख़्नों से नीचे होगा वह हिस्सा जहन्नम में जायेगा, इस से मालूम हुआ कि मर्दों के लिए टख़्नों से नीचे पाजामा, शलवार, पतलून, लुंगी वग़ैरह पहनना जायज़ नहीं, और उस पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दो दो वईदें बयान फ़रमायीं, एक यह कि टख़्नों से नीचे जितना हिस्सा होगा वह जहन्नम में जायेगा, और दूसरे यह कि क़ियामत के दिन अल्लाह तआला ऐसे शख़्स की तरफ़ रहमत की निगाह से देखेगा भी नहीं। अब देखिए कि टख़्नों से ऊपर पाजामा वग़ैरह पहनना एक मामूली बात है, अगर एक इंच ऊपर शलवार पहन ली तो इस से क्या आफ़त और मुसीबत आ जायेगी? कौन सा आसमान टूट पड़ेगा? लेकिन अल्लाह तआला की नाराज़गी से बच जाओगे और अल्लाह तआला की नज़रे रहमत हासिल होगी। और यह ऐसा गुनाहे बे-लज़्ज़त है कि जिस में पूरी की पूरी कौम मुब्तला है, किसी को फ़िक्र ही नहीं।

टख़्ने छुपाना तकब्बुर की निशानी

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नबी की हैसियत से ज़ाहिर होने का ज़माना, जाहिलिय्यत का ज़माना था, उसमें टख़्ने ढकने और पाजामे और लुंगी वग़ैरह को नीचे तक पहनने का बड़ा फ़ैशन और रिवाज था। बल्कि अगर पाजामा और लुंगी वग़ैरह ज़मीन पर भी घिसटता जाए तो इसको और अच्छा और क़ाबिले फ़ख़्र

समझा जाता था, मदारिस के दर्से निज़ामी में एक किताब "हिमासा" पढ़ाई जाती है जो जाहिलिय्यत के शायरों के शेरों पर मुश्तमिल है, उस किताब में एक शायर अपने हालात पर फ़ख़्र करते हुए कहता है कि:

"اذا ما اصطبحت اربعا خط میزری"

यानी जब मैं सुबह के वक़्त शराब के चार जाम चढ़ा कर निकलता हूं तो मेरा पाजामा या लुंगी वग़ैरह ज़मीन पर लकीरें बनाता हुआ जाता है। अब वह अपने इस तर्ज़े अमल को अपना क़ाबिले फ़ख़्र कारनामा बता रहा है। लेकिन जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाए तो आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जिस तरह जाहिलिय्यत के और तरीक़ों को ख़त्म फ़रमाया, इसी तरह इस तरीक़े को भी ख़त्म फ़रमाया, और आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इस अमल के ज़रिये दिल में तकब्बुर और घमण्ड पैदा होता है। इसलिये पाजामे और लुंगी वग़ैरह को टख़्नों से ऊपर होना चाहिए।

इस से इस प्रोपैगन्डे का भी जवाब हो गया जो आज कल बहुत फैलाया जा रहा है, और बहुत से लोग यह कहने लगे हैं कि हक़ीक़त में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने वे तरीक़े इख़्तियार कर लिए जो आपके ज़माने में राइज थे, और जैसा लिबास क़ुरैश में राइज था, जैसी कांट छांट और शक्ल व सूरत राइज थी उसी को इख़्तियार कर लिया। अब अगर आज हम अपने दौर के राइज शुदा तरीक़े इख़्तियार कर लें तो इसमें क्या हर्ज है?

ख़ूब समझ लीजिए कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कभी भी अपने ज़माने में राइज तरीक़ों को इख़्तियार नहीं फ़रमाया, बल्कि उनमें तब्दीली पैदा की, और उनको ना जायज़ क़रार दिया। आज लोग न सिर्फ़ यह कि ग़लतकारी में मुब्तला हैं, बल्कि कभी कभी बहस करने को तैयार हो जाते हैं कि अगर पाजामा और

लुंगी वग़ैरह टख़्नों से ज़रा नीचे हो गया तो इसमें क्या हर्ज है? अरे हर्ज यह है कि यह हिस्सा जहन्नम में जायेगा। और यह अमल अल्लाह तआला के ग़ज़ब को वाजिब करने वाला है।

अंग्रेज़ के कहने पर घुटने भी खोल दिए

हमारे एक बुज़ुर्ग थे हज़रत मौलाना एहतिशामुल्हक़ साहिब थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि, वह एक तक़रीर में फ़रमाने लगे कि अब हमारा यह हाल हो गया है कि जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि टख़्ने खोल दो, और टख़्ने ढकना जायज़ नहीं तो उस वक़्त हम लोग टख़्ने खोलने को तैयार नहीं थे, और जब अंग्रेज़ ने कहा कि घुटना खोल दो और नेकर पहन लो, तो अब घुटना खोलने को तैयार हो गए। तो अंग्रेज़ के हुक्म पर घुटना भी खोल दिया और नेकर भी पहन ली, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हुक्म पर टख़्ने खोलने पर तैयार नहीं। यह कितनी बे–ग़ैरती की बात है, अरे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मुहब्बत के भी कुछ तक़ाज़े हैं, इसलिये जब आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस अमल को ना पसन्द फ़रमाया तो एक मुसलमान को किस तरह यह गवारा हो सकता है कि वह उसके ख़िलाफ़ करे।

हज़रत उसमान ग़नी रज़ियल्लाहु अन्हु का एक वाक़िआ

हज़रत उसमान ग़नी रज़ियल्लाहु अन्हु का वाक़िआ मैंने आपको पहले भी सुनाया था कि सुलह हुदैबिया के मौक़े पर जब आप मक्के के कुफ़्फ़ार से बात चीत के लिए तश्रीफ़ लेजा रहे थे तो उनके चचाज़ाद भाई ने जो उनके साथ थे कहा कि यह आपका पाजामा टख़्नों से ऊंचा है, और मक्के कि जिन रईसों और सरदारों से आप बात चीत के लिए जा रहे हैं वे लोग ऐसे आदमी को ज़लील और कम दर्जा समझते हैं जिसका पाजामा टख़्नों से ऊंचा हो, इसलिये आप थोड़ी देर के लिए अपना टख़्ना ढक लें, और पाजामे को नीचे

कर लें, ताकि वे लोग आपको कम दर्जा न समझें। हज़रत उसमान ग़नी रज़ियल्लाहु अन्हु ने जवाब में फ़रमाया:

"لا هكذا ازارة صاحبنا رسول الله صلى الله عليه وسلم"

यानी नहीं यह काम मैं नहीं कर सकता, इसलिये कि मेरे आक़ा सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इज़ार (पाजामा या लुंगी वग़ैरह) ऐसा ही होता है। अब चाहे वे लोग हक़ीर समझें, या ज़लील समझें, अच्छा समझें, या बुरा समझें उस से मुझे कोई सरोकार नहीं, बस मेरे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का तरीक़ा यह है और मैं तो इसी को इख़्तियार करूंगा। फिर उन्हों ने ही दुनिया से अपनी इज़्ज़त कराई, आज हम इस मुसीबत में मुब्तला हैं कि डर रहे हैं, झेंप रहे हैं, शर्मा रहे हैं। कि अगर पाजामा और लुंगी वग़ैरह टख़्नों से ऊंचा कर लिया तो क़ायदे के ख़िलाफ़ हो जायेगा, एटीकेट के ख़िलाफ़ हो जायेगा, फ़ैशन के ख़िलाफ़ हो जायेगा। ख़ुदा के लिए ये ख़्यालात दिल से निकाल दो, और हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इत्तिबा और पैरवी का जज़्बा दिल में पैदा करो।

अगर दिल में तकब्बुर न हो तो क्या इसकी इजाज़त होगी?

बाज़ लोग यह प्रोपैगन्डा करते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तकब्बुर की वजह से टख़्ने से नीचे पाजामा सर लुंगी पहनने को मना फ़रमाया था। इसलिये अगर तकब्बुर न हो तो फिर टख़्नों से नीचे पहनने में कोई हर्ज नहीं, और दलील में यह हदीस पेश करते हैं कि एक बार हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से फ़रमाया कि या रसूलल्लाह! आपने तो फ़रमाया कि इज़ार (पाजामे या लुंगी) को टख़्ने से नीचे न करो, लेकिन मेरा इज़ार (पाजामा या लुंगी) बार बार टख़्ने से नीचे ढलक जाता है, मेरे लिए ऊपर रखना मुश्किल होता है। मैं क्या करूं? तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने

फ़रमाया कि तुम्हारा इज़ार (पाजामा या लुंगी) जो नीचे ढलक जाता है, यह तकब्बुर की वजह से नहीं है बल्कि तुम्हारे उज़्र और मजबूरी की वजह से ढलक जाता है, इसलिये तुम उनमें दाख़िल नहीं।

(अबू दाऊद शरीफ़)

अब लोग दलील में इस वकिए को पेश करके यह कहते हैं कि हम भी तकब्बुर की वजह से नहीं करते इसलिये हमारे लिए जायज़ होना चाहिए। बात असल में यह है कि यह फ़ैसला कौन करे कि तुम तकब्बुर की वजह से करते हो, या तकब्बुर की वजह से नहीं करते? अरे भाई यह तो देखो कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से ज़्यादा तकब्बुर से पाक कौन हो सकता है? लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कभी ज़िन्दगी भर टख़्नों से नीचे इज़ार नहीं पहना, इस से मालूम हुआ कि हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को जो इजाज़त दी गई थी वह एक मजबूरी की वजह से दी गई थी। वह मजबूरी यह थी कि उनके जिस्म की बनावट ऐसी थी कि बार बार उनका इज़ार ख़ुद बख़ुद नीचे ढलक जाता था, लेकिन तुम्हारे साथ क्या मजबूरी है? और आज तक आपने कोई ऐसा घमण्डी देखा है जो यह कहे कि मैं घमण्ड करता हूं, मैं घमण्डी हूं। इसलिये कि किसी तकब्बुर करने वाले को कभी ख़ुद से अपने घमण्डी होने का ख़्याल नहीं आता। इसलिये शरीअ़त ने निशानियों की बुनियाद पर अहकाम जारी किए हैं। यह नहीं कहा कि तकब्बुर हो तो इज़ार (पाजामे या लुंगी) को ऊंचा रखो वर्ना नीचे कर लिया करो। बल्कि शरीअ़त ने बता दिया कि जब इज़ार (पाजामे या लुंगी) को नीचे लटका रहे हो, इसके बावजूद कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस से मना फ़रमा दिया है, इसका साफ़ मतलब यह है कि तुम्हारे अन्दर तकब्बुर है, इसलिये हर हालत में इज़ार (पाजामा या लुंगी) नीचे लटकाना ना जायज़ है।

मुहक़्क़िक़ उलमा का सही क़ौल

अगरचे बाज़ फुक़हा ने यह लिख दिया है कि अगर तकब्बुर की वजह से नीचे करे तो मक्रूहे तहरीमी है और तकब्बुर के बग़ैर करे तो मक्रूहे तन्ज़ीही है। लेकिन उलमा–ए–मुहक़्क़िक़ीन का सही क़ौल यह है और जिस पर उनका अमल भी रहा है कि हर हालत में नीचे करना मक्रूहे तहरीमी है, इसलिये कि तकब्बुर का पता लगाना आसान नहीं है, कि तकब्बुर कहां है, और कहां नहीं, इसलिये इस से बचने का रास्ता यह है कि आदमी टख़्ने से ऊंचा इज़ार पहने, और तकब्बुर की जड़ ही ख़त्म कर दी जाए। अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल और रहमत से इन उसूलों पर अमल की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

बहर हाल, लिबास के ये चार उसूल हैं, पहला उसूल यह है कि वह सातिर यानी छुपाने वाला होना चाहिए, दूसरा उसूल यह है कि शरीअत की हदों में रहते हुए उसके ज़रिये ज़ीनत भी हासिल करनी चाहिए, तीसरा उसूल यह है कि उसके ज़रिये नुमाइश और दिखावा मक़्सूद न हो, चौथा उसूल यह है कि उसके पहनने से दिल में तकब्बुर पैदा न हो। अब आगे लिबास से मुताल्लिक़ जो हदीसें हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से मन्क़ूल हैं, वे पढ़ लेते हैं।

सफ़ेद रंग के कपड़े पसन्दीदा हैं

"عن ابن عباس رضی اللّٰہ تعالیٰ عنہما عن النبی صلی اللّٰہ علیہ وسلم، قال: البسوا من ثیابکم البیاض، فانہا من خیر ثیابکم، وکفنوا فیہا موتاکم"

(ابوداؤد شریف)

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि नबी–ए- करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सफ़ेद रंग के कपड़े पहनो, इसलिये कि मर्दों के लिए सब से अच्छे कपड़े सफ़ेद रंग के हैं, और अपने मुर्दों को भी सफ़ेद कफ़न दो।

इस हदीस से मालूम हुआ कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मर्दों के लिए सफ़ेद रंग के कपड़ों को पसन्द फ़रमाया, अगरचे दूसरे रंग के कपड़े पहनना ना जायज़ नहीं, हराम नहीं, चुनांचे खुद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से साबित है कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कभी कभी दूसरे रंग के कपड़े पहने हैं, लेकिन ज़्यादा तर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सफ़ेद कपड़े पहनते थे। इसलिये अगर मर्द इस नियत से सफ़ेद कपड़े पहने कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का आ़म मामूल सफ़ेद कपड़े पहनने का था और आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को सफ़ेद कपड़े पसन्द थे तो इस नियत की वजह से इन्शा अल्लाह इत्तिबा–ए–सुन्नत का सवाब हासिल हो जायेगा। हां, कभी दूसरे रंग का कपड़ा पहन लिया तो वह भी कुछ शर्तों के साथ मर्दों के लिए जायज़ है, कोई ना जायज़ नहीं, चुनांचे अगली हदीस है:

हुज़ूर सल्ल० का लाल धारीदार कपड़े पहनना

"عن براء بن عازب رضي الله عنه قال: كان رسول الله صلى الله عليه و سلم مربوعا، وقد رايته فى حلة حمراء ما رايت شيئا قط احسن منه"

(بخاری شریف)

हज़रत बरा बिन आ़ज़िब रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि मैंने एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को लाल जोड़े में देखा और मैंने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से ज़्यादा ख़ूबसूरत वजूद इस कायनात में नहीं देखा।

बल्कि एक सहाबी शायद हज़रत जाबिर बिन सुमरा रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि एक बार चौदहवीं का चांद चमक रहा था, चांदनी रात थी, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम लाल जोड़ा पहने तश्रीफ़ फ़रमा थे, तो उस वक़्त हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम इतने हसीन लग रहे थे कि मैं बार बार कभी

चौदहवीं के चांद को देखता और कभी सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखता, आख़िर मैंने यह फ़ैसला किया कि यक़ीनन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हुस्न व जमाल चौदहवीं के चांद से कहीं ज़्यादा था। तो इन हदीसों से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का लाल जोड़ा पहनना साबित है। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

ख़ालिस लाल जोड़ा मर्द के लिये जायज़ नहीं

लेकिन यह बात समझ लीजिए कि लाल जोड़े से मुराद यह नहीं है कि पूरा लाल था, बल्कि उलमा-ए-किराम ने दूसरी रिवायतों की रोशनी में लिखा है कि उस ज़माने में चादरें आया करती थीं, उन चादरों पर लाल रंग की धारियां हुआ करती थीं। पूरी लाल नहीं होती थीं और वह बहुत अच्छा कपड़ा समझा जाता था, तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसी लाल धारियों वाले कपड़े का जोड़ा पहना हुआ था। और यह जोड़ा आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसलिये पहना कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की उम्मत को पता चल जाए कि इस किस्म के कपड़े पहनना जायज़ है। कोई गुनाह नहीं। लेकिन बिल्कुल ख़ालिस लाल कपड़ा पहनना मर्द के लिए जायज़ नहीं। इसी तरह ऐसे कपड़े जो औरतों के साथ मख़्सूस समझे जाते हैं, ऐसे कपड़े पहनना भी मर्दों के लिए जायज़ नहीं, इसलिये कि इसमें औरतों के साथ तशब्बोह हो जायेगा और यह तशब्बोह भी ना जायज़ है।

आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हरे कपड़े पहनना

"عن رفاعة التيمى رضى الله عنه، قال: رايت رسول الله صلى الله عليه وسلم وعليه ثوبان اخضران" (ابوداؤدشريف)

हज़रत रिफ़ाआ तैमी रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखा कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दो हरे रंग के कपड़े थे।

इस से मालूम हुआ कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हरे रंग के कपड़े भी पहने हैं। तो कभी कभी आपने दूसरे रंगों के कपड़े पहन कर यह बता दिया कि ऐसा करना भी जायज़ है, कोई गुनाह नहीं, लेकिन आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का पसन्दीदा कपड़ा सफ़ेद ही था।

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पगड़ी के रंग

"وعن جابر رضی اللّٰہ عنہ، ان رسول اللّٰہ صلی اللّٰہ علیہ وسلم دخل عام الفتح مکۃ وعلیہ عمامۃ سوداء" (ابوداؤد شریف)

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़त्हे मक्का के दिन जब मक्का मुकर्रमा में दाख़िल हुए तो उस वक़्त आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सर पर काले रंग की पगड़ी थी। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सफ़ेद पगड़ी पहनना भी साबित है, और काली पगड़ी पहनना भी साबित है, और बाज़ रिवायतों में हरी पगड़ी भी पहनना साबित है, तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुख़्तलिफ़ रंगों की पगड़ियां पहनी हैं।

आस्तीन कहां तक होनी चाहियें

"وعن اسماء بنت یزید رضی اللّٰہ عنہا قالت: کان کم قمیص رسول اللّٰہ صلی اللّٰہ علیہ وسلم الی الرسغ" (ابوداؤد شریف)

यानी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की क़मीस की आस्तीन गट्टों तक होती थी, इसलिये मर्दों के लिए तो सुन्नत यह है कि उनकी आस्तीन गट्टों तक हो, अगर इस से कम होगी तो सुन्नत अदा नहीं होगी, अगरचे जायज़ है, लेकिन औरतों के लिए गट्टों से ऊपर का हिस्सा खुला रखना किसी तरह भी जायज़ नहीं, हराम है। क्योंकि उनके लिए पंजे से नीचे पूरी कलाई सत्र में दाख़िल है। उसका खोलना किसी भी हाल में जायज़ नहीं। आज कल यह फ़ैशन भी औरतों में चल पड़ा है कि क़मीस की आस्तीन आधी होती है और

बहुत सी बार पूरे बाज़ू खुले होते हैं। हालांकि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी साली हज़रत अस्मा रज़ियल्लाहु अन्हा को बुलाकर फ़रमाया कि जब लड़की बालिग़ हो जाए तो उसके जिस्म का कोई हिस्सा खुला न रहना चाहिए, सिवाए पहुंचों तक हाथों के और चेहरे के। इसलिये अगर आस्तीन छोटी हैं तो इसका मतलब यह है कि सत्र का हिस्सा खुला हुआ है और इस तरह औरतें सत्र खोलने के गुनाह में मुब्तला हो जाती हैं। इसलिये उनको इसका भी एहतिमाम करना चाहिए और मर्दों को भी चाहिए कि वे औरतों को इन बातों पर मुतनब्बह करते रहें, यह जो हमने कहना सुनना छोड़ दिया है इसके नतीजे में हम कहां से कहां पहुंच गये हैं। अल्लाह तआला हम सब को इन बातों पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

واخردعوانا ان الحمد لله رب العالمين